

Shodh Shree

ISSN 2277-5587

Shodh Shree

(International Refereed Journal of Multidisciplinary Research)

शोध श्री

Volume - II

April - June 2015

RNI No. RAJHIN / 2011 / 40531

Volume - II

April - June 2015



CHIEF EDITOR
Virendra Sharma

EDITOR
Dr. Ravindra Tailor

shodhshree@gmail.com

Shodh Shree

(International Refereed Journal of Multidisciplinary Research)

Virendra Sharma
Chief Editor
Government Girls P.G. College,
Ajmer.

Dr. Ravindra Tailor
Editor
Shodh Shree,
Jaipur

Editorial Board

Prof.H.S.Sharma (Retd.)
University Of Rajasthan, Jaipur

Prof.T.K.Mathur (Retd.)
M.D.S. University, Ajmer

Prof. Ravindra Kumar Sharma
Kurukshetra University, Kurukshetra (Haryana)

Sarah Eloy
Museum The House of Alijn, Belgium

Prof. B.P.Saraswat
Dean of Commerce
M.D.S. University, Ajmer

Prof. Pushpa Sharma
Kurukshetra University, Kurukshetra (Haryana)

Dr. Rajesh Choudhary
Assistant Director (Research)
Indian Council of Historical Research, NewDelhi

Dr. Pankaj Gupta
Government P.G. College, Kotputli

Advisory Board

Prof. S.P.Vyas
Jainarayan Vyas University, Jodhpur

Prof. S.N.Tailor (Retd.)
S.D.Government P.G.College, Beawar

Dr. Mahesh Narayan
Archivist (Retd.)
National Archives of India, NewDelhi



Shodh Shree

(International Refereed Journal of Multidisciplinary Research)

Contents

Year-5

Volume - II

April- June 2015

1. आधुनिक हिन्दी कविता पर समाजवाद का प्रभाव
डॉ. पद्मा शर्मा, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) 1-7
2. पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षक, शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि का उनकी शिक्षक प्रभावशीलता पर प्रभाव : एक अध्ययन
नम्रता सिंह, कानपुर (उत्तर प्रदेश) 8-13
3. बच्चों के प्रति बढ़ते अपराध, प्रशासन के समक्ष गम्भीर चुनौती: एक अध्ययन
डॉ. अनिल कुमार पारीक, कोटा 14-16
4. सांस्थानिक धर्म व स्मार्त व्यवस्था और भक्ति आन्दोलन के प्रतिवादी स्वर
अमित कुमार रैंकवार, जयपुर 17-19
5. खुम्माणरासो के आधार पर बापा रावल का मूल्यांकन
डॉ. सुशीला शक्तावत, जोधपुर 20-23
6. रघुवंश महाकाव्य में शिक्षा का सार्थक स्वरूप: वर्तमान की उपादेयता
डॉ. मधुलता जैन, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) 24-26
7. स्वच्छता मिशन: पर्यावरण स्वच्छता, स्वास्थ्य एवं रोजगार का आधार
डॉ. पंकज छाबड़ा, सहारनपुर (उत्तर प्रदेश) 27-29
8. किशोरावस्था के किशोर एवं किशोरियों की यौन शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन एवं शिक्षा की भूमिका
डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, जयपुर 30-32
9. मूल्य बनाम कुपोषित बालिका
डॉ. उमा देवी कटियार, ज्योत्सना कटियार, रमईपुर, कानपुर (उत्तर प्रदेश) 33-35
10. तीर्थराज पुष्कर की ऐतिहासिकता: एक विहंगावलोकन
बनवारीलाल यादव, जयपुर 36-39
11. आधुनिक अविवाहित हिन्दू नारी की विवाह के प्रति अपेक्षाएं एवं मान्यतायें
डॉ. मनीष जोशी, नागीर 40-42
12. सामाजिक सुरक्षा का संगठित एवं असंगठित क्षेत्रों में प्रभाव
नीलम साहू, जबलपुर (मध्यप्रदेश) 43-46
13. खेतड़ी तहसील में बाल श्रम एवं स्वास्थ्य
अनिल कुमार मावर, डॉ. मुकेश कुमार शर्मा, झुन्झुनू 47-58
14. भारतीय परम्पराओं में लोक कलाएँ
प्रिया सिंह, जयपुर 59-64
15. ग्रामीण विकास एवं महिला सशक्तिकरण
रेनू बाला मीना, कोटा 65-67

16.	‘लेखनी’ की पाण्डुलिपि लेखन में महत्वपूर्ण भूमिका राजकुमार जाँगिड़, जयपुर	68-69
17.	भूमि अनुदान व्यवस्था में सक्रिय वर्गिक वर्ग तथा उभरते व्यावसायिक नगरीय केन्द्रों का सर्वेक्षण: आभिलेखिक साक्ष्यों (भूमिदान पत्र) के विशेष संदर्भ में डॉ. रजनी शर्मा, किरानगढ़	70-72
18.	Study of Blast Disease Infestation In Rice Plant Regarding Different Growth Parameters Rohini Maheshwari, Bundi	73-77
19.	E-commerce - A Revolution in Indian Economy Dr. Minakshi Kumawat, Pune (Maharashtra)	78-83
20.	A Study on Attributes and Buying Behaviors of College Going Girls towards Jeans Dr. Sabra Qureshi, Jodhpur	84-90
21.	A Comparative Study of Teacher's Professional Attitude Working In Government Secondary Schools Anu, Dr. Neeta Sharma, Modinagar, Ghaziabad (Uttar Pradesh)	91-97
22.	Democratic Socialization (A Specific Study in The Context of Pakistan) Sanju Sharma , Jaipur	98-101
23.	Effectiveness of Developed and Standardized Multimedia Package on Female Foeticide in Terms of Knowledge Gain and Attitudinal Change Alka Parihar, Jodhpur ; Archana Raj Singh, Bikaner	102-106
24.	The Voice of Dalits: A Thematic Study of "Joothan: An Untouchable's Life" Gulab Singh Jatav, Shivpuri (Madhya Pradesh)	107-111
25.	Development and Challenges in Marketing: Handloom Industry Suman Kothari, Jaipur	112-115
26.	Risk Profile Preeti Malpani, Jodhpur	116-119
27.	Women of South India: Through the Eyes of Sangam Literature Sindhav Hetalben , Alwar	120-125
28.	Reservation for Women : Post - 73rd Amendment Dr. Mukesh Sharma, Kishangarh	126-129

आधुनिक हिन्दी कविता पर समाजवाद का प्रभाव

डॉ पद्मा शर्मा

शा. श्रीमंत माधवराव सिंधिया स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शिवपुरी (मध्य प्रदेश)



shodhshree@gmail.com

"The woods are lovely, dark and deep,
But I have promises to keep,
And miles to go before I sleep,
And miles to go before I sleep"

-Robert Frost

जब तक मानव मानव का सुख भाग नहीं सम होगा
शमित न होगा कोलाहल संघर्ष नहीं कम होगा।

रामधारी सिंह दिनकर

समाजवाद एक आर्थिक-सामाजिक दर्शन है, समाजवादी व्यवस्था में धन-सम्पत्ति का स्वामित्व और वितरण समाज के नियंत्रण के अधीन रहते हैं। समाजवाद अंग्रेजी और फ्रांसीसी शब्द "सोशलिज्म" का हिन्दी रूपांतर है, 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इस शब्द का प्रयोग व्यक्तिवाद के विरोध में और उन विचारों के समर्थन में किया जाता था जिनका लक्ष्य समाज के आर्थिक और नैतिक आधार को बदलना था और जो जीवन में व्यक्तिगत नियंत्रण की जगह सामाजिक नियंत्रण स्थापित करना चाहते थे।

समाजवाद की परिभाषा करना कठिन है। यह सिद्धांत तथा आंदोलन दोनों ही हैं। यह विभिन्न ऐतिहासिक और स्थानीय परिस्थितियों में विभिन्न रूप धारण करता है। मूलतः यह वह आंदोलन है जो उत्पादन के मुख्य साधनों के समाजीकरण पर आधारित वर्गविहीन समाज स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील है और जो मजदूर वर्ग को इसका मुख्य आधार बनाता है क्योंकि वह इस वर्ग को शोषित वर्ग मानता है, जिसका ऐतिहासिक कार्य वर्ग व्यवस्था का अंत करना है। यद्यपि समाजवादी आंदोलन और समाजवादी शब्द का प्रयोग उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से आरंभ हुआ तथापि ईसा से 600 वर्ष पूर्व भी समाजवादी विचारों का वर्णन मिलता है।

आधुनिक काल के प्रथम चरण से विचारस्वातंत्र्य के कारण धर्मनिरपेक्ष चिंतन आरंभ हुआ और इस काल में थॉमस मोर (Thomas More, यूटोपिया, 1516) और कंपानेला (Companella, सूर्यनगर, 1623) जैसे विचारकों ने साम्य के आधार पर समाज की कल्पना की, परंतु औद्योगिक क्रांति के पूर्व आधुनिक समाजवादी विचारों के लिए भौतिक आधार - पूँजीवादी शोषण और सर्वहारा वर्ग संभव नहीं था। औद्योगिक क्रांति के साथ विज्ञानों का विकास हुआ और प्राचीन मान्यताओं तथा धार्मिक अंधविश्वासों का ह्रास होने लगा। इन परिस्थितियों में आधुनिक समाजवादी चिंतन का उदय हुआ। इस काल का प्रथम समाजवादी विचारक फ्रांस निवासी बाबूफ (Bebeuf 1764-1797) था। परंतु प्लेटो सर्वप्रथम दार्शनिक है जिसने इन विचारों को स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया। वह न केवल समान और सामूहिक प्रयोग के पक्ष में था वरन् व्यक्तिगत कौटुंबिक प्रथा का अंत कर स्त्रियों और बच्चों का भी समाजीकरण करना चाहता था। उसके साम्यवाद का आधार गुलाम प्रथा थी और वह केवल संकुचित शासक वर्ग तक सीमित था, अतः उसको अभिजाततंत्रीय समाजवाद कहा जाता है।¹

जवाहरलाल नेहरू - “ समाजवाद का अर्थ धन का वितरण नहीं है और न ही केवल जन-कल्याणकारी राज्य का निर्माण है। समाजवादी अर्थ-व्यवस्था मात्र से ही लोक-कल्याणकारी राज्य सम्भव नहीं बन सकता। आवश्यकता इस बात की है कि देश में उत्पादन बढ़ाया जाए, धन की वृद्धि हो, और फिर अर्जित धन का समुचित ढंग से वितरण किया जाए।”¹ “मैं समाजवाद तथा इस बात का हिमायती हूँ कि भारत एक समाजवादी राज्य के विधान की ओर बढ़ेगा मुझे दृढ़ विश्वास है कि सारे संसार को इस मार्ग पर अग्रसर होना होगा।”²

समाजवाद का महत्व और उसकी आवश्यकता

नेहरू के अनुसार- हमने समाजवाद का उद्देश्य केवल इसलिए स्वीकार नहीं किया कि यह हमें ठीक तथा लाभकारी जंचता है, बल्कि इसलिए भी स्वीकार किया है कि हमारी आर्थिक समस्याओं के समाधान के लिए हमारे सामने इसके अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं है। बहुधा कहा जाता है कि शांतिपूर्ण तथा गणतांत्रिक उपायों से तीव्र प्रगति नहीं की जा सकती। मैं यह नहीं मानता। सचमुच आज के भारत में “गणतांत्रिक उपायों को नहीं अपनाते के किरती भी प्रयास का परिणाम विनाशकारी होगा और इस प्रकार तुरन्त प्रगति करने की कोई संभावना नहीं रहेगी।”

“संसार की तथा भारत की समस्याओं का समाधान केवल समाजवाद द्वारा ही सम्भव दिखाई पड़ता है और अब मैं इस शब्द का प्रयोग करता हूँ, तब केवल मानवीय नाते से ही नहीं बल्कि वैज्ञानिक आर्थिक दृष्टि से भी करता हूँ। किन्तु समाजवाद आर्थिक सिद्धान्त से भी कुछ अधिक महत्वपूर्ण है, वह एक जीवन-दर्शन है और इसीलिए यह मुझे जंचता भी है। मेरी दृष्टि में निर्धनता चारों ओर फैली बेरोजगारी, भारतीय जनता का अधःपतन तथा दासता को समाप्त करने का मार्ग समाजवाद को छोड़कर अन्य किसी प्रकार से सम्भव नहीं दीखता।”

जयप्रकाश नारायण ने अपनी पुस्तक (Why Socialism) के आरम्भ में बताया है- “समाजवाद एक व्यक्तिगत आचरण की संहिता न होकर सामाजिक संगठन की एक प्रणाली है। सामाजिक संगठन का उद्देश्य यह है कि “पद, संस्कृति और अवसर की कष्टदायक विषमता को दूर किया जाये, जीवन की श्रेष्ठ वस्तुओं के पीड़ाजनक असमान वितरण को समाप्त किया जाय और इस व्यवस्था को मिटाया जाय कि अधिकांश व्यक्ति तो गरीबी, भूख, गन्दगी, रोग एवं अज्ञान से ग्रस्त रहें तथा कुछ थोड़े से व्यक्ति आराम संस्कृति, पद व सत्ता का आनन्द उठावें।” समाजवाद का उद्देश्य समाज का समन्वित विकास है।³

मई 1934 में कांग्रेस समाजवादी दल की स्थापना भारत में समाजवाद के संगठनात्मक विकास में एक महत्वपूर्ण घटना थी।⁴ बिहार समाजवादी दल 1931 में स्थापित किया गया और 1934 में बम्बई समाजवादी गुट कायम हुआ। समाजवादियों का पहला अखिल भारतीय सम्मेलन 17 मई, 1934 को पटना में नरेन्द्रदेव की अध्यक्षता में हुआ। इस दल की स्थापना में जयप्रकाश नारायण का प्रमुख हाथ

था। अच्युत पटवर्धन, युसुफ मेहरअली तथा अशोक मेहता ने इस कार्य में उनकी घनिष्ठ सहायता की थी।⁵

समाजवाद के प्रकार - ऐतिहासिक दृष्टिकोण से समाजवाद के कई रूप अस्तित्व में आए हैं, जैसे काल्पनिक समाजवाद, विकासवादी समाजवाद, फेबियनवाद, लोकतंत्रीय समाजवाद, संसदीय समाजवाद, राज्य समाजवाद, समाज का समाजवादी ढांचा, अराजकतावाद आदि। कुछ महत्वपूर्ण समाजवाद इस प्रकार हैं-

काल्पनिक समाजवाद- काल्पनिक समाजवाद पूँजीवाद की शैशावस्था की विचारधारा है। मार्क्स के पूर्व के समाजवादी विचारकों को काल्पनिक समाजवादी कहा जाता है। कल्पनावादी समाजवादी यह मानते थे कि समाज की बुराइयों की जड़ गरीबी और उसके परिणाम हैं और गरीबी का कारण यह है कि कुछ व्यक्ति, जिनके पास सम्पत्ति है, बहुत स्वार्थी होते हैं। अतः यह वर्तमान व्यवस्था जिसमें प्रतिस्पर्द्धा के आधार पर उद्योगों का संचालन होता है, समाप्त होनी चाहिए, पूँजीवाद का अन्त होना चाहिए। क्योंकि पूँजीवाद के कारण समाज में शोषण होता है। कल्पनावादियों ने असमानता और शोषण का विरोध तो किया, परन्तु समतावादी समाज की स्थापना का कोई ठोस कार्यक्रम प्रस्तुत नहीं किया।

वेपर के शब्दों में- “उन्होंने सुन्दर गुलाबों के फूलों की कल्पना तो की, परन्तु वह जमीन कभी तैयार नहीं की जिसमें वे उगाए जा सकते हैं।”

“They conjured up visions of beautiful roses but preparing no soil for the rose trees, left them to freed merely on beauty.”

विकासवादी समाजवाद- विकासवादी समाजवाद का मत है कि पूँजीवाद पर आवश्यक अंकुश लगाए जाने चाहिए। विकासवादी समाजवाद पूँजीवाद को समाप्त अथवा नष्ट नहीं करना चाहता, अपितु नियंत्रित करके पूँजीवाद को कमजोर करना चाहता है। विकासवादी समाजवाद को व्यक्ति की स्वतंत्र प्रवृत्ति, आत्म-प्रेरणा तथा साहसिक कार्य की भावना में दृढ़ विश्वास है। इस दृष्टि से विकासवादी समाजवाद व्यक्ति में निहित योग्यताओं पर रोक लगाने का समर्थक नहीं है, बल्कि इन योग्यताओं की अभिव्यक्ति का समुचित अवसर प्राप्त करता है ताकि व्यक्ति का सर्वांगीण विकास संभव हो सके।

विकासवादी समाजवाद राज्य तथा संसद के कानूनों के माध्यम से पूँजीवाद का नियंत्रण करके जनसाधारण के लिए समाजवादी समाज का संगठन करना चाहता है। विकासवादी समाजवाद पूँजीवाद के सीमित विकास, निजी संपत्ति के सीमित अधिकार, वर्ग सहयोग, राज्य की विशेष भूमिका, लोकतंत्रीय प्रणाली की मान्यताओं तथा शांतिमय एवं क्रमिक साधनों को महत्वपूर्ण समझता है।⁶

वैज्ञानिक समाजवाद- औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् यूरोपीय देशों में पूँजीवाद व्यवस्था के पाँव उग गये थे। यूरोप के विभिन्न देशों में बड़े-बड़े नगरों में विशाल उद्योगों की स्थापना हो गई थी। मजदूरों का शोषण होने लगा था। इनके विरुद्ध संत सार्दमन, चार्ल्स फोरियर और राबर्ट

ओवन जैसे समाजवादी विचारकों ने खूब आवाज उठाई। परन्तु यह सब कल्पनावादी समाजवादी थे इन्होंने समाजवादी समाज की स्थापना की कल्पना तो की, पर उसके क्रियान्वयन के लिए ठोस कार्यक्रम प्रस्तुत नहीं किया। मार्क्स ने इन विचारकों को 'स्वप्नलोकीय समाजवादी' कहा और समाजवाद को एक विशुद्ध विशिष्ट और वैज्ञानिक रूप प्रदान किया। मार्क्स से पूर्व यूरोप में समाजवाद के सूत्र बिखरे पड़े थे। मार्क्स ने उसे संकलित कर एक नवीन दिशा प्रदान की। प्रो. लास्की के शब्दों में - "मार्क्स ने समाजवाद को एक अस्त-व्यस्त स्थिति में पाया और उसने उसे एक आन्दोलन बना दिया। उसके द्वारा उसे एक दर्शन मिला और एक दिशा मिली।"¹⁰

कार्ल मार्क्स का साम्यवाद वैज्ञानिक समाजवाद के नाम से जाना जाता है। समाजवाद पर उन्होंने लेख लिखे और ब्रिटिश म्यूजियम के विराट पुस्तकालय में बैठकर समाजवाद के संबंध में अपनी श्रेष्ठ पुस्तकें यहाँ लिखीं। मार्क्सवाद, कार्ल मार्क्स के विचारों पर आधारित एक विशिष्ट समाजवादी विचारधारा है, जिसका उद्देश्य एक राज्यविहीन, वर्गविहीन समाज की स्थापना करना है। वर्ग संघर्ष इसका कार्यक्रम है। लेनिन ने मार्क्स की इसी विचारधारा की पुनर्व्याख्या की।¹¹

आधुनिक कविता और समाजवाद

साहित्य समाज सापेक्ष होता है। कविता में तो और भी अधिक युगानुकूलता और समसामयिकता का भाव समाया होता है। समाज में होने वाले अभूतपूर्व ही नहीं सामान्य परिवर्तनों को कविता अपने स्वरूप में समाहित कर लेती है। आधुनिक कविता लगभग उन्नीसवीं सदी के आसपास प्रारम्भ हुई। कवियों ने 1930 के आसपास ही सामाजिक यथार्थ, रुस में समाजवादी क्रांति का अभिनन्दन, साम्यवाद का स्वागत, अध्यात्मवाद के विरुद्ध मानवतावाद की महत्ता आदि विषयों पर काव्यरचना आरंभ कर दी थी। डॉ नामवर सिंह और श्री ललित मोहन अवस्थी उसका आरंभ 1930 से मानते हैं। श्री ललित मोहन अवस्थी के अनुसार हिन्दी में प्रगतिशील आन्दोलन के प्रारम्भकर्ता साम्यवादी नहीं, गैर साम्यवादी - ऐसे गैर - साम्यवादी जिनमें से कई आगे चलकर, साम्यवाद विरोधी तक हो गये थे।¹² अवस्थी जी के साक्ष्य के अनुसार विशूल जी ने 1921 में ही लिखा था-

कुछ को मोहन भोग बैठ कर हों खाने को
कुछ सोये अधपेट तरस दाने-दाने को
कुछ तो लें अबतार स्वर्ग का सुख पाने को
कुछ आवें बस नरक भोग कर मर जाने को
श्रम किसका है, मगर कौन है मौज उड़ाते
हैं खाने को कौन, कौन उपजा कर लाते ?

छायावादी काव्य को यथार्थ की कर्कश भूमि पर खड़ा करने का प्रयत्न आरम्भ हुआ और साम्यवादी विचारधारा के आधार पर सामन्तशाही एवं पूँजीवाद का विरोध करते हुए किसान, मजदूर एवं सर्वहारा वर्ग के प्रति सहानुभूमि एवं संवेदना प्रकट करना कवि का प्रमुख कर्तव्य बन गया।

समाजवाद की विचारधारा प्रगतिशील के समानान्तर चली अस्तु प्रगतिशील कवियों के काव्य में समाजवाद का प्रभाव परिलक्षित होता है। पर साथ ही कुछ ऐसे भी कवि भी हैं जो प्रगतिशील कवियों से इतर हैं पर उनके काव्य पर भी समाजवाद का प्रभाव देखने को मिलता है।

मैथिलीशरण गुप्तजी भी इस समाजवादी प्रतिक्रिया से प्रभावित हुए और उन्होंने 'किसान' में किसानों की दृवनीय दशा के चित्र अंकित करके 'पृथ्वीपूत्र' में आकर कार्लमार्क्स के विचारों को भी काव्य-रूप दिया-

धनरुपी फल का परिश्रम ही मूल है
किन्तु श्रमिकों को फल मिलता है कितना ?
पूँजीपतियों का नहीं जूठन भी जितना¹³

गुप्तजी समाजवाद के पोषक दिखाई पड़ते हैं। जो परिश्रम करेगा उसी को फल मिलना चाहिए। किसी को भी दूसरे के श्रम का शोषण करने का अधिकार नहीं है-

जिसका श्रम होगा आय उसी की होगी
होना ही होगा हमें तुम्हें उद्योगी¹⁴

रामधारीसिंह दिनकर समतामूलक समाज की स्थापना करना चाहते हैं। 'विपथगा' संकलन की कविता दिनकर ही की श्रेष्ठ कविताओं में से एक है। श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के शब्दों "मे विश्व साहित्य में क्रान्ति पर जितनी कवितायें लिखी गयीं हैं, दिनकर की विपथगा उनमें किसी के भी समकक्ष आदर का स्थान पाने की योग्यता रखती हैं।" धर्म, जाति, भाषा, ऊँच-नीच का वर्ग भेद समाप्त होने पर ही ऐसे समाज का निर्माण हो सकता है। वे उस व्यवस्था को नष्ट करना चाहते हैं जिसमें अमीरों के कुत्ते तो सुविधायें भोग रहे हैं और गरीब का बालक भूख से रो रहा है-

श्वानों को मिलता दूध-वस्त्र भूखे बालक अकुलाते हैं
मां की हड्डी से चिपक टिठुर जाड़े की रात बिताते हैं
युवती के बसन ब्रेच जब ब्याज चुकाए जाते हैं
मालिक तब इत्र फुलेलों पर पानी सा द्रव्य बहाते हैं
पापी महलों का अहंकार देता मुझको तब आमंत्रण¹⁵

कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला का मन सामाजिक विषमता तथा मानव की हृदय-विदारक पीड़ा, विषयता एवं परतन्त्रता से इतना अधिक क्षुब्ध हो उठा कि उसके प्रत्येक स्वर में विद्रोह की आग भरी हुई प्रतीत होती है। कवि व्यग्र और बेचैन होकर वह पूँजीपति वर्ग का प्रतीक 'गुलाब' को खूब फटकारता है, क्योंकि यह पुष्प उच्चवर्ग की सभी मनोवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करता है। जैसे पूँजीपति सदैव सर्वहारा वर्ग का खून चूसकर धन कुबेर बनता है, वैसे ही गुलाब भी पृथ्वी पर प्राप्त खाद का खून चूसकर शान-शौकत के साथ फूलता है।

अबे सुन बे गुलाब गर पायीं खुशबू रंगो आब
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा केपीटलिस्ट¹⁶

कवि निराला ने जीवन के कटु सत्य को साकार रूप प्रदान किया है और उसके हृदय में विद्यमान भावों की मधुर सरिता के प्रवाह की ओर भी

संकेत किया है। कवि ने 'अणिमा' में सामाजिक जीवन की विषमता, विवशता, विषाद एवं पनवशता पर करारे व्यंग्य किए हैं। कवि समाज की उस भयंकर विषमता को देखकर कराह उठा जिसके फलस्वरूप कुछ व्यक्ति तो आलीशान भवनों में सुख और चैन की जिन्दगी व्यतीत कर रहे हैं और कुछ व्यक्ति दिन-रात जी तोड़ मेहनत करके भी अपना पेट नहीं भर पाते।

वह तोड़ती पत्थर
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर
देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्न तार
देखकर कोई नहीं,
देखा मुझे उस दृष्टि से
जो मार खा रोया नहीं।¹⁷

सुमित्रानन्दन पन्त की कविताओं में समन्वय भावना को अभिव्यक्ति मिली है। ऐसी कविताओं में 'समाजवाद गांधीवाद' में दोनों यादों के महत्व को स्वीकार किया गया है। कवि प्राकृतिक सौन्दर्य के कुहक जाल से बाहर निकलता है वह यथार्थ के धरातल पर आगे बढ़ता है, उसे विषण्ण मानव का जीवन दिखाई देने लगता है। 'युगवाणी' में कवि का का स्वर और भी तीव्र होता गया और जन-शोषण के प्रति तीव्र क्रोध प्रकट किया और ऐसे नूतन युग के निर्माण की आकांक्षा व्यक्त की जिसमें शोषणविहीन मानव रहता हो, जनता की नैतिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती हो और वर्ग-भेद का विनाश होकर सभी मानवों के लिए निवास, भोजन और मानसिक विकास के समान अवसर प्राप्त हों। कवि ने लिखा भी है कि, " युगवाणी का रूप- पूजन समाज के भावी रूप का पूजन है।"¹⁸

पृ. 10 आधुनिक कवि-पर्यालोचन, सुमित्रानन्दन पन्त-
साम्यवाद ने दिया विश्व को नव भौतिक दर्शन का ज्ञान
अर्थशास्त्र जी, राजनीतिगत विशद ऐतिहासिक विज्ञान
साम्यवाद ने दिया जगत को सामूहिक जनतंत्र महान
भव जीवन के दैन्य दुख से किया मनुजता का परित्राण¹⁹

रामेश्वर करुण की कविताओं में संसार की विषमता के चित्र भरे पड़े हैं, यह विषमता कवि के हृदय को कचोटती है। अपने समय के सामाजिक यथार्थ का उन्होंने अपने काव्य में चित्रण किया है। करुण जी के कवि मन ने केवल दुखियों की ही पीड़ा नहीं देखी है, विशमता ने सुखियों को भी पीड़ित कर रखा है -

क्यों एक न कुछ करके नित बैठे बैठे खाता ?
क्यों एक सदा श्रम करके भर पेट न भोजन पाता ?
उस ओर किसी के कुत्ते क्यों दूध-जलेबी खाते
इस ओर किसी के बच्चे क्यों रोटी को रिरियाते ?
अरबों मन अन्न यहां है फिर कुछ दुनिया भूखी
मिलती न यहां क्यों सबको रोटी भी सूखी सूखी ?
कुछ नीचे पड़े सिसकते, कुछ ऊपर बैठे हंसते !
कुछ रोते बन्दी बनकर, कुछ उनके बन्धन कसते !²⁰

कवि ने सामाजिक मान्यताओं पर गहरा व्यंग्य किया है। सामाजिक विषमता इतनी अधिक व्याप्त है कि कुछ लोग अपच के कारण परेशान हैं तो कुछ को दो जून की रोटी भी नसीब नहीं है। धनपतियों को अपनी तिजोरी की सुरक्षा की चिन्ता है तो जनसामान्य इसलिए परेशान है कि वह कर्ज कैसे चुकायेगा।

कुछ ला ला कर मर जाएं, कुछ खाच न पूरा कर पाएं
हा दीख रही दुनिया में, यह दो विपरीत व्यथाएं
कुछ को मंदाग्नि सताती, वह चूरन फांका करते
कुछ को जठराग्नि जलाती, वह चूल्हे झांका करते !
तोड़े न तिजोरी कोई, कुछ इस चिन्ता में मरते
कैसे यह कर्ज कटेगा, कुछ इसकी चिन्ता करते²¹

वे जानते हैं कि दुनिया के सब संघर्षों की जड़ वह विषमता ही है, इसलिए इस विषमता की समाप्ति पर ही जीवन की समस्त समस्याओं का समाधान मिल सकेगा।

जब तक 'श्रम' और 'उपज' का होता सम भाग नहीं है
बल कर क्यों व्यर्थ बुझाते बुझाती वह आग नहीं है²²

इसी तरह के भाव रामेश्वर करुण की कविता 'इतना अंधेर' कविता में दृष्टिगोचर होते हैं। कविता में संसार की विषमता और उसके ईश्वर के प्रति सरल शब्दों में आक्रोश व्यक्त किया गया है -

एक ओर निर्धन बेचारे
तप ताप कर रात बिताते
एक ओर धनिकों को देखा
कुत्तों को मखमल पहनाते
मिले कहीं यदि ईश्वर हमको
जिसने यह संसार रचा है
कान पकड़ कर पूछें उससे
क्यों इतना अंधेर मचा है²³

कवि देश की वर्तमान दशा का चित्रण करते हुए वे करोड़ों बेरोजगारों की बात करते हैं, भूखे नंगे लोगों का चित्रण करते हैं। 'बंगाल का अकाल' कविता में केदारनाथ अग्रवाल ने भूख से बेहाल व्यक्तियों का जो चित्रण किया है वह उनकी यथार्थवादिता का चित्र प्रस्तुत करता है-

बाप बेटा बेचता है
भूख से बेहाल होकर
धर्म, धीरज, प्राण खोकर
हो रही अनरीति बर्बर
राष्ट्र सारा देखता है
बाप बेटा बेचता है²⁴

देशप्रेम से आरंभ करके मानव प्रेम तक पहुँचने वाले प्रगतिशील कवियों में जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द जी का महत्वपूर्ण स्थान है। एक सच्चे प्रगतिशील कवि की आस्था और साधना मिलिन्द जी के काव्य में सर्वत्र दिखाई देती है। वह उनके जीवन-संघर्ष का ही एक अंग, उसका ही एक साधन रही है। जिन आदर्शों के लिए उन्होंने अपने जीवन में संघर्ष किया है, उन्हीं आदर्शों और उन्हीं संघर्षों को उन्होंने अपनी

कविताओं में अभिव्यक्त किया है। गांधी जी के प्रति श्रद्धा ने मिलिन्दजी की यथार्थ दृष्टि को धूमिल नहीं किया। 'गांधी जयन्ती पर' गांधी जी के भक्त की ईमानदार यथार्थ दृष्टि की प्रतीक कविता है-

नगे भूखों की कराह सुन, द्रवित न होता जिनका अन्तर
जो समता के प्रकट विरोधी, वे कैसे गांधी के अनुचर?''

नागार्जुन केन्द्रीय वर्ग के उन कवियों में अन्यतम हैं, जिन्होंने प्रगतिशील काव्य को मजदूर आन्दोलन की संघर्षशील आत्मा को मजबूत किया है। उनकी कविता में मजदूर जीवन की सादगी, स्पष्टता और कठोरता अपने वास्तविक रूप विद्यमान हैं। 'नागार्जुन के काव्य में प्रकृति व्यंग्य रूप में प्रस्तुत हुयी है। कुछ कविताएं गंभीर संवेदनात्मक और कलात्मक हैं जिनमें कवि ने रागात्मक छवि अंकित की है और मानवीय संभावनाओं के प्रति आस्था व्यक्त की है साथ ही उन्होंने सामाजिक कुरूपता की भी कविताएं लिखी हैं। 'बादल को घिरते देखा है' कविता में प्रकृति के उदात्त चित्रों के साथ साथ वर्तमान जीवन की विषमताओं के संदर्भ प्रस्तुत किये हैं। उनकी कविताओं में उद्ग्र आक्रोश और आधुनिक जीवन की तिव्रता व्यंजित है। 'वे और तुम' कविता मध्यवर्गीय कवि के कुण्ठाग्रस्त जीवन और मेहनतकश इन्सान के स्वस्थ मेहनती जीवन के अन्तर को बहुत सुन्दर ढंग से उभारती है-

वे लोहा पीट रहे हैं

तुम मन को पीट रहे हो

वे पत्तर जोड़ रहे हैं

तुम सपने जोड़ रहे हो

उनकी घुटन ठहाकों में घुलती है

और तुम्हारी घुटन उर्नीदी घड़ियों में चुरती है।

वे हलसित हैं, अपनी ही फसलों में डूब गये हैं

तुम हलसित हो, चितकबरी चांदनियों में खोये हो''

कवि त्रिलोचन की कविताएं तीन प्रधान वृत्तियों के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित की जा सकती है: प्रेम भावना संबंधी कविताएं, प्राकृतिक सौन्दर्य के आकर्षण को बाणी देने वाली कविताएं और सामाजिक चेतना को अभिव्यक्ति देने वाली कविताएं। 'कृति' के कविता विशेषांक, 1960 में प्रकाशित शमशेर बहादुर सिंह ने एक बिल्कुल पर्सनल एसे 'मेरे कुछ प्रिय आधुनिक कवि' में लिखा है: "यह कवि, जो सामान्य में ही असामान्य का दर्शक है, तो वह इसलिए कि इस असामान्य के माध्यम से पुनः सामान्य को और अच्छी तरह समझ सके। त्रिलोचन की कमजोरियों और शक्तियों दोनों को समझने के लिए यह हृदयंगम कर लेना बहुत उपयोगी है कि वह सामान्य को ही असामान्य का दर्जा देने और उसी को व्यक्त करने के लिए कृतसंकल्प है। वह सपाट और स्पष्ट शैली में ही विश्वास करता है। ...इनकी दृष्टि और इनका हृदय साधारण जनों और परिस्थितियों और सुखदुःख के क्षणों से स्थायी सत्यों के मर्म बटोरती है, और यही बात उनके यहाँ अनुपम है।"''

एक तरुण कवि-समीक्षक मलयज के अनुसार- त्रिलोचन औसत

भारतीय आदर्मी के चितरे हैं। वे मानव-अनुभूतियों की विशिष्टता के नहीं, उनकी मार्मिकता के कवि हैं। वे अनुभूति की जटिलता को नहीं, उसकी सम्पन्ता को पकड़ते हैं और अपनी कला में साधते हैं। वे मानव-मर्म के किसी नये सत्य का उद्घाटन नहीं करते, वरन् जीवन जगत् की आपाधापी में जो सहज मानव सत्य आंख की ओट हो गये हैं, उन्हें एक नयी विश्वसनीय पहचान के साथ हमारे सामने लाते हैं।''''

रंगेय राघव के काव्य में ऐसे समाज की स्थापना की आकांक्षा व्यक्त हुई है, जिसमें मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण नहीं होगा और सब एक समान रहने हेतु प्रयत्नशील रहेंगे। रंगेय राघव की कविता में एक ओर स्वस्थ प्रेम है तो दूसरी ओर सामाजिकता, एक ओर छायावादी सौष्टव तथा शिल्पसौन्दर्य है तो दूसरी ओर प्रयोगशीलता, एक ओर प्रगतिवादी उग्रता, क्रान्तिवादिता, श्रम साधना तथा अपेक्षित कक्षा है तो दूसरी ओर मानवता तथा विश्वकल्याण की पुकार। उसमें यदि कहीं वर्ग-विद्वेष की उग्रभावना है तो समस्त सीमाओं को पार करके मानवता के उदात्त शिखर पर आसीन होने की कामना भी है।''''

समाज व्यवस्था की स्थिति और उनके कर्तव्यों को स्पष्ट किया गया है। 'मेधावी' मानव के अब तक के इतिहास की कहानी कहते हुए उसे भावी समाजवादी समाज की देहली पर ला खड़ा करता है।

एक दिन मानव का श्रम स्वास

मिटा देगा यह पाप महान

विश्व होगा केवल सुख स्थान

एक घर सी होगी यह भूमि

और भौतिक के दुःख कर चूर

बनायेंगे मानव वह पन्थ''

(पृ.163 हिन्दी के प्रगतिशील कवि- रणजीत)

उपेन्द्रनाथ अशक ने सूक्ष्म संवेदनाओं और समसामयिक जीवन की जटिलताओं को व्यक्त करने वाली कविताओं के कई तरह के चित्र खींचे हैं। 'बकरोटे की ढलान पर' कविता में आजाद देश के उस आजाद नागरिक का चित्र खींचा गया है, जो क्षण-क्षण घिरती धुंध और बरसती बुंदनियों में फटे हुए पैरों में मोटी चप्पलें पहने एक लम्बा सा भारी शहतीर उठाये धीरे-धीरे पहाड़ से उतर रहा है और जो जी तोड़ परिश्रम के बाद भी भूखों मरने के लिए मजबूर है।''

गणपतिचन्द्र भण्डारी की कविताओं में सामाजिक विषमता, नारी के लिए समान अधिकारों की मांग, मानव की क्षमता और उसके उज्वल भविष्य के प्रति आस्था, पेय पानी के अभाव और उसके कारण साधारणजनों की कठिनाइयाँ, दूधरराही के अभिशाप आदि का चित्रण मिलता है। 'दीवाली' कविता में सामाजिक विषमता को पर्याप्त प्रभावशाली किम्बों के सहारे रूपायित किया गया है।

वे बेंटे सेठ करोड़ीमल, जिनकी यह कपड़े की दुकान

आंखें झप जातीं देख चमकते खीन खाब के सजे थान

कुछ रेशम के कुछ मलमल के कुछ जरी और गोटा किनार

कुछ गाज,सिफुन या जारजेट, कुछ चमकदार सलमा सितार

दुनिया नाहक चिह्लाती है, कहती कपड़े का काल पड़ा

बढ़िया से बढ़िया कपड़े का देखो कैसा भंडार भरा
हां अलबत्ता मुश्किल उनकी, जिनकी हो जब रही खाली
हम देख रहे थे दीवाली।

बिलखते हुए बच्चे को अपने वक्ष से लगाये हुए एक भिखारिन का करुण
दृश्य अंकित कर कवि कहता है-

सिक्कों पर कुकुम लगा उधर लक्ष्मी की पूजा होती थी
जब बाहर खड़ी एक लक्ष्मी दाने दाने को रोती थी
भारत माता का एक लाल जब दूध! दूध! चिह्नाता था
निर्जीव स्वर्ण के सिक्कों पर तब दूध उड़ोला जाता था
भगवान दूध से नहाये पर बच्चे का पेट रखा खाली
हम देख रहे थे दीवाली¹²

जिस व्यक्ति ने संघर्ष किया हो और जो अपने इरादे मजबूत रखता है
उस व्यक्ति का कभी अन्त नहीं हो सकता। वह अभिजात्य वर्ग के
प्रहारों से कभी नहीं मर सकता। सामान्य व्यक्ति जिन्दगी में तूफानों के
थपेड़े खाकर बड़ा होता है, इसलिए वह पूँजीपतियों के अत्याचार से मर
नहीं सकता।

जो जीवन की धूल चाट कर बड़ा हुआ है
तूफानों से लड़ा और फिर खड़ा हुआ है
जिसने सोने को खोदा लोहा मोड़ा है
जो रवि के रथ का घोड़ा है
वह जन मारे नहीं मरेगा
नहीं मरेगा¹³

सामाजिक विषमता से पूर्ण कई चित्र केदारनाथ अग्रवाल ने अपनी
कविता में चित्रित किये हैं। अपनी भूख मिटाने के लिए जब भूख से
व्याकुल व्यक्ति घोड़े के चने मांगता है तो उसे वो भी नहीं मिलते।
अजीब विडम्बना है कि घोड़े के लिए खाद्यान्न है पर एक सामान्य जन
के लिए नहीं।

सेठ करोड़ीमल के घोड़े का नीकर है
भूरा आरख
हाथ जोड़कर/पाँव पकड़कर
आँखों में आँसू झलकाकर
भूख-भूख से व्याकुल होकर
बदहवास लाचार हृदय से,
खाने को घोड़े का दाना
आध पाव ही बचई ने भूरा से माँगा
मानव को तो दाना देते नहीं एक भी
घोड़े को दाना देते हैं पूरा
मृत्यु मांगते हैं मनुष्य की
पशु को जीवित रखकर¹⁴

गजानन माधव मुक्तिबोध की कविताओं में भी सामाजिक विषमता
के चित्र मिलते हैं। विषयता की इन जंजीरों से मुक्त होने के लिए
मुक्तिबोध प्रचुर भावना और इरादों की मजबूती की बात कहते हैं।

ऐ इन्सानों ! ओस न चाटो

अपने हाथों पर्वत काटो
पथ की नदियाँ खींच निकालों
जीवन पीकर प्यास बुझालो!¹⁵

मुक्तिबोध ने शोषित मनुष्य की पीड़ा को और वर्ग-शत्रु को बखूबी
समझा। उन्होंने पूँजीवादी समाज के प्रति अपना निर्णय देते हुए कहा-

तू है मरण, तू है रिक्त, तू है व्यर्थ
तेरा ध्वंस केवल एक तेरा अर्थ।¹⁶

धूमिल की कविताओं में विरोध और व्यंग्य का तीव्र स्वर मिलता
है। वो तो सामाजिक प्रक्रिया के अन्तर्गत व्यवस्था के विरोध में हैं।
सामाजिक विषमता की इस स्थिति में श्रम और रोटी के लिए
न्यायपूर्ण व्यवस्था होना चाहिए।

एक आदमी रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है

जे न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है

वह सिर्फ रोटी से खेलता है

मैं पूछता हूँ यह तीसरा आदमी कौन है ?

मेरे देश की संसद मीन है।¹⁷

रघुवीर सहाय एक कवि के रूप में अनुभव करते हैं कि भ्रष्ट तंत्र के
विरुद्ध एक सार्थक लड़ाई निश्चित रूप से पुराने औजारों से नहीं लड़ी
जा सकती और न ही पुरानी मूल्य सारणियाँ अधिक मदद कर सकती
हैं। "निरन्तर गहराता सामाजिक संकट, जन-उभार और मेहनतकश
लोगों से जुड़े मध्यवर्गी तत्वों में आक्रोश अन्तर्निहित था।

राष्ट्रगीत में भला कौन वह
भारत-भान्य विधाता है
फटा सुयन्ना पहने जिसका
गुन हरचरना गाता है
मखमल टमटम बहलम तुरही
पगड़ी छत्र चंकर के साथ
तोप छुड़ाकर डोल बजाकर
जय-जय कौन कराता है।
पूरब पश्चिम से आते हैं
नंगे-बूचे नरककाल¹⁸

पूँजीवादी व्यवस्था की स्पष्ट होती विसंगतियों और जन उभारों को
कब तक उपेक्षा से कवि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना देख सकते थे। अब
किसानों की चिलमों में अंगारे की तरह दमकने और मजदूरों की
बाँड़ियों में सुलगने का उनका ख्याब पूरा हो गया था। अब वे मध्य वर्ग
की प्रतीक्षा को समाप्त कर टुकड़खोर के रास्ते बंद कर देना चाहते थे,
जिससे एक स्वस्थ आशा का स्वर जाग सके-

निराशा की ऊँची-काली दीवार में भी

बहुत छोटे रोशनदान -सी

जड़ी रहती है कोई न कोई आकांक्षा

जिसमें उजाला फैला रहता

और कबूतर

पंख फड़फड़ाकर निकल जाते हैं।”

कवि ने केवल समाज का यथार्थ चित्रण ही नहीं किया वरन् भावी समाज का स्वरूप भी स्पष्ट, सरल और सीधे शब्दों में सामने रखा है-

वह विष वैषम्य हटाएँ वह साम्य-सुधा सरसाएँ

श्रमकार सुखी हों जिसमें आ

ओ वह विश्व बसाएँ

जनता का राज जहाँ हो, समता का साज जहाँ हो

श्रमिकों-कृषकों के दल की ऊंची आवाज जहाँ हो

सम्राट सभी हों सबके, सबके हों सभी रिआया

बहुतों पर एक न पाये अधिकार कभी मनभाया

कोई न धनी रह जाये कोई न दरिद्र दिखाए

‘जो काम करे सुख भोगे’ यह स्वर्ण नियम बन जाये

चेता चमार के घर में बनवारी ब्राह्मण खाएँ

बनवारी की कुलकन्या, चेता के घर में जाएँ।”

संदर्भग्रंथ सूची

1. नेट विकीपीडिया
2. पृ. 604 आधुनिक भारतीय सामाजिक व राजनीतिक विचार -डॉ. लक्ष्मण सिंह
3. पृ. 606 वही
4. पृ. 606 वही
5. पृ. 687 आधुनिक भारतीय सामाजिक व राजनीतिक विचार -डॉ. लक्ष्मण सिंह
6. पृ. 583 आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन- डॉ बी पी वर्मा
7. अशोक मेहता, *Democratic Socialism and Studies in Asian Socialism*
8. पृ. 159 आधुनिक राजनीतिक चिन्तन का इतिहास (बेन्थम से वर्तमान) - डॉ बी एल फड़िया
9. राजनीति सिद्धांत- डॉ एस सी सिंह पृ 405
10. पृ. 155 यूनीफाइड राजनीति विज्ञान- डॉ ओम नागपाल
11. पृ. 153 वही
12. पृ. 60 आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ -लेखक नामवर सिंह एवं पृ. 30 माध्यम फरवरी 65 आलेख श्री ललित मोहन अवस्थी का “ प्रगतिवदी हिन्दी काव्य”
13. पृ. 97 हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि- द्वारिकाप्रसाद सक्सेना
14. पृ. 90 प्रतियोगिता साहित्य हिन्दी- डॉ अशोक तिवारी
15. पृ. 65 विषयगा- रामधारीसिंह दिनकर
16. पृ. 9, कुकुरमुत्ता- सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला
17. पृ. 29 अपरा- सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला
18. पृ. 253 हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि- द्वारिकाप्रसाद सक्सेना
19. पृ. 39 दुनिया की द्वन्द्व कहानी- रामेश्वर करुण
20. पृ. 29 यह दो विपरीत व्यथाएँ- रामेश्वर करुण
21. पृ. 59 यह दुनिया मजदूरों की- रामेश्वर करुण
22. पृ. 74 इतना अंधेर- चिनगारी- रामेश्वर करुण
23. पृ. 131 प्रतियोगिता साहित्य हिन्दी- डॉ अशोक तिवारी
24. पृ 42 गांधी जयन्ती पर - जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द
25. पृ. 102 राष्ट्रीय स्वाधीनता और साहित्य- रामेश्वर शर्मा
26. पृ. 117 हिन्दी के प्रगतिशील कवि- रणजीत
27. स्थापना-8, अक्टूबर 70- त्रिलोचन की कविता- परमानन्द श्रीवास्तव
28. स्थापना-8, त्रिलोचन की कविता- मलयज
29. पृ. 64 प्रगति, नई कविता सं. वासुदेवनन्दन प्रसाद- आलेख डॉ. नत्थन सिंह
30. पृ. 163 हिन्दी के प्रगतिशील कवि- रणजीत
31. पृ. 170 वही
32. पृ. 200-201 वही
33. कविता कोश- जो जीवन की धूल चाटकर बड़ा हुआ है -केदारनाथ अग्रवाल
34. कविता कोश- कहे केदार खरी-खरी - केदारनाथ अग्रवाल
35. कविता कोश- ऐ इन्सानों ! गजानन माधव मुक्तिबोध
36. पृ. 16 साहित्य, कला और जीवन- रतन चौहान
37. कविता कोश- रोटी और संसद- धूमिल
38. पृ. 164 आस्वाद- रतन चौहान
39. कविता कोश - अधिनायक- रघुवीरसहाय
40. पृ. 17 साहित्य, कला और जीवन- रतन चौहान
41. पृ 105, हिन्दी के प्रगतिशील कवि- रणजीत आलेख (आओ यह विश्व बसायें)-रामेश्वर करुण

पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षक, शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि का उनकी शिक्षक प्रभावशीलता पर प्रभाव : एक अध्ययन

नम्रता सिंह

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, एम.बी.एम. कॉलेज, कानपुर (उत्तर प्रदेश)



shodhshree@gmail.com

कि सी भी राष्ट्र की प्रगति में वास्तविक निर्णायक की भूमिका उस राष्ट्र के शिक्षक ही निभाते हैं, क्योंकि शिक्षक राष्ट्र के विद्यार्थियों अर्थात् भावी नागरिकों का निर्माण करते हैं। अतः समाज में शिक्षक का स्थान सर्वोपरि होता है। साथ ही शिक्षकों से यह आशा भी की जाती है कि वे अपने विद्यार्थियों के लिए प्रेरणा एवं संवेगात्मक स्रोत बनें। यदि शिक्षक का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा है और वह सांवेगिक रूप से संतुलित है तब ही उसकी शिक्षक प्रभावशीलता भी प्रभावी होगी। कक्षा अध्यापन के समय शिक्षक व शिक्षार्थी के बीच सकारात्मक संवेग उच्च प्रगति के आधार होते हैं।

जन्म के समय मानव शिशु में सिर्फ सामान्य उत्तेजन ही पाया जाता है। जैसे-जैसे वह अपने जीवन में आगे बढ़ता है उसमें परिपक्वता आती जाती रहती है, साथ ही उसे भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यवहारों को सीखने के अवसर प्राप्त होते हैं। फलतः वह नये-नये संवेगों की अभिव्यक्ति करना एवं उन पर पर्याप्त नियंत्रण पाना तथा सही-सही अर्थ लगाना भी सीख लेता है और जीवन में समायोजन प्राप्त करता है। संवेगों पर नियंत्रण संवेगात्मक बुद्धि द्वारा ही प्राप्त होती है।

डेनियल गोलमैन ने अपनी पुस्तक "इमोशनल इंटेलीजेंस" से संवेगात्मक बुद्धि को परिभाषित करते हुए कहा है कि 'संवेगात्मक बुद्धि वह क्षमता है जिसके अध्ययन से हम अपनी तथा अन्य व्यक्तियों की भावनाओं को समझते हैं, स्वयं को प्रेरित करते हैं तथा अपने और अपने सम्बन्धों में पाये जाने वाले संवेगों को भली प्रकार प्रतिबंधित करते हैं।

अनेक अनुसंधानों द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि उच्चतर संवेगात्मक बुद्धि द्वारा व्यक्ति जीवन के विभिन्न पक्षों में सफलता प्राप्त करता है, अर्थात् जीवन में सफलता हेतु 20% बुद्धि तथा 80% संवेगात्मक बुद्धि का मिश्रित योगदान होता है। अतः यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि सफल जीवन के लिये उच्च संवेगात्मक बुद्धि अनिवार्य है। जबकि शिक्षकों के सन्दर्भ में देखा जाये तो एक शिक्षक की शिक्षक प्रभावशीलता तभी प्रभावी होगी जबकि वह सांवेगिक रूप से परिपक्व होगा।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व -

एक श्रेष्ठ विद्यालय सर्वत्र एवं सर्वदा एक अत्याधिक मूल्यवान राष्ट्रीय परिसम्पत्ति है। विद्यालय ही वे प्रयोगशालाएं जो राष्ट्र के भावी नागरिक तैयार करते हैं। अतः राष्ट्र की श्रेष्ठता इन प्रयोगशालाओं की श्रेष्ठता पर निर्भर करती है तथा इन प्रयोगशालाओं के प्रयोगकर्ता शिक्षक होते हैं। अतः शिक्षकों के व्यक्तित्व में उनके द्वारा उचित संवेगात्मक नियन्त्रण विशेष महत्व रखता है क्योंकि शिक्षक के व्यवहार को उनके संवेग ही भावी बनाते हैं। अतः शिक्षक प्रभावशीलता में उच्चतर सांवेगिक बुद्धि का योगदान महत्वपूर्ण है।

वर्तमान में हमें समाचार पत्रों में अक्सर ऐसी घटनाएं पढ़ने में आती हैं कि अमुक संस्थान में विद्यार्थी ने मानसिक दुबारों के कारण आत्महत्या कर ली अथवा रैगिंग से परेशान होकर छात्र पढ़ाई छोड़कर अपने घर

वापस लौट गया। यह समस्याएं व्यक्ति के सांवेगिक असन्तुलन को दर्शाती हैं।

संभवतया इसके कारण स्वरूप में ऐसा हो कि उनका पालन पोषण एवं शिक्षा दीक्षा ऐसे परिवेश में हुई हो जिसमें वे स्वयं को असहज महसूस करते हों।

इन परिस्थितियों से बचने हेतु विद्यार्थियों को ऐसे वातावरण में शिक्षित किया जाए जहां उन्हें अपने व्यक्तित्व को सुधारने के अवसर प्राप्त हों। ऐसा तब ही हो सकेगा जब उनके शिक्षक स्वयं भी सन्तुलित व्यक्तित्व वाले हों। प्रभावी व्यक्तित्व के निर्माण में संवेगों का बहुत अधिक महत्व होता है। प्रभावशीलता भी प्रभावी होती है।

समस्या कथन - "पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षक-शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि का उनकी शिक्षक प्रभावशीलता पर प्रभाव : एक अध्ययन"

तकनीकी शब्द:-

- **पूर्व माध्यमिक स्तर** - पूर्व माध्यमिक स्तर के विद्यालयों से तात्पर्य ऐसे विद्यालयों से है जो उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा कक्षा 6 से कक्षा 8 तक संचालित होते हैं।
- **शिक्षक एवं शिक्षिकाएं** - शिक्षक एवं शिक्षिकाओं से तात्पर्य बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा संचालित कक्षा 6 से कक्षा 8 तक अध्यापन कार्य करने वाले शिक्षक-शिक्षिकाओं से है जिनके व्यक्तित्व से प्रेरित होकर ही विद्यार्थी अपने जीवन पथ पर अग्रसर होते हैं।
- **संवेगात्मक बुद्धि** - संवेगात्मक बुद्धि से तात्पर्य व्यक्ति विशेष की उस क्षमता से है जो उसे उसकी विचार शक्ति का प्रयोग करते हुये स्वयं के तथा दूसरों के संवेगों को जानने-समझने में मदद करती है ताकि वह दूसरों के साथ अच्छे सम्बन्ध स्थापित करते हुये अधिक से अधिक अवसर प्राप्त कर सके।
- **शिक्षक प्रभावशीलता** - शिक्षक प्रभावशीलता से तात्पर्य शिक्षक के व्यक्तित्व शिक्षण कार्यकलाप, शिक्षण दक्षता, छात्रों द्वारा प्राप्त अधिगम व कक्षा उपलब्धि से है अर्थात् शिक्षक प्रभावशीलता का सम्बन्ध अधिगम प्रक्रिया को सन्तुष्ट रूप से सम्पन्न कराने हेतु किये जाने वाले क्रिया-कलापों से है।

अध्ययन के उद्देश्य -

- पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि का आकलन करना।
- पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षक एवं शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि की तुलना करना।
- पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि एवं शिक्षक प्रभावशीलता के मध्य सम्बन्ध ज्ञात करना।

परिकल्पनाएं-

- पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की संवेगात्मक

बुद्धि में सार्थक अंतर नहीं है।

- उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षक-शिक्षिकाओं एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक सम्बन्ध नहीं है।
- निम्न संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षक-शिक्षिकाओं एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

परिसीमांकन : शोधकर्ता ने समय, साधन एवं सुविधाओं को दृष्टिगत रखते हुये निम्नलिखित सीमाओं का निर्धारण किया है-

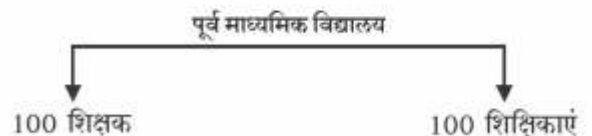
- प्रस्तुत शोध को कानपुर नगर के बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा संचालित पूर्व माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं तक ही सीमित रखा है।
- प्रस्तुत शोध को कानपुर नगर के कल्याणपुर ब्लॉक तक ही सीमित रखा गया है।

साहित्य सर्वेक्षण -

- अग्रवाल और गुप्ता (2012) के द्वारा किये गये अध्ययन "इफेक्ट ऑफ इमोशनल इण्टेलिजेन्स ऑन टीचर इफेक्टिवनेस" में यह पाया गया है कि महिला शिक्षिकाओं का संवेगात्मक बुद्धि स्तर एवं शिक्षक प्रभावशीलता, पुरुष शिक्षकों की तुलना में उच्च है।
- कुकोती आँ बलोदी (2011) ने अपने अध्ययन "हेल्दी नार्सिसिस्टिक और इमोशनल इण्टेलिजेन्स: ए च्वाइस फॉर लीडरशिपरोल" में यह पाया कि आदर्श नेतृत्व क्षमता, स्वस्थ स्वप्न एवं संवेगात्मक बुद्धि के सृजनात्मक समिश्रण से होता है।
- बेन्सी और नागराजन (2012) के द्वारा किये गये अध्ययन "इमोशनल इण्टेलिजेन्स ऑफ प्रास्पेक्टिव टीचर" में यह पाया कि संवेगात्मक बुद्धि एवं आत्म प्रत्यय में सार्थक सहसम्बन्ध है।
- अग्रवाल (2012) ने अपने अध्ययन "अनुदानित एवं गैर अनुदानित उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के संगठनात्मक वातावरण का शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता पर प्रभाव का अध्ययन में पाया कि अनुदानित विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता गैर अनुदानित विद्यालयों के शिक्षकों से अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी होती है।

शोध विधि - प्रस्तुत शोध में वर्णनात्मक शोध के अन्तर्गत सर्वेक्षण शोध विधि का प्रयोग किया गया है।

समष्टि - प्रस्तुत शोध की समष्टि में उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा संचालित (कानपुर नगर के कल्याणपुर ब्लॉक के अन्तर्गत स्थित) विद्यालयों के शिक्षक शिक्षिकाओं को ही शामिल किया गया है।



कुल न्यादर्श की संख्या = 200 प्रयोज्य

इन न्यादर्शों का चयन यादृच्छिक प्रतिदर्शन विधि द्वारा किया गया है।

प्रयुक्त चर:-

स्वतन्त्र चर → संवेगात्मक बुद्धि
आश्रित चर → शिक्षक प्रभावशीलता

उपकरण

संवेगात्मक बुद्धि के आकलन हेतु-अनुकूल हाइड संज्योत पेठे तथा उपेन्द्र घर द्वारा निर्मित प्रभावीकृत मापनी तथा शिक्षक प्रभाव शीलता के आकलन हेतु डॉ. प्रमोद कुमार तथा डॉ. एन. मूथा द्वारा निर्मित प्रमाणीकृत मापनी का प्रयोग किया गया है।

प्रयुक्त सांख्यिकीय प्रविधियाँ:-

प्रस्तुत शोध से प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, प्रमाणिक विचलन, **C.R., X² (Chi-square)** तथा आसंग गुणांक (**Contingency Coficient**) का प्रयोग किया गया।

आंकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या-

प्रस्तुत शोध में पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि के अध्ययन हेतु संवेगात्मक बुद्धि के प्राप्तांकों के मध्यमान को ज्ञात करके, मध्यमान से ऊपर वाले शिक्षक-शिक्षिकाओं को उच्च संवेगात्मक बुद्धि के समूह एवं मध्यमान से नीचे वाले शिक्षक-शिक्षिकाओं को संवेगात्मक बुद्धि के समूह में विभाजित किया गया। तत्पश्चात् उच्च संवेगात्मक बुद्धि एवं निम्न संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता के आधार पर सांख्यिकीय शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता को आधार पर सांख्यिकीय विधियों द्वारा आंकड़ों का विश्लेषण एवं निर्वचन किया गया।

परिकल्पना परीक्षण:-

पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षक शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि का अध्ययन:-

परिकल्पना “पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षक-शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं है” के परीक्षण हेतु **C.R.** का प्रयोग किया गया। जिनके मान सारणी संख्या (1) में प्रदर्शित है-

सारणी संख्या - 1

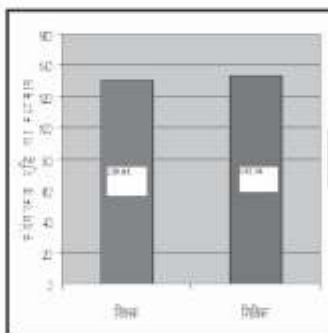
क्र.म. संख्या	चर	संख्या	लिंग	मध्यमान	प्रमाणिक विषय	D	0-D	C.R.	सार्थकता (0.05)
1.	संवेगात्मक बुद्धि	100	पुरुष	129.02	11.4	3.28	1.874	1.75	सार्थक अन्तर नहीं
2.	संवेगात्मक बुद्धि	100	महिला	132.30	14.92				
df = 198 N=200									

सारणी सं. 1 के अवलोकन से स्पष्ट है कि **CR.** का परिकल्पित मान 1.75 है जो कि सार्थकता स्तर 0.05 तथा मुवतांश 198 पर **CR.** के सारणी मान 1.98 से कम है।

अतः शून्य परिकल्पना “पूर्व मा. स्तर के शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अंतर नहीं है” स्वीकृत की जाती है अर्थात् यह कहा जा सकता है कि पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अंतर नहीं है तथा जो भी अंतर प्रदर्शित हो रहा है वह सिर्फ प्रतिचयन त्रुटि के कारण है।

रेखाचित्र

माध्यमिक स्तर के शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि का रेखाचित्र



निष्कर्ष की व्याख्या :-

प्रस्तुत शोध अध्ययन के परिणाम स्वरूप यह ज्ञात हुआ कि पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षक एवं शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि में कोई अंतर नहीं पाया जाता है, परन्तु शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि के मध्यमान के अवलोकन से स्पष्ट है कि शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि से अपेक्षाकृत कम है।

उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता का अध्ययन-

परिकल्पना न⁰-2 “उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक सम्बन्ध नहीं है” के परीक्षण हेतु **X²** परीक्षण एवं परस्पर निर्भरता गुणांक (C) का प्रयोग किया गया, जिनके मान सारणी संख्या (2) में प्रदर्शित किये गये हैं।

सारणी संख्या - 2

	उच्च संवेगात्मक बुद्धि	निम्न संवेगात्मक बुद्धि	योग
शिक्षक	25	27	52
शिक्षिकाएं	47	7	54
योग	72	34	106
df = 1	$\chi^2 = 16.71$	परस्पर निर्भरता गुणांक (C) = 0.368	

उपर्युक्त सारणी (2) के अवलोकन से स्पष्ट है कि χ^2 का परिकलित मान 16.71 है जो सार्थकता स्तर 0.05 तथा मुक्तांश (df) = 1 पर χ^2 के सारणीय मान 3.841 से कहीं अधिक है तथा परस्पर निर्भरता गुणांक C का मान 0.368 है जिसे पर्याप्त माना जा सकता है। अतः शून्य परिकल्पना “उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक सम्बन्ध नहीं है” अस्वीकार की जाती है अर्थात् संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक सम्बन्ध होता है साथ ही परस्पर निर्भरता गुणांक के परिकलित मान 0.368 से यह स्पष्ट है कि पूर्व माध्यमिक स्तर के उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में पारस्परिक निर्भरता पायी जाती है।

निष्कर्ष की व्याख्या

निष्कर्ष स्वरूप यह ज्ञात हुआ कि शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि का उनकी शिक्षक प्रभावशीलता से धनात्मक सम्बन्ध है। अर्थात् जिन शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि अधिक है, उनकी शिक्षक प्रभावशीलता भी अच्छी होती है।

निम्न संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता का अध्ययन-

परिकल्पना (3) “निम्न संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक सम्बन्ध नहीं है” के परीक्षण हेतु χ^2 परीक्षण एवं परस्पर निर्भरता गुणांक (C) का प्रयोग किया गया जिनके मान सारणी (2) में प्रदर्शित किये गये हैं।

सारणी संख्या-3

	उच्च संवेगात्मक बुद्धि	निम्न संवेगात्मक बुद्धि	योग
शिक्षक	18	26	44
शिक्षिकाएं	24	26	50
योग	42	52	
df = 1	$\chi^2 = 0.48$	परस्पर निर्भरता गुणांक (C) = 0.712	

उपर्युक्त सारणी (3) के अवलोकन से स्पष्ट है कि χ^2 का परिकलित मान 0.48 है जो सार्थकता स्तर 0.05 तथा मुक्तांश df = 1 पर χ^2 के सारणीय मान 3.841 से कम है तथा परस्पर निर्भरता गुणांक C का मान 0.712 है जिसे पर्याप्त माना जा सकता है।

अतः शून्य परिकल्पना “निम्न संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक सम्बन्ध नहीं है” के हेतु स्वीकार की जाती है अर्थात् निम्न संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक सम्बन्ध नहीं होता। साथ ही परस्पर निर्भरता गुणांक के परिकलित मान 0.712 से स्पष्ट है कि पूर्व माध्यमिक स्तर के निम्न संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में परस्पर निर्भरता नहीं पायी जाती है।

निष्कर्ष की व्याख्या

निष्कर्ष स्वरूप यह ज्ञात हुआ कि जिन शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि निम्न स्तर की है उनकी शिक्षक प्रभावशीलता भी निम्न स्तर की होती है।

“उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं निम्न संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता का ” तुलनात्मक अध्ययन” से

स्पष्ट है कि उच्च संवेगात्मक बुद्धि के शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता, निम्न संवेगात्मक बुद्धि के शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता से अधिक होती है अर्थात् यह कहा जा सकता है कि शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता पर उनकी संवेगात्मक बुद्धि का प्रभाव पड़ता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि शिक्षक चाहे किसी भी स्तर का हो, उसका शिक्षण तभी प्रभावी हो सकता है जबकि वह स्वयं संवेगात्मक रूप से सन्तुलित होगा।

निष्कर्ष -

- पूर्व माध्यमिक स्तर के शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि में सार्थक अंतर नहीं है।
- पूर्व माध्यमिक स्तर के उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक सम्बन्ध है, तथा उनमें परस्पर निर्भरता पायी जाती है।
- पूर्व माध्यमिक स्तर के निम्न संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों एवं उनकी शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक सम्बन्ध नहीं है तथा उनमें

परस्पर निर्भरता भी नहीं पायी गयी।

शैक्षिक निहितार्थ -

- शिक्षकों को संवेगात्मक रूप से सुदृढ़ होना चाहिए ताकि वह अपने छात्रों के संवेगों, भावनाओं आदि को समझते हुये उन्हें भावात्मक रूप से सबल बना सके।
- उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता प्रभावी होती है जिसमें छात्रों की निष्पत्ति में भी सुधार होता है।
- पूर्व माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी सांवेगिक रूप से अपरिपक्व होते हैं। अतः इस स्तर के शिक्षकों के लिये संवेगात्मक बुद्धि अधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है।

भावी शोध हेतु सुझाव -

- प्रस्तुत शोध की पुनरावृत्ति अन्य स्तर पर की जा सकती है।
- भावी शोध स्थाई व अस्थायी शिक्षकों पर किया जा सकता है।
- भावी शोध ग्रामीण व शहरी शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि का उनकी शिक्षण दक्षता पर प्रभाव के अध्ययन स्वरूप किया जा सकता है।
- भावी शोध कार्य विभिन्न तत्वों तथा संवेगात्मक पर किया जा सकता है।
- भावी शोध कार्य शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि तथा उनके स्वास्थ्य के अध्ययन स्वरूप किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल श्वेता (2012)- अनुदानित एवं गैर अनुदानित उ.मा.वि. के संगठनात्मक वातावरण का शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता पर प्रभाव का अध्ययन, शिक्षा चिंतन, त्रिमूर्ति संस्थान, नोएडा अंक-44, पृष्ठ संख्या 14-22
2. अग्रवाल, श्वेता और गुप्ता, विनीता (2012)- इफेक्ट ऑफ इमोशनल इण्टेलिजेन्स ऑन टीचर इफेक्टिनेस, इण्डियन साइकोलोजिकल रिव्यू, वाल्यूम-76(3) पृष्ठ संख्या 46-151
3. बेन्सी, पी.बी.बी. और नागराजन, के. (2012)- इमोशनल इण्टेलिजेन्स ऑफ प्रास्पेक्टिव टीचर, साइकोलिंग्वा, वाल्यूम-42(2) पृष्ठ संख्या-110
4. चतुर्वेदी, राजेश और सिंह, सीमा (2009) छात्राध्यापकों की संवेगात्मक बुद्धि और स्वप्रत्यय के मध्य संबंधों का अध्ययन, परिप्रेक्ष्य वर्ष 16(2) नई दिल्ली।
5. दास देवेन्द्रा नाथ एण्ड बोहारा एन.पी. (2004) : टीचर इफेक्टिवनेस इन रिटेशन टू द्वाइर इमोशनल इटेलीजेन्स, वाल्यूम-XXX, जर्नल ऑफ इण्डियन एजुकेशन, एन. सी.ई.आर.टी. पी.पी. 51-61
6. देशमुख, एन.एच. एण्ड माकड़, एन.एन. (2012)- स्ट्रेस, इमोशनल

इण्टेलिजेन्स एण्ड मेन्टल हेल्थ ऑफ इम्पलाइज इण्डियन साइकोलोजिकल रिव्यू, वाल्यूम-76(3) पृष्ठ संख्या 175-180

7. गौडियाल, सुनीता(2012)-इमोशनल इण्टेलिजेन्स ऑफ सरस्वती, शिशु मंदिर एण्ड इंग्लिश मीडियम स्कूलस टीचर्स, साइको लिंग्वा, वाल्यूम-41(1) पृष्ठ संख्या 46
8. हेनिंग, एस.आर. (2001) : द रिटेशनशिप बिटवीन सोसियल एण्ड इमोशनल इटेलीजेन्स इन चिल्ड्रेन, पी-एच.डी. थीसिस, टेन्सी यूनिवर्सिटी।
9. जायसवाल, विजय और गुप्ता, प्रियंका(2011)- नियमित शिक्षक, शिक्षिकाओं का शिक्षामित्रों के मानसिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में उनकी प्रभावशीलता का अध्ययन, संदर्भ, वाल्यूम-1(1) पृष्ठ संख्या 31-42
10. कौर, जसराज (2012)-इमोशनल इण्टेलिजेन्स इन रिटेशन टू डेमोग्राफिक बैरिबल्स, साइको लिंग्वा, वाल्यूम -41(1) पृष्ठ संख्या 90
11. कुकरेती, बलारी टी. एण्ड बलोदी, गीता (2011)-हेल्दी नार्सिसिज्म ऑर इमोशनल इण्टेलिजेन्स: ए च्वाइस फार लीडरशिप रोल्स, साइको लिंग्वा, वाल्यूम-41(2) पृष्ठ संख्या 122
12. कुमार, जी. एण्ड भाटिया, जे. (2006) : डेवलपिंग इमोशनल इटेलीजेन्स स्कूल, इण्डियन जर्नल ऑफ साइकोमेट्री एण्ड एजुकेशन, आई.पी.ई.आर.ए., पटना, वाल्यूम-37(1), पेज 47-511
13. क्रिक, ए. (2002) : इमोशनल इटेलीजेन्स, सोसियल कम्पेटेन्स इन हाईस्कूल स्टूडेंट्स, पी-एच.डी. थीसिस, वेस्टर्न केण्ट्यूकी यूनिवर्सिटी, बाउलिंग ग्रीन।
14. नन्दा, पी. एण्ड पान्नु, जी. (2005) : इमोशनल स्टेबिलिटी एण्ड सोसियो-पर्सनल फेक्टर्स; इण्डियन जर्नल ऑफ साइकोमेट्री एण्ड एजुकेशन।
15. पुरी, प्रेरणा और बरवा, अरविन्द कुमार (2012)-इमोशनल इण्टेलिजेन्स एण्ड सेल्फ कॉन्फिडेन्स ऑफ हास्टलर्स एण्ड डेस्कार्लर्स, साइको लिंग्वा, वाल्यूम-42(2) पृष्ठ संख्या 139
16. पैत्रा, स्वाती (2004) : इमोशनल इटेलीजेन्स इन एजुकेशन मैनेजमेंट, वाल्यूम-XXX, जर्नल ऑफ इण्डियन एजुकेशन, एन.सी.ई.आर.टी. पी.पी. 98-104।
17. पार्कर, जे.डी. (2002) : 'इमोशनल इटेलीजेन्स एण्ड ऐकेडमिक सक्सेस : एग्जेमाइनिंग द ट्रांजिशन फ्रॉम हाई स्कूल टू यूनिवर्सिटी', रिसर्च पेपर, साइकोलॉजिकल एसोसिएशन, बैंकापार।
18. रौतेला, कुनुमलता और गुलाटी, दीपा (2011) बी.एड. पाठ्यक्रम में अध्ययनरत विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि, संदर्भ, वाल्यूम-1(1) पृष्ठ संख्या 75-79
19. रील, सुशान्त कुमार (2004) -स्वायत्त तथा अस्वायत्त महाविद्यालयों के शिक्षक- शिक्षिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य तथा

- शिक्षण प्रभावशीलता का अध्ययन, जर्नल ऑफ इण्डियन एजुकेशन, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली, वॉल्यूम 29(2), पृ. 84-94
20. रेकर, डी. एण्ड पार्कर, जे.डी.ए. (2002) : "इमोशनल इंटेलीजेन्स, मूड एण्ड प्राब्लम बिहैवियर अन चिल्ड्रेन एण्ड एडोलसेण्ट्स", फेस्टर सेसन प्रजेण्टेड एट ए.पी.ए. 107वीं एनुअल कन्वेंशन, बोस्टन, एम.ए.।
21. रेड्डी, जी.एल. और अनुराधा, आर. विजय (2012)-इमोशनल इण्टेलिजेन्स एण्ड जॉब परफार्मेन्स ऑफ टीचर, साइको लिग्वा, वॉल्यूम-42(1) पृष्ठ संख्या-73
22. शनवाल, बी.के. (2003) : "ए स्टडी आफ कोरिलेटेड्स एण्ड नर्-चुरेंस ऑफ ई.आई. इन प्राइमरी स्कूल चिल्ड्रेन", पी-एच.डी. एजुकेशन, जामिया मिलिया इस्लामिया, न्यू देहली
23. सक्सेना, ज्योत्सना और सिंह, शिरीशपाल (2008)-माध्यमिक स्तर के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता एवं व्यवसायिक संतुष्टि, परिप्रेक्ष्य वर्ष 15, अंक 3, दिसम्बर पृ. 81-88

बच्चों के प्रति बढ़ते अपराध, प्रशासन के समक्ष गम्भीर चुनौती: एक अध्ययन

डॉ. अनिल कुमार पारीक

व्याख्याता, राजकीय महाविद्यालय, कोटा



shodhshree@gmail.com

कि सी भी समुदाय व राष्ट्र का भविष्य वहाँ के बच्चों के स्वाभाविक एवं स्वस्थ विकास पर निर्भर करता है। विलियम वर्ड्सवर्थ ने 'बच्चों को आदमी का पिता' की संज्ञा देकर उनके महत्व को उजागर किया है। इसलिए आवश्यक है कि बच्चों को असमय आने वाले संकटों से बचाया जाए। बच्चों के प्रति होने वाले अपराध बच्चों के साथ होने वाली सबसे बड़ी त्रासदी है। समाज में होने वाले अपराधों से सभी वर्ग प्रभावित होते हैं, तथापि बच्चों के प्रति अपराध उन्हें अन्य की तुलना में ज्यादा असहज, पीड़ित, व अपमानित करने का भाव उत्पन्न कर देता है। अपराध बच्चों से उनका बचपन छीन लेते हैं। एक बच्चे के प्रति अपराध घटित होने से अन्य अभिभावक अपने-अपने बच्चों का अत्यधिक पर्यवेक्षण करते हैं जिससे बच्चों का स्वाभाविक विकास अवरुद्ध हो जाता है। बच्चों के साथ होने वाले प्रमुख अपराधों में लिंग विभेद, पैतृ के लिए बच्चों का अपहरण, बच्चियों को अल्प आयु में वैश्यावृत्ति के लिए मजबूर करना, नाबालिग लड़कियों से यौन संबंध स्थापित करना, भ्रूण हत्या, बाल हत्या, बच्चों को भीख माँगने हेतु मजबूर करना, अनाथालय से बच्चे गोद लेना व फिर उनका त्याग कर देना, बाल श्रम, बच्चों से घरेलू मारपीट आदि प्रमुख हैं। अग्रलिखित सारणी में बच्चों के प्रति घटित आपराधिक घटनाओं की जानकारी प्रस्तुत की गई है।

वर्ष 2008-2012 के दौरान बच्चों के प्रति अपराध की घटनाएं
सारणी सं. - 1

क्रम सं.	अपराध शीर्ष	वर्ष					वर्ष 2011 की तुलना में 2012 में प्रतिशत अंतर
		2008	2009	2010	2011	2012	
1.	हत्या	1,296	1,488	1,408	1,451	1,597	10.1
2.	शिशु हत्या	140	63	100	63	81	28.6
3.	बलात्कार	5,446	5,368	5,484	7,112	8,541	20.1
4.	अपहरण और व्यपहरण	7,650	8,945	10,670	15,284	18,266	19.5

5.	भ्रूण हत्या	73	123	111	132	210	59.1
6.	आत्महत्या के लिए उकसाना	29	46	56	61	144	136.1
7.	अतिचार और परित्याग	864	857	725	700	821	17.3
8.	अव्यक्त बालिकाओं की खरीद	224	237	679	862	809	-6.1
9.	वैश्यावृत्ति के लिए बालिकाओं की खरीद	30	32	78	27	15	-44.4
10.	वैश्यावृत्ति के लिए बालिकाओं की बिक्री	49	57	130	113	108	-4.4
11.	अन्य अपराध (बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006 सहित)	6,699	6,985	7,253	7,293	7,580	3.9
	कुल	22,500	24,201	26,694	33,098	38,172	15.3

अपराध की घटनाएं: जैसाकि उपर्युक्त सारणी से देखा जा सकता है, वर्ष 2011 के दौरान 33,098 मामलों की तुलना में वर्ष 2012 के दौरान देश में बच्चों के प्रति अपराध के कुल 38,172 मामले सूचित किए गए थे, जो 15.3 प्रतिशत की वृद्धि का शोचक है। आईपीसी के तहत दर्ज अपराधों में, नाबालिग लड़कियों की खरीद-फरोख्त के तहत मामलों की संख्या वर्ष 2011 में 862 से घटकर वर्ष 2012 में 809 हो गई, जिसमें वर्ष 2011 की तुलना में 6.1 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई। वर्ष के दौरान अपहरण एवं व्यपहरण के मामलों में 19.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है (वर्ष 2011 में 15,284 से बढ़कर वर्ष 2012 में 18,266 हो गई)। राष्ट्रीय स्तर पर बच्चों के प्रति कुल अपराधों में से, उत्तर प्रदेश (6,033), मध्य प्रदेश (5,168), दिल्ली (4,462), महाराष्ट्र (3,456) और बिहार (2,894) का हिस्सा क्रमशः 15.8 प्रतिशत, 11.7 प्रतिशत, 9.5 प्रतिशत और 7.6 प्रतिशत था। वर्ष 2013 के दौरान 58224 मामले दर्ज किये गये जो 2013 में गत वर्ष की तुलना में 55.5 प्रतिशत अधिक है। इस दौरान मामलों में अत्यधिक वृद्धि, दण्ड विधि (संशोधन) अधिनियम, 2013 के लागू किये जाने से हुई है। इसके अन्तर्गत पुलिस द्वारा मामलों को दर्ज नहीं करना भारतीय दण्ड संहिता की धारा 166क के तहत दण्डनीय अपराध बनाया गया है। इसके अतिरिक्त गृह मंत्रालय ने दिनांक 25.6.2013 को लापता बच्चों के मामलों में अनिवार्य रूप से प्राथमिकी दर्ज किए जाने के संबंध में उच्चतम न्यायालय के निर्देशों के आधार पर सभी राज्यों/संघराज्य क्षेत्रों को परामर्शी पत्र जारी किया है।

बच्चों के प्रति अपराध के संबंध में किए गए उपाय निम्नानुसार हैं:-

➤ बचपन बचाओ आन्दोलन बनाम भारत संघ के संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के अनुसार सभी राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को लापता बच्चों के मामले में अनिवार्य रूप से एफआईआर दर्ज करने और उस पर तत्काल अनुवर्ती कार्रवाई करने के संबंध में दिनांक 25.06.2013 को परामर्शी पत्र जारी किया गया था।

- यौन अपराधों से बच्चों की सुरक्षा अधिनियम, 2012 के प्रमुख प्रावधानों के संबंध में दिनांक 28.05.2013 को एक परामर्शी पत्र जारी किया गया था, जिसमें राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों से उसे पूर्णरूपेण लागू करने का अनुरोध किया गया था।
- बच्चों के प्रति साइबर अपराध को रोकने और उसका मुकाबला करने के संबंध में दिनांक 04.01.2012 को एक परामर्शी पत्र जारी किया गया था, जिसमें राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को साइबर स्टार्किंग, साइबर बुलींग, बाल-अश्लीलता और यौन संबंधी सामग्री के प्रति एक्सपोजर आदि जैसे अपराधों का विशेष रूप से मुकाबला करने का परामर्श दिया गया था।
- बच्चों के प्रति अपराध के संबंध में सभी राज्य सरकारों और संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों को दिनांक 14.07.2010 को परामर्शी पत्र जारी किया गया था, जिसमें राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को स्कूलों/संस्थानों, विद्यार्थियों द्वारा प्रयोग किए जाने वाले सार्वजनिक बाहनों, बच्चों के पार्कों/खेलने के मैदानों, रिहाइशी इलाकों/सड़कों आदि में सुरक्षा की स्थितियों में सुधार करने के लिए समस्त उपाय करने का परामर्श दिया गया है। यह परामर्श भी दिया गया है कि अपराध की संभावना वाले क्षेत्रों की पहचान की जाए और विद्यार्थियों, विशेष रूप से लड़कियों की सुरक्षा एवं संरक्षा सुनिश्चित करने के लिए ऐसे क्षेत्रों में उद्घरणों की निगरानी करने के लिए एक तंत्र की स्थापना की जाए। राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को निम्नलिखित विशिष्ट उपाय करने का परामर्श दिया गया है:-

1. बीट कांस्टेबलों की संख्या में वृद्धि करना।
2. विशेष रूप से दूरस्थ एवं एकांत क्षेत्रों में पुलिस सहायता बूथ/कियोरक की संख्या में वृद्धि करना।
3. विशेष रूप से रात्रि के दौरान पुलिस गप्त बढ़ाना।
4. अपराध की संभावना वाले क्षेत्रों में पुलिस अवसरचना से पूर्ण रूपेण सज्जित पर्याप्त संख्या में पुलिस अधिकारियों, विशेष रूप

से महिला अधिकारियों की तैनाती करना।

गृह मंत्रालय ने लापता बच्चों का दुर्व्यापार रोकने और उनका पता लगाने के लिए आवश्यक उपायों के बारे में विशिष्ट निर्णय लिये हैं।¹⁰ राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को बच्चों के प्रति बलात्कार, यौन-शोषण, बाल-अश्लीलता, अंग व्यापार आदि जैसे किसी भी जघन्य अथवा संगठित अपराध को रोकने की सलाह दी गई है। राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को बच्चों का दुर्व्यापार रोकने और लापता बच्चों का पता लगाने के लिए विभिन्न आवश्यक उपायों के बारे में भी सलाह दी गई थी। इनमें से शामिल है: लापता बच्चों का पता लगाने को सुगम बनाने के लिए रिकार्डों का कम्प्यूटरीकरण, डी एन ए प्रोफाइल बनाना, गैर सरकारी संगठनों और अन्य संगठनों को शामिल करना, सामुदायिक जागरूकता कार्यक्रम आदि।

महिला और बाल विकास मंत्रालय, गृह मंत्रालय के परामर्ष से "लापता" और "पाए गए" बच्चों का पता लगाने के लिए एक राष्ट्रीय पोर्टल विकसित कर रहा है। इस परियोजना में लापता बच्चों का पता लगाने और पाए गए बच्चों के लिए एक विशिष्ट वेबसाइट बनाने की परिकल्पना की गई है। इसमें 'लापता' और 'पाए गए' सेवशन सहित दो भाग बनाए गए हैं जिसमें शारीरिक विशेषताएं, लापता होने/पाए जाने का स्थल, विशेष पहचान चिन्ह आदि जैसे प्रत्येक बच्चे के डेटाबेस में रखे जाएंगे। सर्व इंजिन सहित विशेष सॉफ्टवेयर विकसित किया जा रहा है और यह पाए गए बच्चों की पहचान को सुकर बनाने के लिए डेटाबेस के अंदर पैरामीटरों का मिलान कर सकता है। इसे www.trackthemissingchild.gov.in पर देखा जा सकता है।¹⁰

गृह मंत्रालय ने बच्चों के प्रति अपराध की घटनाओं पर अंकुश लगाने के लिये विधान एवं कार्यान्वयन अभिकरणों को सुदृढ़ करने हेतु अनेक उपाय किये हैं। दण्ड विधी संशोधन अधिनियम, 2013, दिनांक 3 फरवरी, 2013 से लागू है।¹¹ दिनांक 14 नवम्बर 2012 से लागू यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण (पीओसीएसओ) अधिनियम 2012, यौन उत्पीड़न और शोषण से बच्चों की सुरक्षा के संबंध में विशिष्ट अधिनियम है।¹² उपर्युक्त के अतिरिक्त बच्चों के प्रति होने वाले अपराधों से बचाव के संबंध में कई अन्य विशिष्ट विधान हैं, जो निम्नलिखित हैं¹³ -

- किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000
 - बाल श्रम निषेध अधिनियम, 1986
 - बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006
 - अनैतिक व्यापार(निवारण) अधिनियम, 1956
 - बाल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 2005
 - बंधुआ मजदूर प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1976 आदि।
- इन विधानों में बच्चों के प्रति अपराधों से संबंधित सभी पहलू व्यापक रूप से शामिल हैं।

निष्कर्ष :-

बच्चे ईश्वर की एक अद्वितीय कृति हैं। इनके अभाव में सृष्टि की कल्पना भी नहीं की जा सकती। बच्चों की चंचलता सभी को मनोहारी लगती है। भारत का संविधान सभी को समान अधिकार प्रदान करता है, लेकिन इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि बच्चों के विरुद्ध होने वाले अपराधों के प्रभाव से ही ये विकास व सामाजिक दृष्टि से आगे चलकर अपने साथियों से पीछे रह जाते हैं। बच्चों की सुरक्षा के लिए सरकार प्रयासरत है लेकिन सामाजिक समस्याओं का पूर्ण समाधान मात्र राजनीतिक एवं प्रशासनिक पहल से नहीं हो सकता वरन् इस हेतु सामाजिक पहल अत्यावश्यक है। इस हेतु पूर्ण मनोयोग से सम्पूर्ण समाज को उठ खड़ा होना होगा। तभी हम एक सभ्य समाज व उन्नत राष्ट्र का निर्माण कर पाने में सक्षम हो पाएंगे एवं बच्चों की गरिमा, सम्मान व निर्भिक वातावरण से सुशासन की राह आसान होगी। अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि वर्तमान व्यवस्था की चुनौतियों का सामना करने के लिए एक अधिक अनुशासित एवं उत्तरदायी तंत्र का निर्माण किया जाए।

संदर्भग्रंथ सूची-

1. पाण्डेय, एस. एस., (2012), समाजशास्त्र, पृष्ठ-17.9, नई दिल्ली, टाटा मैकमिलान हिल।
2. <http://www.mha.nic.in> (अपराध परिदृश्य में उपलब्ध नवीनतम आंकड़ों का उपयोग किया गया है।)
3. अतारांकित प्रश्न संख्या, 2199 (30.7.2014) (राज्य सभा), गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
4. वही।
5. वही।
6. वार्षिक प्रतिवेदन (2013-14), गृह मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ सं.-74, नई दिल्ली।
7. वही।
8. वही।
9. वही।
10. वही।
11. अतारांकित प्रश्न संख्या, 2199 (30.7.2014) (राज्य सभा), गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
12. वही।
13. वही।

सांस्थानिक धर्म व स्मार्त व्यवस्था और भक्ति आन्दोलन के प्रतिवादी स्वर

अमित कुमार रँकवार

शोधार्थी, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर



shodhshree@gmail.com

भारतीय परम्परा में मनुष्य का प्रमुख लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है। जीवन-मरण के क्रम से किस प्रकार मुक्ति प्राप्त की जाय इसका अन्वेषण ही भारतीय दर्शन और व्यवहार के मूल में एक जीवन्त परम्परा के रूप में विद्यमान रहा है। मध्यकाल में मुक्ति के लिए भारतीय समाज में भक्ति के मार्ग को अपनाने पर अधिक बल दिया गया। पारश्चात्य विद्वान वेबर के अनुसार मोक्ष का साधन भक्ति विदेशी प्रभाव की देन है। भारत वर्ष में इसका प्रवेश ईसाई धर्म के साथ हुआ। वेबर की इस धारणा को सत्य नहीं माना जा सकता क्योंकि अवधारणा के स्तर पर यह माना जाता है कि रहस्यवादी अथवा कृपा (प्रसाद) के दर्शन पर आधारित कोई भी प्रत्यय, किसी भी देश अथवा क्षेत्र के लिए अनोखा नहीं होता बल्कि यह विभिन्न देशों और क्षेत्रों में प्रचलित ठोस परिस्थितियों के आधार पर वह स्वतन्त्र रूप से विकसित हो सकता है।

धर्म एवं भक्ति का उद्गम सर्वप्रथम व्यक्ति के हृदय में होता है। धर्म आदिशक्ति के संबंध में आध्यात्मिक अनुसंधान है। इसके माध्यम से मनुष्य आदिशक्ति के विषय में ज्ञान प्राप्त कर उसका रहस्योद्घाटन करता है। भक्ति एक सार्वभौमिक तत्त्व है जो परम चेतना के प्रतिबिम्ब के रूप में मानव चित्तवृत्ति में रहता है। भक्ति मानव की एक स्वाभाविक अनुभूति है। प्रत्यय के रूप में भक्ति के तीन आयाम हैं - सैद्धान्तिक, भावनात्मक, तथा व्यावहारिक। सैद्धान्तिक रूप से भक्ति ईश्वर तथा भवत के सम्बन्धों के सिद्धान्त का निरूपण है, भावनात्मक दृष्टि से ईश्वर तथा मनुष्य के मध्य विभिन्न सम्बन्धों की अनुभूति तथा रसानुभूति है तथा व्यावहारिक तौर पर यह आराधना की विधियों, नैतिक तथा आध्यात्मिक चरित्र को परिभाषित करती है।

बीज रूप में भक्ति प्रागैदिक धारा है और आन्दोलन रूप में भी यह कम से कम बौद्धमत जितनी ही प्राचीन है। वैदिक ऋचाओं में भक्ति का सैद्धान्तिक निरूपण नहीं है लेकिन उसके अन्य आवश्यक तत्त्व विद्यमान हैं। वेदों के अधिकांश सूक्त प्रायः देवस्तुतियों हैं। उपनिषदों में भी ब्रह्म का उल्लेख परमतत्त्व के रूप में हुआ है। उपनिषदों में ब्रह्म के दो रूप उल्लिखित हैं - परब्रह्म (निर्गुण रूप) तथा अपर ब्रह्म (सगुण रूप)। साधारणतः इन्हें मूर्त एवं अमूर्त भी कहा जाता है। बाद के युगों में इन दोनों रूपों की उपासना का ही सतत् विकास दिखाई देता है। भक्ति का दार्शनिक विकास गीता तथा श्रीमद्भागवत में देखा जा सकता है।

सम्भवतः एक सगुण ईश्वर की आराधना का विचार बौद्ध धर्म की बढ़ती लोकप्रियता के साथ विकसित हुआ। ईस्वी सन् की आरम्भिक सदियों में महायान बौद्धमत में बुद्ध की पूजा उनके 'अवलोकित' रूप में की जाने लगी। लगभग उसी समय में विष्णु की पूजा का आरम्भ हुआ। गुप्तकाल में जब रामायण और महाभारत जैसे अनेक धर्मग्रन्थों का सम्पादन हुआ, तो कर्मा - कर्मा कुछ और बातें जोड़कर ज्ञान और कर्म के साथ भक्ति को भी मुक्ति के एक मार्ग के रूप में स्वीकार कर लिया गया। लेकिन भक्ति का वास्तविक विकास पांचवी - छठी ईस्वी में दक्षिण भारत में हुआ, जिसका श्रेय आलवार एवं नयनारों को है। दक्षिण भारत में शैव नयनार और वैष्णव आलवार वास्तव में सरल हृदय भवत थे न कि दर्शन और धर्मशास्त्र के पण्डित। नयनारों और आलवारों ने जैनियों और बौद्धों द्वारा प्रचारित कठोर जीवन को अस्वीकार कर दिया तथा मुक्ति के लिए ईश्वर की वैयक्तिक भक्ति पर जोर दिया। उन्होंने जाति प्रथा की कठोरताओं की उपेक्षा की तथा दक्षिण भारत के विभिन्न भागों में स्थानीय भाषाओं का उपयोग करते हुए प्रेम और ईश्वर की वैयक्तिक भक्ति के संदेश का प्रचार किया।

मध्य युगीन भारतीय वातावरण में एक नई स्फूर्ति, आत्मविश्वास तथा आशा के संचार की आवश्यकता थी। ऐसी स्थिति में अनेक हिन्दू संतों एवं सुधारकों ने अपने ढंग से इन समस्याओं पर विचार किया। मध्य युगीन भारतीय संस्कृति को उर्जावित करके उसे जन-जीवन की निष्ठाओं के अनुरूप अग्रसर करने में तत्कालीन भक्ति आन्दोलन का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। डॉ. यूसुफ हुसैन के अनुसार भक्ति आन्दोलन रुढ़िवादी, सामाजिक तथा धार्मिक विचारों के विरुद्ध हृदय की प्रतिक्रिया तथा भावों का उद्धार है। भारतीय परिवेश में भक्ति आन्दोलन का विकास इन्हीं परिस्थितियों का परिणाम है। भक्ति आन्दोलन का प्रारम्भ महान् धर्म सुधारक शंकराचार्य के समय से माना जाता है। मध्य युगीन भक्ति आन्दोलन को दो चरणों में विभक्त किया जा सकता है - प्रथम चरण भगवद्गीता के काल से तेरहवीं सदी तक, जब इस्लाम का प्रवेश भारत वर्ष में हो चुका था। इस काल में भक्ति का सम्बन्ध व्यक्तिगत भाव से था। द्वितीय चरण तेरहवीं सदी से सोलहवीं सदी तक के काल को माना जाता है। इस काल में इस्लाम तथा हिन्दू धर्म के पारस्परिक सम्बन्धों के फलस्वरूप नवीन विचारों का प्रस्फुटन हुआ। ऐतिहासिक तथा सामाजिक समस्याओं पर लोगों ने गम्भीरता से विचार करना प्रारम्भ किया। वेद के उपदेशों पर तर्क तथा समाज पर ब्राह्मणों के प्रभुत्व के विषय में अनेक प्रश्नों को उठाया गया। यद्यपि भक्ति आन्दोलन की चिनगारी दक्षिण भारत में सुलगी थी, परन्तु इसकी प्रज्वलित लपटें थोड़े समय में ही सम्पूर्ण भारत में फैल गईं। आलवारों का भक्तिवाद जन साधारण की चीज था जो क्रमशः शास्त्र का सहारा पाकर सम्पूर्ण भारतवर्ष में फैल गया। वस्तुतः भक्ति आन्दोलन समाज सुधार के लिए जन आन्दोलन था।

भक्ति आन्दोलन के संतों ने अपने जो विचार एवं सिद्धान्त जनता के सामने रखे वे यद्यपि एक जैसे नहीं थे, किन्तु फिर भी उनके विचारों में मौलिक समानता विद्यमान थी। भक्ति आन्दोलन के संत धर्म सुधारक होने के साथ-साथ समाज सुधारक भी थे। उन्होंने तत्कालीन समाज व्यवस्था में व्याप्त अनेकों प्रकार की कुरीतियों एवं बुराईयों की कटु आलोचना की। मध्यकाल में भक्ति का चरम विकास देखने को मिलता है। इस समय भक्ति आन्दोलन की परम्परा दो रूपों में देखी जा सकती है - (1) आचार्य परम्परा (2) संत परम्परा। आचार्य परम्परा में शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, बल्लभाचार्य आदि आचार्यों ने भक्ति को एक सुदृढ़ दार्शनिक आधार प्रदान किया जिससे उसको भावनात्मक अतिरिजना से बचाया जा सके तथा संत परम्परा में कबीर, सूरदास, तुलसीदास, ज्ञानदेव, नामदेव, गुरुनानक आदि संतों ने स्वयं के आध्यात्मिक अनुभव के द्वारा भक्ति की परम्परा को आगे बढ़ाने के साथ-साथ प्रचलित समाज व्यवस्था के दोषों को भी उद्घाटित किया।

भक्ति आन्दोलन के अन्तर्गत समाज सुधार आन्दोलन रामानुजाचार्य की देन है। रामानुज महान् दार्शनिक होने के साथ ही एक महान् समाज सुधारक भी थे। रामानुजकालीन इस्लाम की उदारवादी सामाजिक व्यवस्था पद दलित शूद्रों को धर्म परिवर्तन तथा स्वतन्त्र वातावरण की ओर आकृष्ट कर रही थी। धर्म परिवर्तन से शूद्रों की रक्षा करना उन्होंने समाज सुधार का लक्ष्य बनाया। पिह्लई तथा उरंगविलिदास आदि शूद्रों को अपना शिष्य बनाकर रामानुज ने भावी समाज सुधारकों का पथ प्रदर्शन किया। वर्ष में एक बार शूद्रों को मन्दिर में ले जाकर उन्हें भगवत् दर्शन का अवसर दिया। मन्दिर पर्व को प्रारम्भ कर तथा ब्राह्मणोत्तर

लोगों को मन्दिरों में आराधना का अधिकार देकर रामानुज ने दक्षिण भारत में समाज-सुधार आन्दोलन का शंखनाद किया।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्रों को भक्ति के रंगमंच पर एक साथ लाकर उन्होंने हिन्दू समाज की प्रशंसनीय सेवा की। एक ओर प्राचीन हिन्दू सामाजिक व्यवस्था को यथावत् रखकर ब्राह्मणों को संतुष्ट किया तथा दूसरी ओर भक्ति के क्षेत्र में शूद्रों को भगवत् दर्शन तथा मोक्ष प्राप्ति का अधिकार देकर इस्लाम धर्म स्वीकार करने से रोका। रामानुज ने समाज सुधार आन्दोलन का बीज बोया, जो आगे चलकर कबीर, नानक, चैतन्य, राजा राममोहन राय तथा गाँधी जी के हाथों में पल्लवित तथा फलित हुआ। रामानुज के शिष्य रामानन्द संस्कृत के पण्डित, उच्च ब्राह्मणकुलोत्पन्न तथा एक प्रभावशाली सम्प्रदाय के भावी गुरु थे। परन्तु उन्होंने सबका परित्याग कर दिया। रामानन्द ने समाज के चारों वर्गों को अपने भक्ति मार्ग का उपदेश दिया। उन्होंने विभिन्न जातियों के लोगों के साथ मिलकर भोजन पकाने और साथ भोजन करने पर लगे प्रतिबन्ध की उपेक्षा की। उन्होंने रैदास (मोची), कबीर (जुलाहा), धन्ना (जाट), सेना (नार्द), पीपा (राजपूत) आदि को अपना शिष्य बिना जातिगत भेदभाव के बनाया। रामानन्द की लोकप्रियता का एक कारण यह भी था कि उन्होंने अपने उपदेशों का प्रचार क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से किया।

रामानन्द की धार्मिक सुधारों की प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप मुसलमानों और हिन्दुओं में निकटता भाव पैदा हुआ। जात-पाँत की विषमताओं में शिथिलता आई और वर्ग भेद की बढ़ती हुई धारणाएँ उन्मूलित हुईं। उनके विचारों को हिन्दू, मुसलमान दोनों धर्मों के अनुयायियों ने व्यापक रूप से अपनाया। दलितों तथा नारी वर्ग पर भी उसकी प्रतिक्रिया हुई। सिक्ख भी उसके प्रभाव से अछूते न रहे उन्होंने भी अपने 'आदिग्रन्थ' की पवित्र वाणियों में रामानन्द के पदों को संकलित किया। वास्तविकता यह है कि समस्त भारतीय जनता को प्रभावित करने और नये धार्मिक जागरण से जन-जन के मानस को आन्दोलित करने में रामानन्द की वाणी ने अभूतपूर्व कार्य किया।

जिन लोगों ने तत्कालीन समाज व्यवस्था की सबसे कटु आलोचना की तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता की जोरदार पैरवी की, उनमें कबीर और नानक के नाम विख्यात हैं। कबीर ने घूम-घूम कर यह उपदेश दिया कि हिन्दुओं के राम तथा मुस्लिमानों के खुदा सब एक ही परमतत्त्व के भिन्न-भिन्न नाम हैं। कबीर के युग में परस्पर दो धर्मों, संस्कृतियों एवं सभ्यताओं का संघर्ष था। कबीर मानवतावादी विचारधारा के प्रति आस्थावान थे। वे वर्ग संघर्ष के विरोधी थे तथा समाज के बीच शोषक-शोषित का भेद मिटाकर साम्य स्थापित करना चाहते थे। जीवनपर्यन्त कबीर समाज को समझाते रहे कि जन्म से सभी मनुष्य समान हैं। कबीर ने युग-युग से प्रताड़ित, पीड़ित समाज के निम्न वर्ग को अपनी ओजस्वी वाणी द्वारा ऊपर उठाया तथा उनमें आत्म-सम्मान जगाकर एक नई आशा व विश्वास पैदा किया।

रामानन्द और कबीर ने गुरुनानक के धार्मिक और सामाजिक सुधारों की पृष्ठभूमि पहले ही तैयार कर दी थी। नानक का नया धर्म चलाने का कोई इरादा नहीं था। हिन्दू-मुस्लिम संप्रदायों में समन्वय की स्थापना तथा अपने अधिकारों से वंचित शूद्रों की स्थिति में सुधार के अतिरिक्त स्थितियों की स्थिति में सुधार लाना नानक का मुख्य उद्देश्य था। गुरुनानक ने स्पष्ट लिखा है कि उनके समय में लोगों की दृष्टि में स्थितियों का स्थान गिरा हुआ था। वेद शास्त्र के अध्ययन से वंचित होकर

उन्हें गृह परिचर्या में ही सन्तोष करना पड़ता था। अतः उन्होंने हिन्दू जाति में उपेक्षित नारी को गौरव के आसन पर प्रतिष्ठित करने की चेष्टा की। नानक ने अपने धर्म में स्त्रियों के खोये अधिकारों को वापस दिया। नानक के अनुसार स्त्री द्वारा हम गर्भ में धारण किये जाते हैं, और उसी से जन्म लेते हैं। उसी से हमारी जीवन पर्यन्त मैत्री है। उसी से सृष्टि कर्म चलता है। स्त्री हमें सामाजिक बन्धन में रखती है। फिर हम उस स्त्री को मन्द क्यों कहें, जिससे महान पुरुष जन्म लेते हैं। इस प्रकार नानक ने आध्यात्मिक साधनाओं और जीवन के अन्य क्षेत्रों में स्त्रियों की समानता पर बल दिया। नानक के अतिरिक्त अन्य आचार्यों एवं संतों ने स्त्रियों की दयनीय दशा के विरुद्ध अपनी आवाज मुखर की, तथा समाज में स्त्री-पुरुष साम्यता पर बल दिया। इनमें बल्लभाचार्य, मध्वाचार्य, तुलसीदास आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। बल्लभाचार्य का स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण वैदिक-कालीन सामाजिक अवस्था पर आधारित था। बल्लभाचार्य तथा उनके सुपुत्र विट्ठलेश ने अन्तरजातीय विवाह को प्रोत्साहन दिया। शूद्र कन्याओं का राजपूतों से उन्होंने विवाह कराया। उनके अतिरिक्त तुलसीदास ने भी समाज में स्त्री तथा पुरुष के प्रति समान दृष्टिकोण अपनाये जाने पर बल दिया। कतिपय आलोचकों के अनुसार तुलसीदास का दृष्टिकोण स्त्रियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण नहीं था। महात्मा गाँधी ने भी कहा है कि तुलसीदास ने स्त्रियों के प्रति अन्याय किया है। गाँधी द्वारा तुलसीदास की आलोचना तर्कसंगत प्रतीत नहीं होती क्योंकि तुलसीदास ने केवल उन्हीं स्त्रियों की आलोचना की है, जो पारिवारिक तथा सामाजिक मर्यादा को तोड़ना चाहती थी। अन्यथा उनका दृष्टिकोण स्त्रियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण रहा है। उदाहरण के लिए तुलसीदास ने लिखा भी है कि - राम भगति रत नर अरु नारि। सकल परम गति के अधिकारी।। भक्ति आन्दोलन की भावधारा को अनवरत रूप से बढ़ाने में अनेकों संतों का योगदान रहा है, इनमें घन्ना, सेना, पीपा, रैदास, नामदेव, ज्ञानदेव, दादू आदि उल्लेखनीय हैं। जो समाज की विभिन्न जातियों में पैदा हुए तथा इनमें से अधिकांश दलित वर्ग से सम्बद्ध थे। भक्ति आन्दोलन के प्रसार में स्त्रियों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। धर्म तथा समाज के क्षेत्र में उनका योगदान महत्वपूर्ण है। कश्मीर की शैव योगिनी लह्ला, पीपा की रानी सीता, महाराष्ट्र की जनबाई, राजस्थान की मीराबाई, संत दयाबाई, सहजोबाई आदि महिला संतों ने भक्ति आन्दोलन के विकास में प्रशंसनीय कार्य किया। इनकी उपलब्धियों के अनेक उदाहरण संत साहित्य में उपलब्ध हैं। इस प्रकार सामाजिक दृष्टि से भक्ति आन्दोलन की भूमिका बहुत व्यापक थी। कतिपय विद्वानों के अनुसार इसके द्वारा सामाजिक समानता की अवधारणा घोषित की गई, जबकि कुछ अन्य विद्वानों के मत में यह तत्कालीन ऐतिहासिक परिस्थितियों की अभिव्यक्ति थी। भक्ति के कारण भारतीय कलाओं को भी एक सुदृढ़ आधार प्राप्त हुआ। व्यक्तिगत देवता के रूप में कलाकारों ने अर्चा रूप में अनेक देव प्रतिमाओं में देव रूपों को प्रकट किया। देवमूर्तियों के लिए देवाल्यों के निर्माण से भारतीय वास्तुकला का अपूर्व विकास हुआ। वस्तुतः भक्ति के सामाजिक प्रभावों को कला तथा साहित्य के विकास, दर्शन की परिपक्वता, सामाजिक जीवन में प्रशासक वर्ग अथवा विदेशी शासकों द्वारा दी गयी यातनाओं को सहने की शक्ति तथा तत्कालीन समाज के संगठन की पुष्टभूमि में देखा जाना चाहिए। वर्ण व्यवस्था, सामाजिक समानता, स्त्रियों की स्थिति, साम्प्रदायिकता से परे होने की भावना,

सामूहिक व सामाजिक एकता के प्रयत्न ऐसे तत्त्व थे जिनको भक्ति आन्दोलन के संतों व आचार्यों द्वारा समाज के पटल पर रखने के प्रयत्न किये गये।

देश में ईसा पूर्व छठी और ईसा के बाद दूसरी सदियों के मध्य बौद्ध धर्म के उदय और विकास के बाद मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन भारत का सर्वाधिक व्यापक और बहुआयामी आन्दोलन था। भक्ति आन्दोलन ने समय-समय पर लगभग सम्पूर्ण देश को प्रभावित किया। भक्ति आन्दोलन का धार्मिक सिद्धान्तों, धार्मिक अनुष्ठानों, नैतिक मूल्यों तथा लोकप्रिय विश्वासों पर ही नहीं बल्कि कलाओं और संस्कृति पर भी निर्णायक प्रभाव पड़ा। इस आन्दोलन ने मध्यकालीन राज्य और शासक वर्गों के नैतिक ढांचे पर भी अपना प्रभाव डाला।

भक्ति आन्दोलन के आचार्यों एवं संतों ने आज से लगभग साढ़े पाँच सौ वर्ष पूर्व जिस धार्मिक जागरण का सूत्रपात किया, उसने उत्तरोत्तर राष्ट्रियता का पथ आलोकित किया। वर्तमान भारत की धर्मनिरपेक्षता वस्तुतः अतीतकाल से चले आ रहे संत मत की समानता एवं एकता का ही सुपरिणाम तथा रुपान्तरण है। मानव मात्र में समानता स्थापित करने और सबको आत्मोन्नति की पूरी स्वतन्त्रता प्रदान करने में आचार्यों एवं संतों के आन्दोलन ने जिस सार्वभौम धर्म की प्रतिष्ठा की वही आज के भारत का समाजवाद है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. श्रीवास्तव, कन्हैयालाल व चौबे झारखण्ड, मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति, पृ. 313, उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1990.
2. चन्द्र, सतीश, मध्यकालीन भारत में इतिहासलेखन, धर्म और राज्य का स्वरूप, पृ. 86, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, 2013.
3. श्रीवास्तव, कन्हैयालाल व चौबे झारखण्ड, पूर्वोक्त, पृ. 312.
4. दिनकर, रामधारीसिंह, संस्कृति के चार अध्याय, पृ. 311, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009.
5. मजूमदार, आर.सी., (सं.), श्रेष्ठ युग, पृ. 370, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1984.
6. चन्द्र, सतीश, मध्यकालीन भारत : राजनीति, समाज और संस्कृति, (आठवीं से सत्रहवीं सदी तक), पृ. 185 ओरियंट ब्लैकस्वॉर, नई दिल्ली, 2010.
7. गैरोला, वाचस्पति, भारतीय संस्कृति और कला, पृ. 508, उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1985.
8. शर्मा, के.जी. व जैन, एच.सी., भारत का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास (प्रारम्भ से 1526 ई. तक) भाग-प्रथम, पृ. 589, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2010.
9. श्रीवास्तव, कन्हैयालाल व चौबे झारखण्ड, पूर्वोक्त, पृ. 317.
10. गुप्त, शिवकुमार, भारतीय संस्कृति के मूल आधार, पृ. 178, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2009.
11. श्रीवास्तव, कन्हैयालाल व चौबे झारखण्ड, पूर्वोक्त, पृ. 323.
12. चन्द्र, सतीश, पूर्वोक्त, पृ. 185.
13. सिंह, तेजा, एसेज इन सिखिज्म, पृ. 12-13, लैंग्वेज डिपार्टमेन्ट, यूनीवर्सिटी ऑफ मिशिगन, 1988.
14. शाह, जे.सी., श्रीमद्वल्लभाचार्य : हिज फिलॉसफी एण्ड रिलीजन, पृ. 275, पुष्टिमार्ग पुस्तकालय, नादियाड, 1969.
15. गुप्त, शिवकुमार, पूर्वोक्त, पृ. 190 - 193.
16. चन्द्र, सतीश, मध्यकालीन भारत में इतिहासलेखन, धर्म और राज्य का स्वरूप, पृ. 83, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, 2013.

खुम्माणरासो के आधार पर बापा रावल का मूल्यांकन

डॉ. सुशीला शक्तावत

एसोसिएट प्रोफेसर, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर



shodhshree@gmail.com

खुम्माण रासो की रचना एक जैन वति दलपति विजय ने वि.स.1770(1713 ई.) में की थी। इसमें बापा रावल से महाराणा राजसिंह तक के मेवाड़ के राणाओं का इतिहास वर्णित है। इस ग्रन्थ में कुल आठ खण्ड हैं। पहले खण्ड में मेवाड़ में गुहिलोत वंश के संस्थापक बापा रावल का वर्णन है। दूसरे, तीसरे और चौथे में खुम्माण का चरित्र वर्णित हुआ है। पाँचवें खण्ड में आलण्सी समरसी और राहप का वर्णन है। छठे खण्ड में पद्मिनी और गोरा बादल की कथा का विस्तृत वर्णन पाया जाता है। सातवें खण्ड में महाराणा हम्मौर से महाराणा सांगा तक मेवाड़ के इतिहास का सक्षिप्त वर्णन हुआ है। आठवां खण्ड खण्डित है। इसमें महाराणा रतन सिंह से महाराणा राजसिंह के राजसमुद्र बांध तक का वर्णन पाया जाता है। इससे आगे के पत्र लुप्त हो गये हैं। इसमें खण्डित प्रति की छंद संख्या 3675 है। अभी तक इसकी केवल दो ही प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं। इनमें से एक भंडारकर औरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पुना में विद्यमान है और दूसरी रॉयल एशियाटिक सोसायटी, लंदन के संग्रहालय में है, जिसे कर्नल जेम्स टॉड अपने साथ ले गये थे और एक संस्था को भेंट कर दिया था। इसकी एक फोटो कॉपी रघुवीर सिंह पुस्तकालय, सीतामऊ में है। देवस्तुति और चितौड़ के वर्णन के पश्चात कवि सूर्यवंश की वंशावली प्रारंभ करना है। जिसमें ब्रह्मा से गुहिलोत तक होने वाले राजाओं का नामालेख होता है। ये राजा रघुवंशी कहलाये और उन्होंने गाजणगढ़ में अपना राज्य स्थापित किया। गुहिलोत के चौबीस पुत्र हुए जिनमें गहलोत की चौबीस शाखाओं की उत्पत्ति हुई। गहलोत के पुत्र का नाम पंजर था जिसे बापा का जन्म हुआ।

एक बार यवनो के गाजणगढ़ पर आक्रमण किया। भयंकर युद्ध हुआ जिसमें सब गुहिलोत सामन्त मारे गये। केवल एक गर्भवती रानी बची जो यवनो के भय से मेवाड़ में चली आई और नागदा में एक ब्राह्मण के घर रहने लगी। कुछ दिन पश्चात उसके गर्भ से बापा का जन्म हुआ। आठ वर्ष की आयु तक बापा गायें चराता था। एक दिन गिरिकंदरा में उसकी भेंट हारीत ऋषि से हो गई। उसने बापा के भक्ति-भाव से प्रसन्न होकर उसके पास अविचल राज्य बने रहने का वरदान दिया। इसी प्रकार देवी ने भी उसकी सच्चरित्रता की परीक्षा लेकर दिव्यार्यों से उसकी रक्षा करने का वचन दिया। हारीत ऋषि के आदेश से बापा शिवजी की आराधना करने लगा। एक दिन उनकी प्रेरणा से वह चितौड़ की ओर गया जहाँ चित्रमोरी राज्य करता था। बापा उसकी सभा में पहुँचा और उसने उसे प्रति दिन एक लाख रुपये देकर अपना सामन्त बना लिया।

एक बार द्रोणीगिरि के दुर्दान्त नामक दैत्य ने चितौड़ पर आक्रमण किया बापा के साथ ईर्ष्याभाव होने से अन्य सामन्तो ने उससे लड़ना अस्वीकार किया। तब बापा उससे युद्ध करने के लिये भेजा गया। सामन्त भी लज्जित होकर उसके साथ हो गये। भयंकर युद्ध हुआ जिसमें दुर्दान्त पराजित हुआ। देवी शक्तियों ने भी बापा की ओर से युद्ध में भाग लिया। बापा ने शत्रु के दुर्ग पर अधिकार कर उसकी पुत्री के साथ वैदिक रीति से विवाह किया। लौटते समय मार्ग में उसने अपने पैतृक राज्य गाजणगढ़ पर आक्रमण कर तत्कालीन दुर्गपती सलेमशाह को तलवार के घाट उतारा और गाजणगढ़ पर अपना अधिकार कर लिया। इस विजयी से यवन देश कांप उठे और

उन्होंने बापा की अधीनता स्वीकार कर ली।

तदनन्तर बापा ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया और चित्रमोरी को मारकर चित्तौड़ पर अपना अधिकार स्थापित किया और उसकी 27 पुत्रियों के साथ विवाह किया। तदनन्तर सोलह वर्ष की आयु में वह राजसिंहासन पर बैठा और संवत् 491, वैशाख शुक्ल पंचमी गुरुवार पुष्य नक्षत्र में उसका चित्तौड़ में राज्यभिषेक हुआ। राजसिंहासनासीन होकर बापा ने नागदह में कई शिवालय और जैन मंदिर बनाये और ब्राह्मण, चारण एवं भाटों को अतुल दान दिया। उसने अपनी माता तथा रानियों के साथ कई स्वर्ण तथा रजत तुलायें दान की और कई आसण, मठ, और गुरुपीठ स्थापित किये। उसकी सभा में क्षत्रियों के छात्सीस ही कुलों के राजा सेवामें उपस्थित रहते थे। बापा के बावन पुत्र हुए जिनमें बाला सबसे बड़ा था। शस्त्र-शास्त्रों का अभ्यास कर जब वह योग्य हुआ तो बापा उसे राज्य सौंप काशी चला गया और गंगा के किनारे रहने लगा। वहाँ उसने कई अश्वमेध यज्ञ किये।

मेवाड़ का राजवंश बहुत प्राचीन है। इस काल का कोई प्रामाणिक वृत्तान्त उपलब्ध नहीं होने से उस समय का इतिहास अधिकांश जतश्रुतियों से बना हुआ है जिनके कई मनगढ़ंत और कल्पित बातों का भी समावेश हो सकता है। उस समय के दाना-पात्रो और शिलालेखों से राजाओं के नाम या उनका राजत्वकाल विदित हो सकता है, पूरा इतिहास नहीं जाना जा सकता। खुम्माण-रास भी इसी प्रकार की जनश्रुतियों से बना हुआ एक काव्य है जिसकी रचना इस काल से बहुत पीछे अठारहवीं शती में हुई भी। इससे उसमें कई अनैतिहासिक बातों का समावेश हो जाना संभव है जिसे परीक्षा किये बिना वे अक्षरशः स्वीकार नहीं किया जा सकता।

बापा से रत्नसिंह तक

वंशावली के इस भाग में बहुत गड़बड़ी है। शिलालेखों के अनुसार कविराजा ने बापा से रत्नसिंह तक के 32 राजाओं के नाम दिये हैं और ओझाजी ने बीच-बीच में 9 नाम और खोज निकाले हैं इस प्रकार ओझाजी ने 41 नाम दिये हैं। कविराजा ने रत्नसिंह के पश्चात कर्णसिंह का नाम दिया है जिसे ओझाजी ने पहले होना माना है। इस प्रकार कविराजा की सूची में 33 नाम हैं और ओझा जी की सूची में 49 हैं। खुम्माणरास में वंशावली इस भाग में 45 नाम गिनाये गये हैं जिनमें 15 नाम तो दोनो सूचियों से मिल जाते हैं। मिलने वाले राजाओं के नाम भी अपने सही क्रम पर नहीं हैं। तीनों वंशावलियों परिशिष्ट खंड 1, भाग (ख) के अन्तर्गत दिखाई गई है। विशेष के अन्तर्गत खुम्माणरास में दोनो सूचियों से मिलने वाले राजाओं के नाम तथा उनका सही क्रम उनके आगे संख्या लगा कर दिखाया जाता है। वंशावली का वह भाग पूर्णतया सही है सभी में एक से नाम पाये जाते हैं जो परिशिष्ट खंड 1- भाग (घ) के अन्तर्गत दिखाये गये हैं।

मेवाड़ में आने से पूर्व गुहिलों का राज्य

खुम्माणरास में उल्लेख है कि रघुवंशी राजाओं की राजधानी पहले कोसल थी। गुहिल ने वहा से आकर गोदावरी नदी के किनारे गाजणगढ़

में अपना राज्य स्थापित किया। इस संबंध में इतिहासकारों में मतभेद पाया जाता है। कर्नल टाड ने रघुवंशीयों की राजधानी मेवाड़ में आने के पूर्व सौराष्ट्र स्थित बलभीपुर माना है। इसी आधार पर कविराजा श्यामलदास ने भी यह स्वीकार किया है कि बलभी शाखा के मुख्य अधिकारी मेवाड़ के महाराजा हैं। उक्त दोनों मतों से यह सिद्ध होता है कि मेवाड़ के राजाओं के पूर्वज भारत के पश्चिम भाग से आये थे। किन्तु इस सम्बन्ध में पं. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा का मत भिन्न है। उनका अनुमान है कि मेवाड़ में आने से पूर्व गुहिल का राज्य आगरा के आस-पास के प्रदेश पर रहा हो। गोदावरी की स्थिति दक्षिण भारत में जैतपुर मानी है। निश्चित प्रमाणों के अभाव में इस विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। खुम्माण रास में उल्लेख है कि बापा ने अपने पूर्वजों का राज्य गाजणगढ़ के असुर सलीम से वापस लिया था। वह जगह गाजणगढ़ अथवा गजनी वर्तमान केम्बे है। अबुल फजल ने भी गुजरात में माही नदी के मुहाने पर गज नगर के दुर्ग का उल्लेख किया है जो गुजरात के बादशाह अहमद शाह के अधिकार में था। इसमें गाजणगढ़ के दुर्ग का उल्लेख किया है जो गुजरात में सिद्ध होती है।

बापा तथा उसके पिता का नाम

खुम्माणरास के कर्ता दलपति विजय ने बापा को व्यक्तिवाचक संज्ञा मानी है तथा उसके पिता का नाम पंजर बतलाया है। इस सम्बन्ध में इतिहासकारों में बहुत मतभेद है। प्रथम तो वे बापा को किसी राजा का नाम नहीं अपितु उपाधि मानते हैं।¹¹ द्वितीय यह उपाधि भिन्न-भिन्न राजाओं की बतलाई जाती है। इससे बापा के पिता का नाम भी भिन्न-भिन्न पाया जाता है उदाहरणार्थ-

- कर्नल टाड ने अपराजित के पिता शील का बापा ठहराया है।¹² इससे बापा के पिता का नाम नाग अथवा नागादित्य हो सकता है। किन्तु यह मत स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि शील पुत्र अपराजित वि.स. 718 में राज्य करता था।¹³ इधर बापा ने चित्तौड़ का राज्य मान मोरी से लिया था जो वि.स. 770 में विद्यमान था।¹⁴ अतः बापा शील की उपाधि नहीं हो सकती और इससे बापा के पिता का नाम भी नाग नहीं हो सकता।
- कविराजा श्यामलदास ने शील के पोते महेंद्र की उपाधि बापा मानी है।¹⁵ इससे बापा के पिता का नाम अपराजित हो सकता है जो महेंद्र का पिता था।
- ओझाजी ने महेंद्र के पुत्र कालभोज को बापा माना है।¹⁶ इससे बापा के पिता का नाम सिद्ध होता है
- डॉ. हरिप्रसाद शास्त्री ने बापा को व्यक्तिवाचक संज्ञा नहीं अपितु विरुद्ध या उपाधि माना है।¹⁷ उनका कथन है कि शिलादित्य तीसरे के पश्चात होने वाले राजाओं के नामों के साथ परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर श्री बापा पादानुध्यान पद मिलता है और भगवानलाल इन्द्रजी के मतानुसार बप्प शब्द का अर्थ धर्मगुरु है। अंतिम शिलादित्य के समय से धर्मगुरुओं की यह प्रथा शुरु हुई जो अब तक थोड़ी

बहुत पाई जाती है। उक्त मतों के सामने खुम्माणरास का मत स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि न तो बापा किसी पुरुष का नाम ही सूचित होता है और न पंजर नाम कल्पित है और बापा भी कोई पुरुष-विशेष नहीं माना जा सकता।

इतिहासकारों ने यह स्वीकार किया है कि बापा ने चितौड़ का राज्य मान मोरी से लिया था,¹⁷ किन्तु खुम्माणरास में उसका चित्र मोरी से लेना सिद्ध है- राज करे तिन्हो चित्र नरेश खुम्माणरास का यह मत माना नहीं जा सकता क्योंकि मानसरोवर की प्रशस्ति में अन्तिम मोरी राजा मान था।

बापा का राज्याभिषेक

खुम्माणरास के अनुसार बापा का राज्याभिषेक सोलह वर्ष की आयु में संवत् 491 वैशाख शुक्ला, (पंचमी), गुरुवार, पुष्य नक्षत्र में हुआ था। यथा-

सिहांसत बैठो सुदूढ़ बापा नृप बलवंत।
सोल वरस रो साहसी, सतधारी सांमत॥425॥
संवत् च्यार एकानए, एकलिंग अंबाव॥
वर दिधो बापा वदें, संगत कियो सुपसाव॥428॥
शुक्ल पक्ष वैशाख सुध, पंचमी पुष नषत।
श्री गुर वासर चित्र गढ़ बैठो बप्प तषत॥431॥

बापा के राज्याभिषेक के संवत् के विषय में बहुत मतभेद पाया जाता है। मेवाड़ की जनश्रुति और आम ख्यातियों के अनुसार बापा ने संवत् 191-में चितौड़ का राज्य पाया था। राजप्रशस्तिकार ने भी बापा का राज्याभिषेक वि.स. 191 माघ शुक्ला सप्तमी को पंद्रह वर्ष की अवस्था में होना माना है।¹⁸ कर्नल टाड का मत है कि यह संवत् 191 विक्रमी संवत् नहीं है। उनका कथन है की बलभी की स्थापना वि.स. 375 में हुई थी और उसका राज्यकाल 205 वर्ष का है। तत्पश्चात् उसका पतन हो गया। अतः बलभी का पतन वि.स. 580 में हुआ। बड़वा भाट इस घटना से स्वतंत्र संवत् गिनते हैं और वे 191 वर्ष में बापा का जन्म मानते हैं। इससे बापा का जन्म वि.स. 770 में होना सिद्ध होता है। मेवाड़ में यह प्रसिद्ध है कि बापा ने मोरी से चितौड़ का राज्य लिया था और मान मोरी का शिला-लेख वि.स. 770 का प्राप्त हुआ है।¹⁹ इससे बापा मान मोरी का समकालीन सिद्ध होता है। किन्तु कविराजा श्यामलदास और पं. गौरीशंकर ओझा दोनों ही इससे सहमत नहीं थे। वे इसे संवत् 191 नहीं मान कर वि.स. 791 मानते हैं और अपने मत की पुष्टि इस प्रकार करते हैं कि सं. 791 के 7 का अंक घिसते-घिसते एक का अंक(1) बन गया।²⁰ महाराणा कुम्भकर्ण के समय में बने हुए माहात्म्य में बापा का विक्रम संवत् 890 में विद्यमान होना पाया जाता है।²⁰

महाराणा रायमल के समय में बने हुए एकलिंग महाकाव्य में उल्लेख मिलता है कि बापा अपने पुत्र को राज्य देकर वि.स. 890 में आध्वर्यग ऋषि के पास हाथ में लकुट लेकर चतुर्थ आश्रम (संन्यास) का आचरण करने के लिये नागदा गया।²¹ उपर्युक्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि बापा ने वि.सि. 890 में राज्य त्याग कर संन्यास ग्रहण किया था।

अतः बापा का वि.सि. 791 में सिंहासनारूढ़ होना संभव हो सकता है ऐसी अवस्था में खुम्माण रास में दिया हुआ बापा का राज्याभिषेक सं. 491 विक्रमी कदापि संभव नहीं हो सकता। यदि यह विक्रमी संवत् से 300 वर्ष पीछे मानना पड़ेगा। ऊपर उल्लेख हो चुका है कि राजप्रशस्ति महाकाव्य में बापा का राज्याभिषेक माघ शुक्ला सप्तमी को होना लिखा है और खुम्माणरास में यह तिथि वैशाख शुक्ला पंचमी गुरुवार पुष्य नक्षत्र ही है। उस दिन मंगलवार और पुनर्वसु नक्षत्र था।²² खुम्माणरास की यह तिथि भी कल्पित प्रतीत होती है।

बापा का राज-त्याग

खुम्माण रास में लिखा है कि बापा जब बूढ़ा हो गया था तब वह अपने पुत्र को राज्य देकर काशी चला गया और वही गंगा किनारे रहने लगा और उसने अश्वमेध यज्ञ किया।

यथा:

गढ़पति बापो गरढा हुआ। मन अमेद कासीपुर गया।
राज भलायो बाला भणी। आंग दांग वरती सुतवणी॥505॥
अश्वमेद जग आंरभियो। होम जग्यास पुण्य बहुकियो॥
कीधो वाराणसी नृप वसी। गंगा उपकंठे बापसी॥506॥

किन्तु ऊपर सिद्ध हो चुका है कि बापा ने नागदाह में ही संन्यास ग्रहण किया था। अतः उसके काशीवास करने और गंगा के किनारे अश्वमेध यज्ञ करने की बात कल्पित कही जा सकती। अलबत्ता अपने पुत्र को राज्य देने की बात दोनों सूत्रों से सिद्ध होती है। राजप्रशस्ति महाकाव्य पर खुम्माणरास से बापा का राज्याभिषेक 15-16 वर्ष की आयु में होना पाया गया है। खुम्माणरास के अनुसार उसने राज्य वृद्धावस्था में छोड़ा था। इससे उसका दीर्घकाल तक राज्य करना सिद्ध होता है किन्तु उपर्युक्त प्रमाणों से उसका 19 वर्ष राज्य करना ही सिद्ध होता है। इस विषय में प्रामाणिक रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

इसके विपरीत यह धारणा भी नहीं बता देनी चाहिये कि खुम्माणरास के वृत् निरे कल्पित है और इतिहास के लिये सर्वथा अनुपादेव है। उसके प्रसंगों की परीक्षा के अन्तर्गत यह स्पष्ट हो चुका है कि उनमें से कई प्रामाणिक हैं। उनमें सत्य किसी न किसी अंश में विद्यमान है। अतः हम उसे कोरा भट्ट भणन्त नहीं कह सकते। पाठक को भागीरथ प्रयत्न कर सत्यासत्य घटनाओं के उस पूंजीभूत संग्रह को मथकर उसमें सम्मिश्रित अनैतिहासिक तत्वों से निराश होकर उसे सर्वथा त्याज्य समझने की भी तुष्टि नहीं करनी होगी।

खुम्माणरास में एक सहस्राब्ददीर्घ काल वि.स. 719-1718 का ऐतिहासिक विवरण चाहे उसकी रूपरेखा ही हो उपलब्ध होता है। इस दीर्घकाल में उसमें जनश्रुतियों और परम्परागत धारणाओं का समावेश हो जाना अस्वाभाविक नहीं है। प्राचीन इतिहासग्रन्थों में भी राजाओं की नामावली तथा उनसे सम्बद्ध दैवी घटनाओं के समावेश के अतिरिक्त अधिक क्या पाया जाता है। खुम्माणरास काव्य है इतिहास नहीं। अतः उससे इससे अधिक क्या आशा की जा सकती है। प्रत्युत प्रचलित धार्मिक विश्वासों, रुढ़ियों, सामाजिक प्रथाओं और

परम्परागत धारणाओं को सुरक्षित तो होता है। इतिहास में केवल किसी राजा महाराजा के जीवन से सम्बन्ध घटनाओं का समावेश ही नहीं होता है। उनमें जन- समाज में प्रचलित धार्मिक भावनाओं, सामाजिक धारणाओं एवं प्रचलित विश्वासों का भी लेखा प्रस्तुत करना पड़ता है। इतिहास लेखन की जब यह प्रणाली हो जायेगी तो उस समय खुम्माणरास उपेक्षित नहीं रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. खुम्माणरास प्रति लिपी सीतामऊ पुस्तकालय में सुरक्षित प्रतिलिपि।
2. वही पृष्ठ संख्या 20
3. वही पृष्ठ संख्या 21
4. वही पृष्ठ संख्या 25
5. ओझा: उदयपुर राज्य का इतिहास पहला भाग, पृष्ठ- 116
6. टाड: राजस्थान (क्रुक्स संस्करण) जिल्द 1 पृष्ठ 275-77
7. कविराजा श्यामलदास वीर विनोद प. भाग पृष्ठ-248
8. राजविलास के कर्ता मानकवि ने भी गुहिलों का राज्य बलभीपुर में होना लिखा है।
9. ओझा: उदयपुर राज्य का इतिहास पहला भाग, पृष्ठ- 250
10. टाड: राजस्थान (क्रुक्स संस्करण) जिल्द 1 पृष्ठ 290
11. कविराजा श्यामलदास वीर विनोद प. भाग पृष्ठ-250
12. टाड: राजस्थान (क्रुक्स संस्करण) जिल्द 1 पृष्ठ 259
13. कूडां ग्राम की प्रशस्ति वि. सं. 718 (वीर विनोद प्रथम भाग)
14. मानसरोवर की प्रशस्ति (टाड राजस्थान)
15. कविराजा श्यामलदास वीर विनोद पृष्ठ 250
16. ओझा: उदयपुर राज्य का इतिहास पहला भाग, पृष्ठ-100
17. हरि प्रसाद शास्त्री मैत्रक कालिन गुजरात भाग-1, पृष्ठ 130-33
18. कविराजा श्यामलदास वीर विनोद पृष्ठ 250
19. कविराजा श्यामलदास वीर विनोद पृष्ठ 234
20. राजप्रशस्ति महाकाव्य सर्ग 3
21. टाड: राजस्थान (क्रुक्स संस्करण) जिल्द 1 पृष्ठ 278
22. मानमोरी का शिलालेख वि. सं. 770

रघुवंश महाकाव्य में शिक्षा का सार्थक स्वरूप: वर्तमान की उपादेयता

डॉ. मधुलता जैन

विभागाध्यक्ष संस्कृत, शास.एस.एम.एस. स्नातकोत्तर महाविद्यालय
शिवपुरी (मध्य प्रदेश)



shodhshree@gmail.com

भारत की सभ्यता और संस्कृति भारतीय सांस्कृतिक परम्परा के उद्घोषक कवि कुल कुमुद कलाधर कविवर कालिदास को अपना अभिव्यंजक पाकर कृतकृत्य हो गई। भारतीय संस्कृति का जितना मनोरम चित्रण कालिदास ने किया है, उतना वाल्मीकि और व्यास को छोड़कर शायद ही किसी कवि ने अपनी लेखनी से अभिव्यक्त किया हो। महाकवि कालिदास की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। उनके ग्रन्थों के अनुशीलनकर्ताओं को यह यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि मानव-जीवन से सम्बद्ध शायद ही कोई विषय होगा, जिसे कविवर ने अप्रूता छोड़ दिया होगा। उनकी कृतियों में अनेक ज्ञान-विद्याओं का समावेश है। अपने देश की तत्कालीन संस्कृति का चित्रण उनकी रचनाओं में स्पष्ट अंकित है। महाकवि ने अपनी रचनाओं में सांस्कृतिकमान्यताओं, धर्म-दर्शन, कला, शिक्षा आदि की चर्चा की है। शिक्षा के संबंध में उनके विचार सुस्पष्ट हैं। शैक्षिक चिन्तन पर भारतीय मनीषियों ने पर्याप्त विवेचन किया है, जिनके शैक्षणिक विचार समसामयिक समस्याओं को सुलझाने एवं समाज में सद्वृत्ति परक परस्पर सौहार्द बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण हैं, जिसकी आज उपादेयता है।

महाकाव्यों की आरंभ परम्परा में कालिदास ने “रघुवंश” तथा “कुमार सम्भव” का प्रणयन किया है। उनकी काव्य प्रतिभा अद्वितीय थी। “रघुवंश” कथिकुलगुरु कालिदास की सर्वोत्तम कृति होने के साथ-साथ समग्र रघुकुल की कलात्मक उपलब्धियों का भी विशेष विवेचन है, अतः उसमें किसी आनुवंशिक विषय पर एक पक्षीय लेखन कठिन था फिर भी उसमें शिक्षा के प्रसंग में जो कुछ कहा गया है, वह मौलिक है और वर्तमान की शिक्षा समस्याओं के समाधान के लिए मूल्यवान् स्रोतों को उपस्थित करता है।

कालिदास के कुमार सम्भव, अभिज्ञान-शाकुन्तल, मालविकाग्निमित्र आदि में भी शिक्षा-संबंधी अत्यन्त महत्वपूर्ण निर्देश प्राप्त होते हैं। शिक्षण समस्या के ऊपर कालिदास ने बड़ा गंभीर विचार किया है। उन्हीं विचारों के प्रति यहाँ ध्यान आकृष्ट करना समीचीन प्रतीत होता है। कालिदास ने किसी शिक्षण-संस्थान में शायद ही अध्यापन कराया हो, परन्तु इस विषय में उनके मन्तव्य बड़े महत्वपूर्ण हैं और वर्तमान समय के शिक्षा-शास्त्रियों के लिए भी विशेष माननीय एवं चिन्तनीय हैं। शिक्षा के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए भी महाकवि का कथन है कि मेरे कोरे पुस्तकीय ज्ञान को प्राप्त कर लेना अपने में कोई अर्थ नहीं रखता है। विद्या अर्जन के पश्चात् सतत् अभ्यास की आवश्यकता होती है। विद्याव्यसनने (रघुवंश 1/88)

हमारे अर्जित ज्ञान लोक में सार्थकता तभी है, जब वह हमारे व्यवहार में भी उतना ही खरा उतरे। कालिदास ने अपने महाकाव्य रघुवंश में शिक्षण के विविध आयामों का उल्लेख किया है जो लिपी ग्रहण से आरम्भ होता है। भारत वर्ष में तथा अन्य देशों में भी बालक तथा बालिका के शिक्षण को प्रारम्भ किया जाता है। चूड़ाकरण के अनन्तर विद्यारम्भ संस्कार किया जाता है। जिस प्रकार नदी का आश्रय लेकर समुद्र प्राप्त किया जाता है, उसी प्रकार लिपी की शिक्षा पाकर वाङ्-मय-शब्द समुदाय-में बालक प्रवेश कर सकता है। यही कारण है कि सबसे प्रथम शिक्षण का विषय होने से आज भी लिपी की समस्या नितान्त महत्वपूर्ण मानी जाती है।

स वृत्तचूलश्चलकाकपक्ष कैर मात्य पुत्रैः स वयोमिरान्वितः।
लिपेर्यथावद् ग्रहणेन वाड.मय नदी मुखेनेव समुद्रमाविशत्॥

(रघुवंश-3.28)

इसके पश्चात् उपनयन संस्कार होने पर ब्रह्मचारी अपने गुरु के पास जाता है और यथावर्ण क्रमानुसार नियमानुसार विद्याओं का अध्ययन करता है। विद्याभ्यासी के लिए कालिदास के ब्रह्मचर्य की बड़ी आवश्यकता मानी है। रघु ने मृग चर्म को धारण कर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए अपने मन्त्रविद् पिता से अस्त्र विद्या की शिक्षा ग्रहण की।

त्वचं च मेध्यां परिधाय रौरवीमा शिक्षाशास्त्रं पितुरेव मन्त्रवत् ।

न केवलं तद्गुरुरेक पार्थिवः शितावमूदेक धनुर्धरोऽपि सः॥

(रघुवंश -3.31)

कालिदास की दृष्टि में शैशवकाल ही विद्याभ्यास के लिए उपयुक्त समय है। इसी समय रघुवंशीय राजाओं ने अपने वर्ण तथा परम्परागत मर्यादा के अनुसार विद्यानुशीलन किया-

शैशवेऽभ्यस्त विद्यानम्

(रघुवंश -1.8)

षड्गों के साथ वेद भारतीय धर्म और दर्शन एवं संस्कृति का मूल स्रोत है। वेदाभ्यास प्रत्येक कार्य के लिए आनवश्यक है। शैशवावस्था का कुछ समय व्यतीत होने के पश्चात् जब ब्रह्मचारी की बुद्धि परिपक्व होने लगती है तब षड्ग वेद की शिक्षा दी जाती है। इसलिए वाल्मीकी ने कुश-लव को शैशव के किंचित् बीत जाने पर षड्ग वेद की शिक्षा दी और पीछे अपनी मनोरम् कृति रामायण की पढ़ाया।

साडगं च वेदमाध्यम्य किंचिदुल्कान्तं शैशवे।

स्वकृतिं गापयामास कवि प्रथम पद्धतिम् ॥

(रघुवंश -15.33)

कालिदास का मानना है कि पात्र में दी गई शिक्षा ही सफल होती है-

अथोपनीतं विधिवद् विपाश्चित्तौ,

विनिन्युरेनं गुरवो गुरुप्रियम् ।

अवन्वययत्नाश्च बभूवृत् ते,

क्रिया हि वस्तूपहिता प्रसीदति॥

(रघुवंश -3.29)

यहाँ यह बतलाया गया है कि वद्यपि रघु सहज ही गुरुजनों के प्रिय थे, फिर भी उन्होंने उपनयन -संस्कार के पश्चात् ही उन्हें शिक्षा वितरण किया। दूसरी बात यहाँ यह स्पष्ट की गई है कि पात्र में दी गई शिक्षा ही सफल होती है। वर्तमान में पात्रपात्र -विचार के अभाव में ही शिक्षा बंदर के हाथ का खंजर बन गई।

रघुवंश परम्परा की शिक्षा की महत्वपूर्ण विशेषता है। उसका विनय के साथ नित्य संबंध है। इस विनय भाव ने ही उन्हें गुरुजनों का सहज स्नेह पात्र गुरुप्रिय बनाया था। विनय की शिक्षा तो उंगली पकड़कर चलने की अवस्था से ही मिलने लगती है।

ययो तदीयाभवलम्ब्य चांगुलिमभूच नम्रः प्रणिपाताशिक्षया।

(रघुवंश-3.25)

यही कारण रहा कि इस विनय के प्रभाव से रघु सदा ही नम्रता से झुके दिखाई दिए।

“बधुः प्रकर्षाद्जद गुरुं रघुस्तथापित नीचैर्विनयाददृश्यत्॥”

(रघुवंश 3.34)

महाकवि कालिदास के अनुसार रघु में सहज और विद्याभ्यासी दोनों प्रकार की विनय विद्यमान थी।

‘निसर्ग संस्कार विनीत इत्यस्ती’

(रघुवंश- 3.35)

वर्तमान की शिक्षा प्रणाली का प्रमुख दोष यही है कि उसमें विनय का कोई स्थान नहीं है। फलतः वह मानवता का शोषण कर दुष्प का पोषण कर रही है। रघुवंश की शिक्षा लोक और परलोक दोनों को समेटे हुए है। कविवर कालिदास का कथन है कि उदारमना रघु ने बुद्धि के सम्पूर्ण गुणों द्वारा चतुः समुद्र -सदृशी त्रयी, अन्वीक्षिकी आदि चारों विद्याओं को इस प्रकार पार कर लिया जैसे सूर्य वायु से भी अधिक वेगवान अपने घोड़े के सहारे चार समुद्र जैसी अपार चारों दिशाओं का पार कर लेते है।

घियैः समग्रैः स गुणैरुदारधीः

क्रमाच्चतस्त्रश्चतुर्णवोपमाः

दिशो हरिर्द्विर्हरितामिवेश्वरः”

(रघुवंश-3.30)

कालिदास के अनुसार शिक्षार्थियों के समक्ष “आज्ञा कि गुरुणां हि अविचारणीया” जैसा आदेश था (रघुवंश -14.46) क्योंकि यदि पूज्य पुरुषों के प्रति अनादर भाव दिखलाया जाएगा तो वह उस व्यक्ति के कल्याण में महान् बाधक बनेगा।-

“प्रति बध्नाति हि श्रेयः पूज्य पूजा व्यक्ति क्रमः।”

(रघुवंश -1.79)

वर्तमान परिवेश में माता-पिता अपने बालकों को विद्यालय भेज देने मात्र से अपने कर्तव्य की इतिश्री समझते है। विश्व के शिक्षाविदों के अनुसार बच्चों में पनपने वाली कुण्ठा में यह एक प्रमुख कारण है जिसका परिणाम बच्चों में अपराधोन्मुखी प्रवृत्ति का पनपना है। यही कारण रहा कि रघु को पिता ने धनुर्वेद की स्वयं शिक्षा दी। अतः रघुवंश का आदेश रहा कि शिक्षा का आरम्भ घर से हो और उसमें पिता की भूमिका प्रमुख हो क्योंकि पिता में शील एवं योग्यता आक्षिप्त है।

शिक्षण का उद्देश्य क्या है? किस फल की प्राप्ति के लिए इतना सब कुछ किया जाता है? कालिदास का इन प्रश्नों का उत्तर बहुत स्पष्ट एवं सरगामित है। शिक्षा का फल यही नहीं है कि वह सामाजिक जीवन का तथा जीविकार्जन का उपाय मात्र है। शिक्षित हो जाने पर व्यक्ति अपने उदर की पूर्ति अवश्य कर सकता है तथा समाज में अपना विशेष स्थान प्राप्त कर सकता है परन्तु शिक्षा की इतनी ही परिधि नहीं है कि यह तो

जीवन को पवित्र तथा विभूषित करने के लिए नितान्त समर्थ है। रघुवंश महाकाव्य के अतिरिक्त इसका विवेचन कालिदास के द्वितीय महाकाव्य कुमारसम्भव में पार्वती के जन्म के अवसर पर हिमालय की प्रशंसा करते समय कालिदास से स्पष्ट ही कहा है कि हिमालय पार्वती से उसी प्रकार पवित्र तथा विभूषित किए गए जिस प्रकार स्वर्ग गंगाजी से तथा विद्वान पुरुष संस्कारयुक्त वाणी से।

प्रमामहत्सा शिखरख्येव दी -पस्त्रिमार्गगेव त्रिदिवस्य मार्गः।
संस्कारवत्येव गिरा मनीषी तथा सपूतश्च विभूषितश्च॥

(कुमार 01.28)

कालिदास ने रघुवंश में स्पष्ट किया है कि आज की शिक्षा में अगर किसी विशेष का अभाव है तो वह है त्याग जिसके कारण आज की शिक्षा विफालाभाच की ओर जा रही है। गुरु दक्षिणा के लिए अडे हुए कौत्स को खीझकर गुरु ने कहा कि आपने चौदह विद्याएँ पढ़ी हैं तो चौदह करोड़ स्वर्ण मुद्राएँ लाओ। रघु ने याचक बनकर कौत्स के आगे कुबेर से सैकड़ों करोड़ स्वर्णमुद्राओं की वर्षा करा दी, तब कौत्स गुरु दक्षिणा के चौदह करोड़ से अधिक एक पाई भी लेने को तैयार नहीं थे। उदारदाता रघु का आग्रह था कि सब आपको ही ले जाना होगा, क्योंकि मैं तो सर्वस्व दान कर चुका हूँ। सारा साकेत ठगा सा खड़ा था कि रघु और कौत्स में से किसे बढ़कर मानें-

जनस्य साकेत निवाससिन स्तौ,
द्वावप्यभूतामामिनन्ध सत्वौ।
गुरुप्रदेयाधिकनिः स्पृहोऽर्थी,
नृथोऽर्थिकामादाधिक प्रदश्य ॥

(रघुवंश-5.31)

इस प्रकार महाकवि कालिदास के शिक्षा विषयक विचार नितान्त उच्च, उपादेय तथा उत्साहवर्धक हैं। यदि हम रघुवंश की शिक्षा से जुड़े सूरों को पकड़ सकें तो निसंदेह हमारी शिक्षा सम्बन्धी समस्याएँ समाप्त हो सकती हैं। आशा है कि शिक्षकों का ध्यान इन रुचिर विचारों की ओर अवश्य आकृष्ट होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. रघुवंश महाकाव्य 1/88
2. रघुवंश महाकाव्य 3/28
3. रघुवंश महाकाव्य 3/31
4. रघुवंश महाकाव्य 1/8
5. रघुवंश महाकाव्य 15/33
7. रघुवंश महाकाव्य 3/25
8. रघुवंश महाकाव्य 3/34
9. रघुवंश महाकाव्य 3/35
10. रघुवंश महाकाव्य 3/30
11. रघुवंश महाकाव्य 1/79
12. रघुवंश महाकाव्य 1/28
13. रघुवंश महाकाव्य 5/31

स्वच्छता मिशन: पर्यावरण स्वच्छता, स्वास्थ्य एवं रोजगार का आधार

डॉ. पंकज छाबड़ा

एसोसिएट प्रोफेसर, मुन्नालाल एवं जयनारायण खेमका गर्ल्स डिग्री कालेज, सहारनपुर (उत्तर प्रदेश)



shodhshree@gmail.com

पर्यावरण स्वच्छता रखना मनुष्य द्वारा प्रकृति का उपभोग करने के बदले प्रकृति के प्रति दायित्व स्वरूप है। पर्यावरण स्वच्छता की स्थिति सिर्फ किसान, मजदूर एवं सफाई कर्मचारी तक सीमित कार्य है। हमारे देश में लोग सफाई करना एवं पर्यावरण स्वच्छता रखना को एक ही कार्य समझते हैं लेकिन इन दोनों में अन्तर है। सफाई मजदूरी पर आधारित वह कार्य है जो घर/संस्थानों में लोग लेबर लगाकर कराते हैं जैसे झाड़ू, पोछा, बर्तनों एवं सामानों की सफाई आदि। सरकार अपने कर्मचारियों द्वारा सड़कों, नालियों की सफाई करती है। झाड़ू लगाने के बाद इकट्ठे हुए धूलकणों को कब्ररा पार्श्व में डाला जाता है। इसके विपरीत पर्यावरण स्वच्छता रखना उपभोक्ता एवं सरकार के संयोजन से किया जाने वाला वह कार्य है जिसमें देश का हर नागरिक चाहे वह उम्र में छोटा हो या बड़ा, अपने द्वारा प्रयोग की गई वस्तुओं से निकले ठोस कचरे (waste)को धरती पर यहाँ-वहाँ न फेंक कर उसे संबंधित कचरा दान (waste bin) में फेंकता है। तत्पश्चात सरकारी/प्राइवेट कर्मचारी उस संग्रहित कचरे को अन्तिम निस्तारण आर्थिक यूनिट तक पहुंचाते हैं। पानी के स्रोतों को स्वच्छ रखा जाना, सीवेज सिस्टम एवं सीवेज ट्रीटमेंट, इंडस्ट्रियल वेस्ट ट्रीटमेंट, वायुमंडल की स्वच्छता के लिए सामुदायिक आधार पर वृक्षों को लगाया जाना आदि पर्यावरण स्वच्छता में आते हैं। देश में बढ़ती जनसंख्या एवं पर्यावरण अपघटन को देखते हुए इसे लक्ष्य के रूप में लिए जाने की आवश्यकता है।

कचरा क्या है- उपभोक्ता अपने खाने-पीने, रहने, पहनने, ओढ़ने अथवा व्यापार करने में विभिन्न वस्तुओं का प्रयोग करता है। वस्तुओं के प्रयोग के दौरान उसके कुछ भाग के उपभोग की उसको आवश्यकता महसूस नहीं होती है, जिसे वह फेंक देना चाहता है, इसी को कचरा कहते हैं। उदाहरण के तौर पर घरेलू ठोस कचरा जैसे पेपर, प्लास्टिक, काँच, मेटल, लकड़ी, कपड़े का कचरा, ई-वेस्ट, पत्तियाँ, गार्डन का कचरा आदि। तरल कचरा जैसे घरेलू वेस्ट वाटर, सीवेज वेस्ट वाटर आदि, गैसीय कचरा जैसे कोयला, तेल, उपले, लकड़ी आदि को जलाने के दौरान निकलने वाली हानिकारक गैसों। प्रत्येक कचरे की प्रकृति अलग-अलग होती है।

कूड़ा क्या है- अलग-अलग प्रकृति के कचरों को जब हम एक ही साथ मिला देते हैं तो वह कूड़ा कहलाता है। अलग-अलग प्रकृति के कचरों को एक साथ मिला देने से पर्यावरण स्वच्छता की कल्पना नहीं की जा सकती है। हमारे देश में पुरातन काल से ही लोगों द्वारा अपने घरों के बाहर कूड़ा संग्रह की आदत बनी है आजकल सरकारी कूड़ा संग्रह भी खुले में बना दिये गये हैं, जहाँ लोग पॉलीथीन में प्रतिदिन का कूड़ा भरकर फेंकते हैं, जिसे आजकल नगर निगम द्वारा अपनी गाड़ियों में भरकर निचले तबके के लोगों की बस्तियों के सामने डाला जा रहा है अथवा किसानों के खेतों के सामने डाला जा रहा है। इससे ग्लोबल वार्मिंग बढ़ती है। इससे रोगाणु पनपते हैं जो जल, वायु में फैलकर मनुष्य को बीमार करते हैं।

पर्यावरण स्वच्छता एवं हमारा स्वास्थ्य- जिन लोगों के घरों के सामने नगरीय कूड़ा को डाला जाता है उनका स्वास्थ्य प्रभावित होता है। वर्षा के दिनों में स्थिति और खराब हो जाती है। पर्यावरण स्वच्छता की स्थिति

प्रत्येक कचरा को वैज्ञानिक विधियों द्वारा व्यवस्थित करने से प्राप्त होती है। पर्यावरण स्वच्छता रखने से वातावरण में विभिन्न प्रकार के रोगाणु नहीं पनपते हैं। हानिकारक गैसों की मात्रा नहीं बढ़ती है। 80% बीमारियाँ स्वयं ही दूर होती हैं। अतः शरीर स्वस्थ रहता है।

पर्यावरण स्वच्छता के क्षेत्र में रोजगार- पर्यावरण स्वच्छता को कार्य शैली के रूप में लिया जाना आवश्यक है। वर्तमान नगरीय कचरा प्रबन्धन की कार्यशैली में बदलाव करने के प्रयासों में विज्ञान की शिक्षा के आधार पर लोगों को कुशल (skilled) बनाकर किये जाने की आवश्यकता है। इससे सम्बन्धित शिक्षा में पर्यावरण माइक्रोबायोलोजी, इंडस्ट्रियल माइक्रोबायोलोजी एवं पर्यावरण विज्ञान, फॉरेस्ट्री, क्लाइमेट फिसियोलॉजी आदि विषय प्रमुख हैं। हमारे देश में पर्यावरण स्वच्छता का महत्व आम जनता की समझ से अभी काफी दूर है। इसका महत्व समझ आने से ही लोग इसमें सहभागिता करेंगे। लोगों द्वारा सहभागिता करने से यह क्षेत्र संगठित एवं applied होगा। तभी इसमें रोजगार का भी सृजन होगा।

पर्यावरण स्वच्छता का लक्ष्य प्राप्त करने में लोगों की सहभागिता निम्न प्रकार से होने की आवश्यकता है-

- अपने घरों/संस्थानों से निकलने वाले पेपर के कचरा को कूड़ा संग्रह पर न फेंके। इसे अलग इकट्ठा करते जाएं। इकट्ठा हो जाने पर आर्थिक यूनिट अर्थात् गल्ला फैक्ट्री में भिजवा दें, जँहा कचरा पेपर भी रिसाइकल होकर पुनः पेपर/गल्ला बन कर काम आ सकता है। 1 टन वेस्ट पेपर रिसाइकल से 17 पेड़ों के कटान की, 400 गैलन ईंधन, 4000 किलोवाट बिजली, 7000 गैलन पानी की बचत होती है।
- अपने घरों/संस्थानों से निकलने वाले प्लास्टिक के कचरा; पॉलीथीन, थर्मोकॉल एवं प्लास्टिक रेपर्स को भूलकर भी कूड़ा संग्रह पर न फेंके। प्लास्टिक प्रयोग के बाद कचरे को अलग इकट्ठा करते जाएं। इकट्ठा हो जाने पर आर्थिक यूनिट अर्थात् प्लास्टिक फैक्ट्री भिजवा दें, जँहा उसे रिसाइकल कर पुनः प्रयोग में लाकर मार्केट हो सकता है।
- पॉलीथीन में सच्ची, फल आदि गीली वस्तुएं लाने से स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ता है। पॉलीथीन के बनने में प्रयोग होने वाला थैलिक ऐसिड सच्चियों की नमी के साथ मिलकर सच्ची, फल में आ जाता है। जिससे जन्मजात बीमारियाँ, सेक्स हार्मोन्स में कमी, रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी, कैंसर, ट्यूमर, ओटिस्म जैसी बीमारियाँ फैलती हैं। अतः सच्ची, फल के लिए कपड़े का थैला ही घर से लेकर जाएं। पॉलीथीन कचरा को कूड़ा संग्रह पर डालने से थैलिक ऐसिड नाम का कैमिकल निकलकर भूमिगत जल में जला जाता है। साथ ही पॉलीथीन के कचरों से भूमि बजर हो रही है। ऐसे में सच्चियों की वृद्धि न होने के कारण कई सच्चियों में इंजेक्शन लगाकर उपभोक्ता के स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ हो रहा है।
- हमारे देश में डिस्पोसेबल थर्मोकॉल, प्लास्टिक कटलरी, प्ल्यूमीनम फॉयल का प्रयोग घरों में, होटलों में, विवाह आदि

आयोजनों में लोग कर रहे हैं। प्रयोग के पश्चात उसे होटलों के बाहर ही फेंक दिया जाता है। इनके रिसायकल की कोई व्यवस्था नहीं है। यह क्रिया मनुष्य एवं पर्यावरण के स्वास्थ्य के लिए घातक हो रही है। आज स्वाइन फ्लू जैसी बीमारियाँ कचरों की अधिकता से फैल रही हैं। प्लास्टिक के अधिक प्रयोग से वायुमंडल में सल्फर डाइ आक्साइड की मात्रा बढ़ती है जिससे वायुमंडल में ग्लोबल वार्मिंग होने से स्वाइन फ्लू का वाइरस तेजी से फैलता है। अतः सभी लोग नियम बना लें कि डिस्पोसेबल थर्मोकॉल एवं प्लास्टिक कटलरी का प्रयोग न कर पुनः प्रयोग में आने वाली कटलरी प्रयोग करेंगे।

- अपने घरों/संस्थानों से निकलने वाले ग्लास, मेटल के कचरा को अलग इकट्ठा कर रिसायकल में दें।
- किचन का गीला कचरा, गार्डन का कचरा, सूखी गिरी पत्तियाँ, तिनके, घास, गोबर, गाय का यूरिन, खरपतवार आदि गीला/हरा कचरा होता है। यह आर्थिक दृष्टि से मूल्यवान होता है। इसे खाद बनाने वालों को उठवा दें अथवा स्वयं घर पर खाद बना लें। घर पर बनायी खाद घर/कॉलोनी में लगे पेड़ों में दे सकते हैं। इससे मिट्टी में सम्पूर्ण पोषण की प्राप्ति होती है। इससे कैमिकल फर्टिलाइजर एवं पेस्टिसाइड की मात्रा में कमी आयेगी एवं धरा स्वस्थ रहने से भूमिगत जल खराब नहीं होगा। कैमिकल फर्टिलाइजर एवं पेस्टिसाइड के प्रयोग से आज कैंसर, ट्यूमर के रोगियों की संख्या बढ़ी है। साथ ही मिट्टी का पी.एच मान बढ़ने से यह उत्पादन योग्य नहीं रहती है।
- किसी भी प्रकार के कचरे को जलने नहीं दें और न ही स्वयं जलाएं। कचरों को जलाने से निकले धुएं से कैंसर, ट्यूमर जैसी बीमारियाँ फैलती हैं। रेल के डिब्बों में बैठकर लोग खा-पीकर रेपर्स खिड़की से बाहर फेंकते हैं। जिसे बाद में इकट्ठा कर जलाया जा रहा है। अपने घरों/संस्थानों के पास नालों, नालियों में किसी को कचरा नहीं डालने दें और न ही स्वयं डालें।
- अपने घरों/संस्थानों के पास जल भराव को रोके। अच्छी घास लगाकर पर्यावरण में हरियाली बढ़ायें।
- अपने घरों/संस्थानों के पास बिना ट्रीटमेंट हुआ सीवेज न बहने दें।
- मनुष्य के क्रियाकलाप एवं प्लास्टिक कचरे की अधिकता आज प्रदूषण एवं जलवायु परिवर्तन के लिए जिम्मेदार है। पेड़ों के अधिक कटान से ग्लोबल वार्मिंग हो रही है जिससे पश्चिमी विक्षोभ की संख्या बढ़ने से कहीं वर्षा अधिक तो कहीं कम होती है। ग्लोबल वार्मिंग का स्तर आज 1° तक पहुँच चुका है जिसका सीधा अर्थ है 1000 फीट ग्लेशियर का पिघलना। अपने घरों/संस्थानों के आसपास हरियाली बढ़ाकर वायु में आक्सीजन एवं आद्रता की मात्रा को सही बनाये रखें। आक्सीजन की सही मात्रा से ही हमारे शरीर में भोजन से ऊर्जा की प्राप्ति होती है। हरियाली बढ़ाने से वायु में ओटोमोबाइल से मिली गैसों जैसे कार्बन डाइ आक्साइड, कार्बन मोनो

आक्साइड, सल्फर डाइ आक्साइड, नाइट्रोजन डाइ आक्साइड, परटिकुलेट मैटर की मात्रा को कम कर सकते हैं।कॉलोनी के लोग फंड इक्ट्ठा कर इस कार्य को कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. पर्यावरण संरक्षण: हमारा दायित्व, पर्यावरण जागरूकता अभियान, उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड जिला सहारनपुर, 2005-2006
2. Teuten EL, Saquing JM Knappe, DR, et al. (taykbZ,2009). "Transport and Release of Chemicals from plastics to the environment and to wildlife".Philos.Trans.R.Soc.Lond.,B,Biol.Sci.364(15 26)2027-45
3. <http://www.sportinglife360.com/index.php/why-plastic-and-styrofoam-shouldn't-be-burned-in-a-campfire> by Kristin Collins
4. <http://www.treehugger.com/greenis-waste-recycling-htm-home/excellent-infographic-shows-why-we-must-say-no-to-plastic>:Treehugger,2014
5. <http://en.wikipedia.org/wiki/sanitation-Wikipedia,the-free-encyclopedia,2013>
6. <http://burningissues.org/lukebiomass.html> Biomass burning: wood, leaves, grass, forests, crops and trash by Luke Curtis,2002
7. Adegunloye, D.V. and Adetuyi, F.C.2009,Composting of Food Wastes Using Cow and Pig Dung as Booster, African Journal of Applied Sciences 1(3-4):70-75
8. Newspaper clippings and media news:2013 and 2014
9. <http://www.eschooltoday.com/waste-recycling/whatl,2010>

किशोरावस्था के किशोर एवं किशोरियों की यौन शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन एवं शिक्षा की भूमिका

डॉ. दिनेश कुमार शर्मा

व्याख्याता, राज. शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ, जयपुर



shodhshree@gmail.com

किशोरावस्था परिवर्तनों की अवस्था है। इस अवस्था में शारीरिक, मानसिक व संवेगात्मक परिवर्तन तीव्र गति के साथ होते हैं। किशोर एवं किशोरियों में विभिन्न प्रकार के परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं। किशोरों में मूँछों का उगना, गुप्तांगों के आस-पास बालों का उगना, आवाज में भारीपन आना, किशोरियों में मासिक धर्म का होना, गुप्तांगों का विकास होना, वक्षस्थल का उभार होना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। किशोरियाँ किशोरों की अपेक्षा लगभग 2 वर्ष पहले ही किशोरावस्था में प्रवेश कर जाती हैं। वे 12-13 वर्ष की आयु में ही रजस्वला हो जाती हैं जबकि लड़कों में 14-15 वर्ष की आयु से पूर्व किशोरावस्था के लक्षण कम ही दिखायी देते हैं।

हम प्रतिदिन अपने चारों ओर जीव जगत के अनेकों प्राणियों को देखते हैं और उनकी क्रियाओं पर विचार करने लगते हैं। समय आता है चिड़ियाँ अपना घोंसला बनाती हैं। घोंसला बनाना चिड़िया की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। कुछ दिनों बाद चिड़िया अण्डे भी दे देती है। उनके बच्चे भी निकल आते हैं। उनको दाना चुगाती हैं और पंख निकलते ही वे उड़ जाते हैं। वे बच्चे उड़कर हमें विचार में डाल देते हैं। हम सोचते हैं कि चिड़िया को अपने बच्चों से कोई आशा नहीं। मानव की भाँति चिड़ियों के बच्चे उसे बुढ़ापे में सहारा नहीं देंगे। न जाने वे अपनी माँ को पहिचानेंगे या नहीं, फिर वह चिड़िया इतना कष्ट क्यों उठाती है ? हम देखते हैं कि जिस प्राणी में जितनी कम बुद्धि है वह मद एवं लोभ से उतना ही दूर है, परन्तु काम, क्रोध और मोह से नहीं। भारतीय दर्शन के मतानुसार मूल प्रवृत्तियाँ तीन हैं- (1) दारेष्णा, (2) पुत्रैष्णा, (3) वितैष्णा।

इनमें से स्त्री-प्रसंग अर्थात् कामशक्ति (sex) की इच्छा- दारेष्णा, पुत्र की इच्छा- पुत्रैष्णा तथा धन आदि भौतिक वस्तुओं की इच्छा- वितैष्णा कहलाती है। प्रायः ने प्रारम्भ में तो केवल एक ही मूल प्रवृत्ति कामशक्ति (sex) को माना था। उसने इसका नाम लिबिडो दिया और यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि यही एक ऐसी प्रवृत्ति है जो सभी प्राणियों में समान रूप से और जन्म से ही पायी जाती है। किशोरावस्था आते ही किशोर एवं किशोरियों की मानसिकता स्थिर नहीं होती है। फलतः उनके मूड बार-बार बदलते रहते हैं। विपरीत लिंगी के प्रति उनका आकर्षण भी बढ़ जाता है। किशोर किशोरियों के साथ समय बिताना चाहता है वहीं किशोरियाँ किशोरों के साथ समय बिताना, वार्तालाप करना पसन्द करती हैं। यौन शिक्षा की सही व स्वस्थ जानकारी के अभाव में अनेक प्रकार के अनैतिक कार्यों में लिप्त हो जाते हैं। अपने स्वप्निल सपनों को साकार करने के लिये उद्यत रहते हैं। किशोर अपनी नई दुनियाँ बसाना चाहता है। अपने हम उम्र के साथियों के साथ रहना पसंद करते हैं। वर्तमान भारतीय समाज में बढ़ते यौन रोग एड्स जैसी घातक बीमारी यौन शिक्षा के अभाव के कारण बढ़ रही है। भारतीय समाज के किशोर व किशोरियाँ पारिचात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण डांस, डिस्को बार, अश्लील नृत्य, बॉयफ्रेंड, अनैतिक आचरण, चैटिंग, पोर्न साइट्स का उपयोग इत्यादि कार्य धड़ले के साथ कर रहे हैं। यह यौन शिक्षा के अभाव के कारण है।

उद्देश्य-

- किशोर एवं किशोरियों को यौन शिक्षा के प्रति जागृत करना।
- किशोर एवं किशोरियों को काल्पनिक जगत् से वास्तविक जगत् के बारे में अवगत कराना।
- किशोर एवं किशोरियों को विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण का स्वस्थ ज्ञान कराना।
- किशोर एवं किशोरियों को अश्लील साहित्य के दुष्प्रभावों से अवगत कराना।
- यौन शिक्षा के महत्व को प्रतिपादित करना।

किशोरावस्था के किशोर एवं किशोरियाँ जीवन की सच्चाइयों और वास्तविकता का साहस से मुकाबला तभी कर पाते हैं, जब वक्त आने पर अपने निर्णय स्वयं लेते हैं। हर बात में हर बार किशोरों को सहारा देकर, उन्हें जीवन की सच्चाइयों का मुकाबला स्वयं न करने देकर माता-पिता उन्हें पंगु बना देते हैं और बड़े होने पर जब कभी जीवन की कड़वी सच्चाइयों सामने आती हैं तो घबराकर मुँह छिपाते हैं। समाज में एक ओर जहाँ यौन अपराध की घटनाओं में तेजी से बढ़ोतरी हो रही है। किशोरावस्था के किशोर यौनाकर्षण के कारण अनेक प्रकार के रोगों से ग्रसित हो जाते हैं। यौन रोग से ग्रसित होने पर स्वयं ही इलाज करना चाहते हैं। किसी से भी अपने रोग की चर्चा नहीं करते हैं। किशोरियों में झिझक होने के कारण ये कह नहीं पाती हैं। विभिन्न प्रकार के समाचार-पत्रों से प्राप्त जानकारी जो कि यौन रोग के विज्ञापन अथवा झोला-छाप वैद्य, हकीम, डॉक्टर से यौन रोग का निदान चाहते हैं। सही जानकारी के अभाव में यौन रोग बढ़ता जाता है। किशोर भयभीत होते हैं और यौन कुंठा से ग्रसित हो जाते हैं। यौन शिक्षा को नैतिक शिक्षा के रूप में प्रदान करें ताकि किशोर यौन रोगों से ग्रस्त ना हो।

विभिन्न प्रकार के शोध अध्ययनों में पाया गया है कि देशियों के पास जाने वालों में 40 फीसदी विद्यार्थी होते हैं और इनमें से 12 फीसदी स्कूली किशोर होते हैं। एड्स व गुप्त रोगों का यौन संचारित रोगों (एसटीडी) पर काबू पाने के लिये सरकार द्वारा चलाये जा रहे प्रचार अभियान के बावजूद एड्स व एसटीडी के रोगियों की संख्या बढ़ रही है। यौन कुंठा की परिणति असुरक्षित यौन संबंधों के कारण होती है फिर भी किशोर अपनी यौन लिप्ता की पूर्ति के लिये इसके खतरे से बेखबर रहकर तरह-तरह के हथकंडे अपनाते हैं। यदि किशोरों और किशोरियों को यौन शिक्षा के माध्यम से नैतिक रूप से मजबूत कर दिया जाये और उनकी नकारात्मक सोच को सकारात्मक दिशा में मोड़ दिया जाये तो यौन रोग और यौन अपराधों पर काबू पाया जा सकता है। यौन शिक्षा से तात्पर्य किशोरों को नैतिक मूल्य बताने से है जिसमें उनको उम्र बढ़ने के साथ-साथ यौनांगों और शरीर में होने वाले परिवर्तन, विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण, अल्पायु में यौन संबंध कायम करने से होने वाले खतरों के बारे में अवगत कराया जाए। यौन शिक्षा देने पर समाज में युवक-युवतियों में यौन उच्छृंखलता एवं अनैतिक यौन क्रियाओं पर

एक सीमा तक पाबंदी लग सकती है। यौन शिक्षा को हमारे देश में बहुत ही संकुचित दायरे में लिया जाता है। अधिकांश लोग खुलकर सेक्स संबंधी बातें नहीं कर पाते हैं। इसमें हमारी सामाजिक और शैक्षिक व्यवस्था का दोष है। जबकि यौन शिक्षा का उद्देश्य लोगों को उत्तरदायित्वपूर्ण जीवन शैली में डालना है। यौन शिक्षा के अभाव के कारण अनेक लोग दिग्भ्रमित रहते हैं। हालांकि हमारे समाज में यौन शिक्षा दी जाये या नहीं इस विषय पर मतभेद है फिर भी नई पीढ़ी को एड्स और अन्य रोगों से बचाना है तो यौन शिक्षा पर विशद रूप से विचार-विमर्श करने की आवश्यकता है। किशोर एवं किशोरियों को यौन शिक्षा स्कूली शिक्षा के दौरान सलाहकार डॉक्टर और विशेषज्ञ प्रशिक्षित शिक्षकों की देखरेख में दी जानी चाहिए।

शिक्षा की भूमिका-

शिक्षा के द्वारा ही अवस्था के अनुसार यौन शिक्षा को प्रभावी ढंग से समझा सकते हैं। शारीरिक परिवर्तनों से अवगत कराके सकारात्मक चिन्तन की तरफ ले जा सकते हैं। किशोरों को वास्तविक ज्ञान प्राप्त कराया जा सकता है। स्वास्थ्य के बारे में अवगत कराया जा सकता है। पौष्टिक आहार की जानकारी भी शिक्षा के द्वारा प्राप्त हो सकती है। मादक पदार्थों- शराब, धूम्रपान से दूर रहना भी स्वास्थ्य के लिये लाभकारी है। प्रातः-सायं घूमने, व्यायाम करने, स्वस्थ हवा, खेलकूद आदि के बारे में अवगत शिक्षा के द्वारा ही कर सकते हैं। किशोर मन भावुक होता है इसे समझ सकते हैं। यौनांगों के बारे में पूर्ण जानकारी प्रदान कर सकते हैं ताकि कोई भी किशोर झोला छाप या सड़क पर टैन्ट लगाकर बैठे वैद्य, हकीम, डॉक्टर के पास ना जाये। यदि कोई भी यौन बीमारी है तो उसका इलाज प्रशिक्षित डॉक्टर से ही करावाये।

कई किशोर एवं किशोरियाँ अपनी झिझक के चलते अपनी यौन बीमारी के बारे में कह नहीं पाती हैं। शारीरिक परिवर्तन होने के कारण बचने भी रहते हैं। किशोरों को स्वस्थ यौन शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए ताकि वे किसी भी भ्रम में ना रहें। अश्लील विज्ञापनों की तरफ उनका ध्यान ना जाये। किशोरियों को होने वाला मासिक स्राव एक जिन्दगी का हिस्सा है। इससे डरे नहीं खुलकर इस विषय में विशेषज्ञ से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। लड़कों में दाढ़ी-मूँछ उगने से संबंधित जिज्ञासा तथा उनकी आवाज भारी होना जननेन्द्रियों में परिवर्तन होना आदि से संबंधित उनकी घबराहट को शिक्षा के द्वारा ही दूर किया जा सकता है। सेक्स संबंधी गतिविधियों की जानकारी शिक्षा के द्वारा ही प्राप्त होती है। किशोर इस विषय में क्या सोचता है ? इसका भी ज्ञान शिक्षा के द्वारा ही हो सकता है। विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण सहज होता है। यह सामान्य प्रक्रिया है। शिक्षा के द्वारा ही उनको भावी जीवन में काम आने वाले व्यवहार, कार्य, वास्तविकता स्वस्थ यौन जानकारी प्रदान की जा सकती है। सही समय पर सही यौन शिक्षा की जानकारी देना विकसित होते फूल को मुरझाने से बचाना जैसा है। अतः यौन शिक्षा के प्रति जागरूकता में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका सिद्ध होती है।

संदर्भग्रंथ सूची-

1. ठाकुर, डॉ.डी.के. जीवन कौशल शिक्षा शिक्षण, मॉडर्न प्रिन्टर्स, जयपुर
2. शर्मा, प्रोफेसर बी.एन. अधिगम कर्ता का विकास तथा शिक्षण प्रक्रिया, साहित्य प्रकाशन-2012, आगरा
3. ओबेराय, डॉ. एस.सी., शर्मा डॉ. राजीव कुमार, लक्ष्मी बुक डिपो, बाल्यावस्था तथा बालकों का विकास
4. सक्सेना, डॉ. राधारानी, शिक्षण अधिगम के मनोवैज्ञानिक आधार-2009, प्रकाश नारायण नाटाणी, पुनीत प्रकाशन, जयपुर
5. अग्रवाल, ज्योति, वर्मा आर.एन., बाल मनोविज्ञान-2013, साहित्य प्रकाशन, आगरा
6. कपिल, एच.के., अनुसंधान विधियाँ-2001, एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा
7. भारतीय आधुनिक शिक्षा अकादमिक, सम्पादित - एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली
8. सिन्हा, सुलेमान, आधुनिक शिक्षा मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली-1994
9. रावजादा, डॉ. बी.एस. शिक्षा में अनुसंधान के आवश्यक तत्व, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर 1997
10. सम्पादित श्री मद्भगवद्गीता, गीता प्रेस, गोरखपुर

मूल्य बनाम कुपोषित बालिका

डॉ. उमा देवी कटियार

विभागाध्यक्ष (बी.एड. संकाय)

मोहिनी बी. मनवाणी गर्ल्स डिग्री कालेज, कानपुर (उत्तर प्रदेश)

ज्योत्सना कटियार

असिस्टेन्ट प्रोफेसर

पं. सहदेव प्रसाद त्रिवेदी महाविद्यालय, रमईपुर, कानपुर (उत्तर प्रदेश)



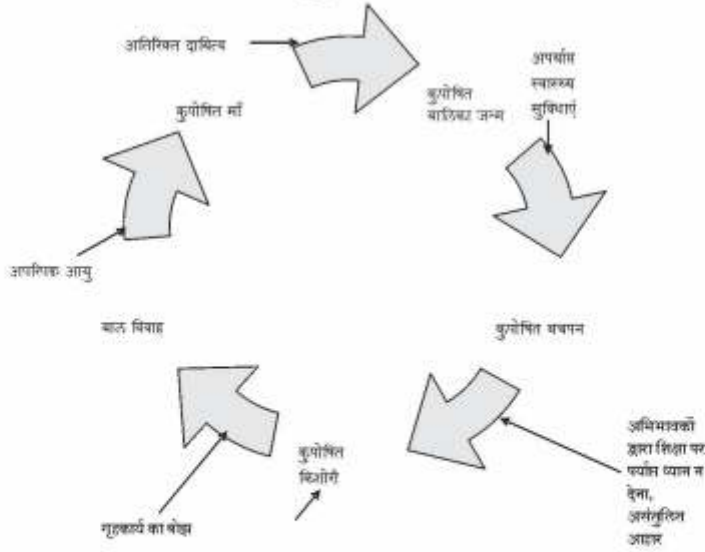
shodhshree@gmail.com

राष्ट्र को पतन के गर्त में गिरने से बचाने के लिये आज हमें उत्तम चरित्रवान नागरिकों की आवश्यकता है। भारतीय समाज में आज अनेक विकृतियाँ आ गई हैं इन विकृतियों से चारों ओर ब्राहि-ब्राहि मची हुई है। आज के भौतिकवादी युग में अक्सर हम अपनी जिन्दगी भाग दौड़ में जीते हैं लेकिन भागते रहना ही अच्छा नहीं है भागते रहने से थकान भी जल्दी ही आ जायेगी। यथार्थ में भागते हुये काम करना और रुक कर सोचना दोनों की आवश्यकता है। हम सब अपने कामों को शीघ्र ही समाप्त करना चाहते हैं अतः तेजी से काम करना तो समझ में आता है परन्तु परेशानी तब उत्पन्न होती है जब हम अपने अहम् फैसले भी दौड़ते भागते हुये लेने लगते हैं। हम रुक कर और ठहर कर कुछ सोचते ही नहीं। वास्तव में हमें ठहरने और भागने दोनों की जरूरत होती है। फैसले लेते वक्त हमें जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। उसपर गहराई से सोचना चाहिए और गहराई तक जाने के लिये एक किस्म के ठहराव की आवश्यकता होती है इसी ठहराव पर गम्भीरता से ध्यान देने की आवश्यकता है तो फैसला लेते वक्त से सोचना जरूरी है एक फैसला हो जाय तब भागदौड़ कर काम करने में कोई दिक्कत नहीं आती, बरना उन पर विकृतियों से जूझना पड़ेगा जिनसे आज भारतीय समाज जूझ रहा है। इसका मुख्य कारण है आज का मूल्य विहीन मानव।

मूल्ययुक्त मानव की कल्पना में सर्वाधिक योगदान माँ को होता है क्योंकि प्रथम शिक्षिका के रूप में माँ तथा प्रथम पाठशाला परिवार है। आज की बालिका कल की माँ है वह परिवार का भविष्य होती है, कल उसके कन्धों पर परिवार का बोझ होगा। वह परिवार की धुरी बनकर उसके विकास हेतु समर्पित हो जायेगी। अतएव उसकी शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि उसके चहुँमुखी व्यक्तित्व का विकास हो सके। उसका अस्तित्व परिवार के लिए भोजन बनाना, बच्चों को जन्म देना एवं उनका पालन पोषण करना मात्र नहीं है, बल्कि वह तो सृष्टि की सृजनकर्ता एवं परिवार की भाग्य विधाता है। अतः उसकी शिक्षा का प्रत्यक्ष मात्र उपाधियाँ न होकर उसे जीवन रुपी सागर से संघर्ष करने के लिए तैयार करना है। वह अपने अस्तित्व की रक्षा योग्य बन सके तथा अपनी सन्तानों को समाज और राष्ट्र के लिए उपयोगी बना पाये इस हेतु आवश्यक है कि उसकी अन्तर्निहित क्षमताओं का समुचित विकास किया जाय।

'माँ' व्यक्ति निर्माण व चारित्रिक विकास में अहम् भूमिका निभाती है। प्राचीन काल से ही बालक में मूल्य विकास की अधिकांश जिम्मेदारी माँ की रही है। वह अपने प्यार दुलार एवं अनुशासन से बालक के जीवन को नियमित एवं नियंत्रित करती है। अभिमन्यु माता के गर्भ से ही चक्रव्यूह में प्रवेश करना सीख गये थे। वीर शिवाजी, चन्द्रशेखर आजाद, सरदार भगत सिंह, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, महात्मा गाँधी एवं अन्य बड़े-बड़े मानवता के संरक्षक आदि को प्रथम शिक्षा परिवार में माँ से ही प्राप्त हुई। ऐसी सृजनकर्ता माँ के विकास के लिये हम कितने प्रयासरत हैं? यह प्रश्न हमें अपने आप से कर के उसके उत्तर खोजना होगा तथा एक सक्षम माँ की प्राप्ति हेतु उसके प्रथम स्वरूप बालिका का सर्वांगीण विकास करना होगा। बालिका के चहुँमुखी विकास हेतु सर्वप्रथम हमें उस चक्र का भेदन करना होगा जो बालिका को कुपोषण चक्र के रूप में जीवन भर उसको अपनी गिरफ्त में दबोचे रहता है।

कुपोषण



यदि हम उपरोक्त कुपोषण चक्र को भेद पायें, गर्भावस्था में माँ की पर्याप्त स्वास्थ्य देखभाल, पर्याप्त पोषण, कम से कम दिन में छह घण्टे आराम एवं सम्पूर्ण परिवार की ओर से उसकी मनोसामाजिक देखभाल की जाय तो गर्भ में पल रहे भ्रूण का पर्याप्त विकास हो सकेगा। तभी जन्म लेने वाली बालिका एक स्वस्थ शिशु के रूप में होगी। परन्तु आज स्थितियाँ इसके विपरीत हैं यदि हम परिवार की गतिविधियों पर ध्यान दें तो हम पाते हैं कि पालतू जानवर की देखभाल ज्यादा अच्छी प्रकार से की जाती है अपेक्षाकृत गर्भवती माँ के। गाय के गर्भवती होने पर उसकी पर्याप्त देखभाल में लोग जुट जाते हैं। उसको समय पर चारा पानी देना, अतिरिक्त आहार देना तथा उसको प्यार से सहलाना आदि। लेकिन घर में गर्भवती बहू से कुलद्वीपक तो स्वस्थ चाहते हैं परन्तु उसके स्वास्थ्य का खयाल रखने वाला कोई नहीं है। फल तो अच्छा चाहिये लेकिन उसके लिए जड़ का पोषण व पर्याप्त देखभाल आवश्यक है, ये तो भूल जाते हैं परिणाम स्वरूप कुपोषित सन्तान प्राप्त होती है फिर शुरु होता है दौरे कुपोषण के जारी रहने का। जागरूक समाज को आगे आना होगा और स्वास्थ्य सन्तान हेतु माँ की पर्याप्त देखभाल करनी होगी।

जन्म के उपरान्त गलत रुढ़ियों एवं प्रथाओं के वशीभूत होकर बच्चे को माँ का प्रथम दूध प्राप्त न होना ये कैसी विडम्बना है कि प्रकृति की कोई स्तनधारी पशु (माँ) अपने बच्चे को उसके प्राकृतिक आहार माँ के दूध से वंचित नहीं करती है जब कि मानव निर्मित प्रथायें बच्चे को उसके अधिकार से वंचित कर बकरी या गाय का दूध अथवा शहद आदि देती है और बच्चे को असुरक्षा एवं कुपोषण की ओर अग्रसर कर मूल्यों को गिरावट की रेखा पर खड़ा कर देती है। कृष्ण भगवान को पूतना नामक राक्षसी अपने स्तनों पर जहर लगाकर दूध पिलाने गयी थी ताकि वे मृत्यु को प्राप्त हो सकें, तब तो एक पूतना थी, परन्तु आज तो दूध के बोतल रुपी पूतना घर-घर में अपना स्थान दृढ़ता से कायम किये हुए हैं

और यही बोतल बच्चे के बड़े होने पर दारु (शराब) रुपी राक्षस की बोतल का रूप धारण कर लेती है और इसी प्रकार से मानव मूल्यों में उत्तरोत्तर गिरावट जारी रहती है।

बाल्यावस्था में एक अपरिपक्व माँ के द्वारा पालन पोषण जीवन मूल्यों के विकास में पर्याप्त रूप से सहायक नहीं हो पाता है। फलतः वो मूल्य जिनका बीजारोपण बालक के प्रथम पाँच वर्षों में हो जाना चाहिए, नहीं हो पाता और जंगली जानवर के समान मूल्य विहीन किशोर विकसित हो जाते हैं। किशोरावस्था तो स्वयं में एक कठिन काल है वह वह सांवेगिक अस्थिरता की अवस्था है जिसमें किशोर अनेक परिवर्तनों के संजाल में अपने को घिरा हुआ पाते हैं। कभी बचपन कभी प्रौढ़ के दोलन में गति करते हुये वैचारिक रूप से स्थिर नहीं हो पाते हैं। उसमें उनेक परिवर्तन स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। बयःसन्धि की इस अवस्था अर्थात् बचपन एवं प्रौढ़ के बीच अपने को पाकर अपने दायित्वों के निर्वाहन में किर्कतव्यचिम्बुद्ध हो जाता है ऐसे में यदि वह मूल्यों से सुसज्जित नहीं है तो “करेला कडुआ ऊपर से नीम चढ़ा” की कहावत चरितार्थ हो जाती है।

किशोरावस्था में बालिकाओं की दशा तो और भी सोचनीय हो जाती है वे सामाजिक क्रियाकलापों में स्वतंत्रतापूर्वक भाग लेना चाहती हैं परन्तु बन्धनों के कारण इसकी अनुमति परिवार से इन्हें प्राप्त नहीं हो पाती है जिससे वे कुण्ठाग्रस्त हो जाती हैं परिवार में तनाव उत्पन्न होता है जो मूल्यों के विकास में बाधा उत्पन्न करता है किशोरी के स्वयं के बारे में इतनी जिज्ञासायें होती हैं जिनका समाधान करने वाला कोई नहीं होता है जिससे कभी-कभी वे अज्ञानता बश ऐसे मार्ग पर आ जाती हैं जो हमारी संस्कृति के विरुद्ध होता है। तब प्रश्न उठता है उन मूल्यों का जो वे प्राप्त नहीं कर पाती हैं।

आज मूल्य युक्त जीवन का प्रश्न परिवार से ऊपर उठकर सेमिनार, गोष्ठियों का विषय बन गया है। प्राचीन समय में यह चिन्ता का विषय

नहीं था क्योंकि मूल्यों का बीजारोपण जीवन के शुरु के वर्षों में संयुक्त परिवार में ही हो जाता था लेकिन आज यह दुर्लभ प्रतीत होता है, क्योंकि आज की माँ शायद मूल्य युक्त नहीं है इसके लिये हमें बालिका को शिक्षा रुपी अनमोल आभूषणों से सुसज्जित कर मूल्य युक्त व मूल्यवान बनाना होगा। तब हम पायेंगे कि मूल्य रुपी अविरल धारा स्वतः ही फूट निकलेगी और हमारी सन्ताने मूल्य युक्त माँ को पाकर स्वतः ही मूल्य युक्त होती जायेंगी।

आज आवश्यकता है बदलाव की, लेकिन ध्यान रहे कि हर किसी को खुद को बदलने की जिम्मेदारी उठानी होगी। एक-एक व्यक्ति बदले तभी समाज बदल सकता है। जो लोग स्वयं को बदलने में लगे हैं। वे दुनियां को बदलने की फिक्र नहीं करते हैं। उनके आस-पास की दुनियां स्वयं ही बदल जाती है सहज एवं शांत मन में विवेकपूर्ण विचारों का उदय होता है। हमें सहज एवं शांत मन से ये संकल्प लेना है कि हमें अपनी बेटियों के पालन पोषण में किसी भी प्रकार की त्रुटि न करते हुये अपनी क्षमतानुसार उन्हे विकसित करना है तभी देश का भविष्य सुरक्षित हो सकता है, तभी हमारे नागरिक मूल्य युक्त हो सकते हैं क्योंकि मैथ्यू अर्नाल्ड के अनुसार “मूल्य युक्त जीवन का तीन चौथाई आधार अच्छा चाल चलन है” हमें अपने कार्य एवं व्यवहार दोनों में नैतिक होना चाहिये।

मातृशक्ति को मूल्य रुपी गहनों से सुसज्जित करने के लिये हमें निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है-

- घर का वातावरण स्नेहमयी होना चाहिए।
- परिवार के सदस्यों को उचित मूल्य अपनाने हेतु मार्गदर्शन करना चाहिए।
- समय-समय पर परिवार में धार्मिक कार्यों का आयोजन होना चाहिए।
- समाज में घटित घटनाओं का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए बालिका की सोच को सकारात्मक दिशा देना चाहिए।
- परिवार में सांस्कृतिक गतिविधियों का आयोजन करके बालिका में सहयोग व सहानुभूति की भावना विकसित करने का प्रयास करना चाहिए।

- पारिवारिक क्रियाकलापों में बालिका को मानसिक रूप से व्यस्त रखना चाहिए।
- परिवार के आचरण के द्वारा मौलिक शिक्षा प्रदान करना चाहिए।
- परिवार के लोगों को कथनी करनी में समानता रखनी चाहिए।

इन उपायों पर अमल द्वारा निश्चय ही आज भटके हुए समाज को नई दिशा प्राप्त हो सकती है। भारतीय समाज अध्यात्मिक और सांस्कृतिक परम्पराओं की दृष्टि से समृद्ध है। इन्हीं को आधार बनाकर जीवन-मूल्यों की शिक्षा देना समाज को उन्नति की सीढ़ी पर आगे बढ़ाने हेतु एक सार्थक कदम सिद्ध हो सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि हम परिवार के मध्य ऐसे सामंजस्यपूर्ण वातावरण के निर्माण हेतु प्रयासरत हों जो हमें भौतिकवादी अन्धी दौड़ में न शामिल कर आनन्द और सुख प्राप्ति की ओर अग्रसर करने में समर्थ हो सकें।

संदर्भग्रंथ सूची-

- 1 दारा, ए.के. (1998), ए स्टडी आफ दि स्कोप आफ वैल्यू एजुकेशन इन डिफरेंट सबजेक्ट्स आफ सैकेंडरी स्कूल करीकुलम इन उड़ीसा, इंडियन एजुकेशन एक्सट्रक्ट्स।
- 2 दुबे, गीता (2002), ए कम्पैरेटिव स्टडी ऑफ वैल्यूज एचोवमेंट मोटिवेशन एण्ड मोरल जजमेंट एमांग दि एडोलसेंट्स स्टडींग इन स्कूल्स रन बाय वैरियस एजुकेशनल एजेंसीज, अप्रकाशित पी.एच.डी. शोध प्रबंध, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ
- 3 गुप्ता, के.एल. (1977) इंडिविजुअल डिफरेंसेज इन वैल्यू पैटर्न एण्ड पर्सनालिटी टाइप ऑफ स्कूल गोइंग एडालसेंट्स ऑफ इस्टर्न, यू.पी. पी.एच.डी., शोध प्रबंधन, गोरखपुर विश्वविद्यालय
- 4 सक्सेना एन.आर., चतुर्वेदी शिक्षा उद्दीयमान भारतीय समाज में शिक्षक।
- 5 लाल एवं पटोड़- शैक्षिक चिन्तन एवं प्रयोग।

तीर्थराज पुष्कर की ऐतिहासिकता: एक विहंगावलोकन

बनवारीलाल यादव

शोधार्थी, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर



shodhshree@gmail.com

प्राचीन काल से ही भारतीय समाज में तीर्थ का विशेष महत्त्व रहा है। इस महत्त्व का उल्लेख वेद, पुराण, रामायण, महाभारत आदि महाग्रंथों में किया गया है। सम्पूर्ण भारतवर्ष में कुछ प्रमुख तीर्थ स्थलों में सर्वश्रेष्ठ एवं सभी तीर्थों का गुरु “पुष्करराज” राजस्थान की पावन धरती पर विद्यमान है। यह आदि तीर्थ कहलाता है।

भारत के राजस्थान राज्य में अरावली श्रेणी की घाटी में अजमेर नगर से पाँच मील पश्चिम में एक नगर तथा स्थानीय मंडी है। इसके निकटवर्ती क्षेत्र में ज्वार, बाजरा, मक्का, गेहूँ तथा गन्ने की उपज होती है। कलापूर्ण कुटीर वस्त्र उद्योग, काष्ठ चित्रकला तथा पशुओं के व्यापार के लिए यह विख्यात है। यहाँ पवित्र पुष्कर झील है तथा समीप में ब्रह्माजी का पवित्र मंदिर है, जिससे प्रति वर्ष अनेक तीर्थयात्री यहाँ आते हैं। अक्टूबर-नवंबर के महानों में यहाँ एक विशेष धार्मिक एवं व्यापारिक महत्त्व का मेला लगता है। इसका धार्मिक महत्त्व अधिक है। यहाँ कई प्रसिद्ध मंदिर हैं, जो औरंगजेब द्वारा ध्वस्त करने के बाद पुनः निर्मित किए गए हैं।

श्री ब्रह्मपुष्कर तीर्थ सभी तीर्थों का गुरु माना जाता है। यह तीर्थ अजमेर के उत्तर-पश्चिम में 11 किलोमीटर की दूरी पर अरावली पर्वत की सुरम्य घाटी में समुद्र तल से 330 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। अजमेर से पुष्कर का रास्ता प्रसिद्ध आनासागर झील के किनारे-किनारे होता हुआ नाग पर्वत को लांघ कर पुष्कर की घाटी में प्रवेश करता है। पुष्कर की गणना हिन्दुओं के पाँच मुख्य तीर्थों में की जाती है। चार अन्य मुख्य तीर्थ हैं - कुरुक्षेत्र, गया, गंगा तथा प्रयाग।

“पुष्कर” शब्द की प्राप्ति वैदिक साहित्य में भी होती है। वहाँ नीलकमल को पुष्कर नाम से सम्बोधित किया गया है। अथर्ववेद में इसकी मधुर गन्ध का वर्णन है। पद्मपुराण के अनुसार यहाँ पर ब्रह्मा के हाथ से कमल पुष्प गिर गया। अतः यह “तीर्थ पुष्कर” कहलाया। इस तीर्थ की प्राचीनता के सम्बन्ध में विचार किया जाय तो ई.पू. 5वीं सदी से लेकर 11वीं सदी ई. तक के साहित्यिक एवं पुरातात्विक प्रमाण इस तीर्थ की प्राचीनता प्रतिपादित करते हैं। वैदिक साहित्य को छोड़ दिया जाये तब भी रामायण के काल में इस तीर्थ की स्थिति के स्पष्ट प्रमाण रामायण में उपलब्ध होते हैं। राम ने दशरथ के निमित्त पुष्कर में श्राद्ध किया था, यह बात रामायण के साथ पुराणों में भी कह गई है। महाभारत में पुष्कर की महिमा का गुणगान किया गया है। नवीं सदी में चौहान वंश द्वारा पुष्कर पर आधिपत्य के प्रमाण “पृथ्वीराज विजय” तथा “हमीर महाकाव्य” में उपलब्ध होते हैं। 10वीं तथा 11वीं शताब्दी के प्राप्त शिलालेखों से भी पुष्कर की प्रागैतिहासिकता सिद्ध होती है। पद्मपुराण में पुष्कर की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कथा आती है कि ब्रजनाभ नामक राक्षस का नाश करने हेतु भगवान् ब्रह्मा ने जो कमल फेंका, वह कमल जिस स्थल पर गिरा, वह स्थल “तीर्थ” बन गया। ब्रह्मा जी ने यहाँ पर यज्ञ किया। यह यज्ञ कृतिका नक्षत्र में कार्तिक मास की पूर्णिमा को सम्पन्न किया। अतः प्रतिवर्ष कार्तिक पूर्णिमा पर यहाँ किए गए स्नान का विशेष महत्त्व है। पुष्कर में किए जाने वाले धर्मशास्त्रीय कृत्य स्नान, दान, तप, व्रत, श्राद्ध आदि का महत्त्व विभिन्न ग्रन्थों में प्रतिपादित किया गया है। पुष्कर में जगत् स्रष्टा ब्रह्मा का स्थान है। कार्तिक

मास में कुरुक्षेत्र एवं गंगा स्नान से प्राप्त पुण्य से अधिक पुण्य की प्राप्ति यहाँ कृत स्नान से होती है।¹ विभिन्न पुराणों एवं महाभारत आदि में कहा गया है कि पुष्कर में स्नान से सौ अग्निहोत्री के तुल्य पुण्य की प्राप्ति होती है। यम ने भी कहा है 'कार्तिकी पुष्करे स्नात सर्वपापे प्रमुच्यते।'²

पुष्कर के उद्भव का वर्णन पद्मपुराण में मिलता है। कहा जाता है, ब्रह्मा ने यहाँ आकर यज्ञ किया था। हिंदुओं के प्रमुख तीर्थस्थानों में पुष्कर ही एक ऐसी जगह है जहाँ ब्रह्मा का मंदिर स्थापित है। ब्रह्मा के मंदिर के अतिरिक्त यहाँ सावित्री, चंद्रनीारायण, वाराह और शिव आत्मेश्वर के मंदिर हैं, किंतु वे आधुनिक हैं। यहाँ के प्राचीन मंदिरों को मुगल सम्राट् औरंगजेब ने नष्टभ्रष्ट कर दिया था। पुष्कर झील के तट पर जगह-जगह पक्के घाट बने हैं जो राजपूताना के देशी राज्यों के धनीमानी व्यक्तियों द्वारा बनवाये गये थे।

पुष्कर का उल्लेख रामायण में भी हुआ है। सर्ग 62 श्लोक 28 में विश्वामित्र के यहाँ तप करने की बात कही गई है। सर्ग 63 श्लोक 15 के अनुसार मेनका यहाँ के पावन जल में स्नान के लिए आई थीं।

सौची स्तूप दानलेखों में, जिनका समय ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी है। कई बौद्ध भिक्षुओं के दान का वर्णन मिलता है जो पुष्कर में निवास करते थे। पांडुलेन गुफा के लेख में, जो ईस्वी सन् 125 का माना जाता है, उषमदवत्त का नाम आता है। यह विख्यात राजा नहपाण का दामाद था और इसने पुष्कर आकर 3000 गायों एवं एक गाँव का दान किया था।

इन लेखों से पता चलता है कि ईस्वी सन् के आरंभ से या उसके पहले से पुष्कर तीर्थस्थान के लिए विख्यात था। स्वयं पुष्कर में भी कई प्राचीन लेख मिले हैं जिनमें सबसे प्राचीन लगभग 925 ई. का माना जाता है। यह लेख भी पुष्कर से प्राप्त हुआ था और इसका समय 1010 ई. के आसपास माना जाता है।

भगवान श्रीविष्णु की नाभि से प्रकट हुए इस कमल को ही वेद पाठी ऋषि पुष्कर तीर्थ कहते हैं। इसमें लोककर्ता ब्रह्माजी ने यज्ञ करने निमित्त वेदी बनवायी और ब्रह्माजी ने तीन पुष्करों की स्थापना की।³ उपवदात की नासिक शिलालेख (संख्या-10) में इन कुण्डों पर इसके द्वारा दिये गये दानों का उल्लेख है।⁴ यह तीन पुष्कर ब्रह्म पुष्कर, विष्णु पुष्कर, शिव पुष्कर के नाम से जगत् प्रसिद्ध हुए। इन तीनों कुण्डों में स्नान करके मनुष्यों के पाप नाश होंगे ऐसे कहकर ब्रह्मा जी ने यज्ञ स्थान के लिए इन्द्र मार्ग के उत्तर में प्राचीन सरस्वती तक नंदा के पूर्व में कन्यास्त तक योजन प्रमाण भूमि ठहराई और तभी से यह स्थान पुष्कर तीर्थ कहलाया और इस प्रकार यह स्थान सब प्राणियों को स्वर्ग तथा मोक्ष देने वाला होगा तथा यहाँ एक योजन भर के भीतर कीट, पतंग, पशु-पक्षी भी मर कर मोक्ष को प्राप्त होंगे।⁵ विष्णुधर्म सूत्र⁶ में आया है कि पुष्कर में श्राद्ध करने से अनन्त फल की प्राप्ति होती है।

ब्रह्मवैवर्त पुराण⁷ के प्रकृतिखण्ड में वर्णित है कि पुष्कर में तपस्या कर व्यास ने वेदों के विभाग व पुराण रचना का धर प्राप्त किया। महर्षि

वृहस्पति ने श्री पुष्कर में तपस्या कर देवगुरु पद प्राप्त किया। वायुपुराण में पुष्कर में कृत श्राद्ध को अक्षय फलवाला कहा गया है-

“पुष्करेष्वक्षयं श्राद्धं तपश्चैव महाफलम्।”⁸

अग्निपुराण⁹ में कहा गया है कि यहाँ आकर पितृ देवाचन करने वाला अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त कर ब्रह्मलोक को जाता है। कार्तिक मास में अन्नदान कर ब्रह्मलोक प्राप्त करता है।

महाभारत के वनपर्व में पुष्कर को तीर्थराज कहकर सम्बोधित किया गया है। यहाँ कहा गया है कि यहाँ पर ऋषि, मुनि, गन्धर्व, अप्सरा व देवों ने तपस्या कर दिव्यफल प्राप्त किए हैं।¹⁰ पुष्कर में एक भी विप्र को भोजन करा कर इह लोक व परलोक में प्रसन्नता की प्राप्ति होती है-

अप्येक भोजयेद्विप्रं पुष्करारण्यमाश्रित।
तेनासौ कर्मणा भीष्म प्रेत्य चेह च मोदते।।”¹¹

वन पर्व 80, 81 व 87 में पुष्कर की महिमा का विस्तार से विवेचन किया गया है। यज्ञ के लिए स्थान खोजते ब्रह्मा के हाथ से गिरकर कमल का पुष्प तीन स्थलों पर गिरा वहाँ पर जल के स्रोत फूट पड़े। यही क्रमशः ज्येष्ठ, मध्यम व कनिष्ठ पुष्कर कहलाये।¹² ज्येष्ठ पुष्कर में प्रातः, मध्यम में मध्या में एवं कनिष्ठ पुष्कर में सांय स्नान करने वाला स्वर्ग प्राप्त करता है।¹³ तीनों पुष्कर के विस्तार के विषय में यहाँ वर्णित है-

मध्यमाद्योजनं स्वर्गं कनिष्ठार्हयोजनम्।
ज्येष्ठकुण्डाल्पुन ख्यातो हस्तप्राय शुभार्त्मीभः।।”¹⁴

कृत्तिका योग में कार्तिक मास में स्नान से जन्म, मरण व पाप से मुक्ति मिलती है। ज्येष्ठ, मध्यम व कनिष्ठ तीनों पुष्कर में पूजन व स्नान किया जाता है और परिक्रमा की जाती है तो इसे पंचकोसी परिक्रमा कहते हैं।

महर्षि विश्वामित्र ने गायत्री मंत्र की रचना पुष्कर में ही की थी। आचार्य भरत ने अपना 'नाट्यशास्त्र' भी यहीं लिखा था। जमदाग्नि ऋषि और अगस्त मुनि ने यहाँ तपस्या की। भगवान राम, कृष्ण तथा पाण्डव यहाँ आये। तपस्या, धर्म और साहित्य सृजन की रस परम्परा ने ही पुष्कर में कार्तिक माह में एकादशी से पूर्णिमा तक सांस्कृतिक मेले को जन्म दिया। ई.पू. की दूसरी-तीसरी शताब्दी से लेकर बारहवीं सदी तक पुष्कर में केवल सांस्कृतिक मेला भरता था। कार्तिक माह की एकादशी से पूर्णिमा तक यहाँ देश भर के विद्वानों की धूम मची रहती थी। जमकर शास्त्रार्थ होता था। आयुर्वेद के अद्भुत योगों और औषधियों पर गोष्ठियाँ होती थी।

इस पाँच दिवसीय सांस्कृतिक मेले का स्वर्च अजमेर के राजा उठाते थे। जैन राजा इन्द्रसेन या पद्मसेन ने भी इस परम्परा को पुष्ट किया। प्राचीन पुष्कर ब्राह्मणों, पण्डितों, जैन आचार्यों एवं बौद्ध भिक्षुओं के आकर्षण का केन्द्र था। शंकराचार्य, जिनसूरी, जिनवल्हभसूरि, हिमगिरी आदि विद्वानों के नाम पुष्कर के साथ जुड़े हुए हैं। भिक्षुक हिमगिरी पुष्कर ने वाराणसी के विद्वानों को शास्त्रार्थ में हराया था। यहाँ का मिहिरगिरि नामक भिक्षु कनिष्क के दरबार में सम्मानित हुआ

था। बड़ली एवं नासिक से प्राप्त शिलालेखों से ज्ञात होता है कि पुष्कर का एक अन्य नाम 'क्रौंचण तीर्थ' भी था। चौहान राजा अर्णोराज के शासनकाल में यहाँ बड़े पैमाने पर शास्त्रार्थ हुआ था जिसमें चौहान नरेश ने तीन करोड़ 'पसाव' का दान किया था। शास्त्रार्थ में जिनसूरी और जिनबल्लभ सूरी ने भी भाग लिया था। चौहान नरेश पृथ्वीराज तृतीय की पराजय के बाद पुष्कर की परिस्थितियाँ एकदम बदल गईं। दिल्ली सल्तनत काल में सांस्कृतिक मेले का सिलसिला रुक गया। बारहवीं से पंद्रहवीं शताब्दी में यह मेला कार्तिक स्नान तक सीमित रह गया। मुगल सेना में युद्ध के लिए घोड़ों की बढ़ती मांग के कारण उसने पुष्कर के कार्तिक मेले को पशु मेले का रूप दिया। ई. 1615 के मेले में यहाँ घोड़ों की सर्वाधिक बिक्री हुई। सत्रहवीं सदी के उत्तरार्द्ध तक यह पशु मेला दूर-दूर तक विख्यात हो गया। मराठा काल में (1650 से 1818 ई. तक) अजमेर व पुष्कर में लगभग पचास युद्ध हुए जिनके कारण पशु मेला नहीं चल पाया। ई. 1818 के बाद अंग्रेजी शासनकाल में पशु मेले ने पुनः जोर पकड़ा।

पर्यटन विभाग ने पुष्कर में जयपुर घाट पर जयपुर रियासत द्वार बनवाया गया अतिथिगृह 'मान भवन' और 'सरोवर पर्यटक विश्रामगृह' शुरु किया। यह जगह कम पढ़ने पर मेला स्थल के समीप वर्ष 1979 में पर्यटक ग्राम स्थापित कर टेण्टों में ठहरने की व्यवस्था की गई। डाकखाना आदि की भी व्यवस्था की गई। पर्यटन विभाग ने रिचेज कांटेज बनवाई है।

सावित्री मंदिर व गायत्री मंदिर

पुष्कर सरोवर से एक ओर एक पर्यटन की चोटी पर सावित्री देवी का मन्दिर है। उसमें तेजोमयी सावित्री देवी की प्रतिमा है। दूसरी ओर दूसरी पहाड़ी की चोटी पर गायत्री मंदिर है। यह गायत्री मंदिर 51 शक्तिपीठ में है। यहाँ सती का मणिबन्ध गिरा था।¹⁰

पंचकुण्ड

पुष्कर के पास ही नाग पहाड़ियों की तलहटियों में स्थित है। पंचकुण्ड जहाँ वन विभाग द्वारा विशाल बगीचे का निर्माण करवाया गया है। मान्यता यह है कि अज्ञातवास के दौरान पाण्डव कुछ समय तक इसी स्थान पर रहे। भगवान राम भी अपने चौदह वर्ष के वनवास के दौरान पंचकुण्ड आए और यहाँ मध्य पुष्कर के पास जिसे गया कुण्ड भी कहते हैं, अपने पिता दशरथ के मौक्ष के लिए पिण्डदान किया। इस स्थान को सुधाबाय भी कहते हैं। इसके पास ही ऐतिहासिक बूड़ा पुष्कर है।¹¹

कलालपीठ दधिमती

पुष्करपर्यटनार्न्तर्गत स्थित तीर्थों में दो तीर्थ शाक्त सम्प्रदाय के हैं जिनमें प्रथम तो श्री गायत्री मन्दिर पुष्कर है तथा दूसरा कलालपीठ दधिमती क्षेत्र हैं। पुष्कर तीर्थ से 32 कोस की दूरी पर यह कलालपीठ स्थित है जहाँ भगवती दधिमती का आविर्भाव हुआ। कहा जाता है कि त्रेतायुग में अयोध्यापति मान्धाता ने यहाँ एक सात्विक यज्ञ किया तो देवी ने प्रकट होकर उन्हे आशीर्वाद दिया। पुराणों के अनुसार

विकटासुर के वधार्थ इन भगवती नारायण ने अवतार ग्रहण किया और दधि समुद्र का मन्थन करके असुर का वध किया जो त्रेतायुग में माघ शुक्ल सप्तमी को मान्धाता के यज्ञ कुण्ड से आविर्भूत हुई थी।¹²

दधिमती का मंदिर अत्यन्त विशाल है जिसमें चार बड़े चौक हैं। मंदिर में प्राप्त शिलालेख से पता चलता है कि इसका निर्माण 289 गुप्त संवत् में हुआ। आज से 1300 वर्ष पूर्व मंदिर शिखर का निर्माण हुआ और संवत् 1735 वि. के लगभग लोकप्रिय अधिपति कमलापति के वंशजों ने यहाँ कुछ कमरे बनवाये। साथ ही संवत् 1903 वि. में ब्रह्मचारी विष्णुदास ने चार चौक भी बनवाये।

अजगंध महादेव

पुष्कर परिक्रमा क्षेत्र के अन्तर्गत ही नागादि पर्वत पर विद्यमान है प्रसिद्ध क्षेत्र 'अजगंधमहादेव।' यज्ञी समीप में अजयपाल बाबा का मंदिर, रुठिराणी व छकरा कुण्ड है। इस शैव तीर्थ की स्थापना के विषय में अनेक कथाएँ प्रचलित हैं। कहते हैं प्राचीन काल में वाणकलि नामक दैत्य ने ब्रह्माजी को प्रसन्न करके देव व मनुष्यों से अभय होने का वर प्राप्त किया। शक्ति के मद में उन्होंने अमरावती पर अधिकार कर लिया। उसके अत्याचारों से देव व मनुष्य सभी पीड़ित थे, इस कारण इन्द्रादि देवों ने भगवान शंकर की शरण में जाकर उसे मारने की प्रार्थना की। तभी दैत्य शरण में जाकर उन्हें मारने की प्रार्थना करने गये। जब दैत्य ब्रह्माजी के दर्शन करने जा रहे थे तो शिव अज (बकरे) का रूप धारण कर उनके सम्मुख आए और उछल-उछल कर उन्हें उत्तेजित करने लगे। जहाँ शिवजी के पैर पड़े, वहाँ उनके तद्रूप बड़े-बड़े चित्त हो गए जो आज भी विद्यमान हैं। भगवान शिव ने उन्हें अपने सींगों पर ले पृथ्वी पर दे मारी उससे वाणकलि मर गए। देवों ने शंकरजी की स्तुति की तथा वर माँगा कि आप इस पुष्कराख्य क्षेत्र में निवास करें। उसी समय पृथ्वी फाड़कर शिवलिंग प्रकट हुआ जो आज अजगन्ध नाम से प्रसिद्ध है। शिव ने कार्तिक चतुर्दशी को वाणकलि का वध किया था अतः जो व्यक्ति कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी को शिवलिंग का दर्शन करता है उसे साक्षात् शिव का पुण्य प्राप्त होता है।

उक्त मंदिर के नीचे अजयपाल बाबा का मंदिर तथा छकरा (चक्र) कुण्ड है। अजयपाल बाबा का मंदिर पर भाद्रपद षष्ठी को मेला लगता है। यहाँ स्थित छकराकुण्ड में सदैव शुद्ध जल बहता रहता है। यहाँ की लोक मान्यता है कि शिव-लिंग का दर्शन करके जो व्यक्ति छकराकुण्ड में स्नान करता है उसकी मनोकामना पूरी होती है।

अजयपाल एक परम शिव भक्त थे। उन्होंने शिव की कई वर्ष तक तपस्या की थी। एक बार जब वे अपनी पत्नी कटा रानी के साथ पहाड़ियों में विचरण कर रहे थे तो उन पर चोरों ने आक्रमण किया। रानी बच्चों सहित भागी मगर चोरों ने उनका हाथ तलवार से काट दिया। रानी पहाड़ी के नीचे उतरकर सती हो गई जहाँ उनका मंदिर 'कटारानी का मंदिर' के नाम से विख्यात है। अजयपाल ने शिव की आराधना करके सत मांगा। शिव ने स्त्री मोह में पीड़ित अजयपाल का क्रोधित हो भर्त्सना की। तब उसने भगवान की सेवा का व्रत ग्रहण कर

वहीं निवास किया। पद्मपुराण सृष्टिखण्ड में इस तीर्थ का उल्लेख करते हुए कहा है कि पुष्कर यात्रा के दौरान श्रीराम में अजगन्धेश्वर के दर्शन कर शिव की स्तुति में शिवस्तोत्र का पाठ किया था-

अजगन्धं च देवेशं देवदेवं पिनाकिनम्।
अष्टांगप्राणिपातेन नत्वा रामखिलोचनम्॥¹¹

सरस्वतीमंदिर

अजमेर से 11 कि.मी. दूर हिन्दुओं के प्रसिद्ध तीर्थ स्थल पुष्कर में कार्तिक पूर्णिमा को पुष्कर मेला लगता है। जिसमें बड़ी संख्या में देशी, विदेशी पर्यटक भी आते हैं। हजारों हिन्दु लोग इस मेले में आते हैं व अपने को पवित्र करने के लिए पुष्कर झील में स्नान करते हैं। भक्तगण एवं पर्यटक श्री रंग जी एवं अन्य मंदिरों के दर्शन कर आत्मिक लाभ प्राप्त करते हैं।

राज्य प्रशासन भी इस मेले को विशेष महत्व देता है। स्थानीय प्रशासन इस मेले की व्यवस्था करता है एवं कला संस्कृति तथा पर्यटन विभाग इस अवसर पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन करते हैं।

इस समय यहां पर पशु मेला भी आयोजित किया जाता है। जिसमें पशुओं से संबंधित विभिन्न कार्यक्रम भी किए जाते हैं। जिसमें श्रेष्ठ नस्ल के पशुओं को पुरस्कृत किया जाता है। यह इस पशु मेले का मुख्य आकर्षण होता है।

भारत में किसी पौराणिक स्थल पर आम तौर पर जिस संख्या में पर्यटक आते हैं, पुष्कर में आने वाले पर्यटकों की संख्या उससे कहीं ज्यादा है। इनमें बड़ी संख्या विदेशी सैलानियों की है। जिन्हें पुष्कर खास तौर पर पसंद है। हर साल कार्तिक महीने में लगने वाले पुष्कर उंट मेले ने तो इस जगह को दुनिया भर में अलग ही पहचान दे दी है। मेले के समय पुष्कर में कई संस्कृतियों का मिलन सा देखने को मिलता है। एक तरफ तो मेला देखने के लिए विदेशी सैलानी बड़ी संख्या में पहुँचते हैं तो दूसरी तरफ राजस्थान व आसपास के तमाम इलाकों से आदिवासी और ग्रामीण लोग अपने-अपने पशुओं के साथ मेले में शरीक होने आते हैं। मेला रेत के विशाल मैदान में लगाया जाता है। ढेर सारी कतार की कतार दुकानें, खाने, पीने के स्टाल, सर्कस, झूले और न जाने क्या-क्या। उंट मेला और रेगिस्तान की नजदीकी है इसलिए उंट तो हर तरफ देखने को मिलते ही हैं। लेकिन कालांतर में इसका स्वरूप विशाल पशु मेले का हो गया है।

पुष्कर का ब्रह्मा मन्दिर

पुष्कर को तीर्थों का मुख माना जाता है। जिस प्रकार प्रयाग को तीर्थराज कहा जाता है, उसी प्रकार से इस तीर्थ को पुष्करराज कहा जाता है। पुष्कर की गणना पंचतीर्थों व पंच सरोवरों में की जाती है। पुष्कर सरोवर तीन हैं।

ज्येष्ठ पुष्कर के देवता ब्रह्माजी, मध्य पुष्कर के देवता भगवान विष्णु और कनिष्ठ पुष्कर के देवता रुद्र हैं। पुष्कर का मुख्य मन्दिर ब्रह्माजी का मन्दिर है जो कि पुष्कर सरोवर से थोड़ी ही दूरी पर स्थित है। मन्दिर में चतुर्मुख ब्रह्मा जी की दाहिनी ओर सावित्री एवं बायीं ओर गायत्री का मन्दिर है। पास में ही एक और सनकादि की मूर्तियाँ हैं, तो एक छोटे से मन्दिर में नारद जी की मूर्ति। एक मन्दिर में हाथी पर बैठे कुबेर तथा नारद की मूर्तियाँ हैं।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में उल्लिखित है कि अपने मानस पुत्र नारद द्वारा

सृष्टिकर्म करने से इन्कार किए जाने पर ब्रह्मा ने उन्हें रोषपूर्वक शाप दे दिया कि कृत्तुमाने मेरी आज्ञा की अवहेलना की है, अतः मेरे शाप से तुम्हारा ज्ञान नष्ट हो जाएगा और तुम गन्धर्व योनि को प्राप्त करके कामिनियों के वशीभूत हो जाओगे। तब नारद ने भी दुखी पिता ब्रह्मा को शाप दिया! आपने बिना किसी कारण के सोचे- विचारे मुझे शाप दिया है। अतः मैं भी आपको शाप देता हूँ कि तीन कल्पों तक लोक में आपकी पूजा नहीं होगी और आपके मंत्र श्लोक कवच आदि का लोप हो जाएगा। तभी से ब्रह्मा जी की पूजा नहीं होती है। मात्र पुष्कर क्षेत्र में ही वर्ष में एक बार उनकी पूजा-अर्चना होती है।

पूरे भारत में केवल एक वही ब्रह्मा का मन्दिर है। इस मन्दिर का निर्माण श्वालियर के महाजन गोकुल प्राक. ने अजमेर में करवाया था। ब्रह्मा मन्दिर की दीवारें लाल रंग की है तथा इसमें ब्रह्मा के वाहन हंस की आकृतियाँ हैं। चतुर्मुखी ब्रह्मा देवी गायत्री तथा सावित्री यहाँ मूर्तिरूप में विद्यमान हैं। हिन्दुओं के लिए पुष्कर एक पवित्र तीर्थ व महान पवित्र स्थल है।

वर्तमान समय में इसकी देख-रेख की व्यवस्था सरकार ने सम्भाल रखी है। अतः तीर्थस्थल की स्वच्छता बनाए रखने में भी काफ़ी मदद मिली है। यात्रियों की आवास व्यवस्था का विशेष ध्यान रखा जाता है। हर तीर्थयात्री, जो यहाँ आता है, वहाँ की पवित्रता और सौंदर्य को मन में एक याद के रूप में संजोये जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

- 1 महाभारत, आरण्यक पर्व, 80.55
- 2 तीर्थांक, कल्याण, पृ. 289
- 3 वेदव्यास, राजस्थान के लोकतीर्थ, पृ. 11
- 4 पौराणिक कोश, पृ. 256
- 5 पद्मपुराण, सृष्टि खण्ड, 15 अध्याय।
- 6 निर्णयसिन्धु, द्वितीय परिच्छेद।
- 7 तीर्थ प्रकारा, पृ. 484
- 8 नारदीयपुराण, 2/81/12, पद्मपुराण, 5/27/33
- 9 बम्बई ठाणे, जिल्द 16, पृ. 580
- 10 संक्षिप्त पद्मपुराण, तीर्थ की महिमा, पृ. 43,44
- 11 विष्णुधर्मसूत्र, 75/1-3
- 12 वायुपुराण, उत्तरार्द्ध अध्याय 15, श्लोक 5,9, पृ. 82
- 13 अग्निपुराण, अध्याय 109, श्लोक 5,9 व पृ. 82
- 14 अग्निपुराण, अध्याय 109, श्लोक 5,9 व पृ. 82
- 15 महाभारत, वनपर्व, 80/44
- 16 वहीं, 80/49
- 17 वेदव्यास, राजस्थान के देवालय, पृ. 32
- 18 स्कन्दपुराण, नागर खण्ड, अध्याय 45, श्लोक 17, पृ. 53
- 19 स्कन्दपुराण, नागर खण्ड, अध्याय 45, श्लोक 12
- 20 तीर्थांक, कल्याण, पृ. 290
- 21 तीर्थांक, कल्याण, पृ. 290
- 22 तीर्थांक, कल्याण, पृ. 294
- 23 पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड, 33/49

आधुनिक अविवाहित हिन्दू नारी की विवाह के प्रति अपेक्षाएं एवं मान्यतायें

डॉ. मनीष जोशी

व्याख्याता, श्री बलदेव राम मिर्धा राजकीय महाविद्यालय, नागौर



shodhshree@gmail.com

प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन में अनेक भूमिकाओं का निर्वाह करना होता है, या यह विचार रखा जा सकता है कि जीवन अनेक भूमिकाओं का एक सहयोग है जिन्हें विविध संस्थाओं के परिवेश में निभाना है। विविध भूमिकाओं में दो भूमिकाएं अहम स्थान रखती हैं- प्रथम है आर्थिक और द्वितीय है वैवाहिक या परिवार की भूमिका। परंतु इन दोनों भूमिकाओं में से आर्थिक भूमिका की अपेक्षा वैवाहिक भूमिका अत्यंत अहम है क्योंकि वैवाहिक भूमिका में प्राथमिक संबंध है और आर्थिक भूमिका में द्वितीयक संबंध सम्मिलित होते हैं। वैवाहिक भूमिका के प्राथमिक संबंध दो महत्वपूर्ण कार्य करते हैं- एक है आवश्यकता पूर्ति और दूसरा है सामाजिक नियंत्रण। जब व्यक्ति की आवश्यकता पूर्ति यानि की रति संतुष्टि, स्नेह, सहानुभूति, भोजन, वस्त्र, निवास आदि की पूर्ति करता है। यह व्यक्ति जब देखता है कि उसका जीवन साथी उसके लिये कोई भी कार्य करने को तैयार है तो वह भी यही करता है तथा यह व्यक्ति उसकी देखभाल करना अपना नैतिक कर्तव्य समझता है। भारत में हिन्दू विवाह की संस्था अत्यंत प्राचीन और परंपरागत है। किसी भी समाज में वैवाहिक संस्था एक आधारभूत संस्था मानी जा सकती है। हिन्दू विवाह संस्था विश्व के समस्त सभ्य समाजों के विवाह संस्थाओं में अपना एक विशिष्ट स्थान रखती है। परंतु प्रत्येक समाज में किसी ने किसी रूप में परिवर्तन अवश्य होता है। इसलिए हिन्दू समाज में प्रचलित विवाह की संस्था में भी निरंतर परिवर्तन होते रहे हैं। आज के समाज में आधुनिक अविवाहित हिन्दू नारी की भी विवाह के प्रति कुछ अपनी अपेक्षाएं एवं मान्यतायें हैं, परिवर्तित विचारधारायें हैं। आज स्त्रियों में काफी सामाजिक जागरूकता आ चुकी है। अब वे पर्वों में सिमटी हुई अपने आपको घर की चाहरदीवारी में बंद नहीं रखती। आधुनिक स्त्रियों में जातीय-नियमों के प्रति भी उदासीनता पाई जाती है, वे ऐसे प्रतिबंधों की अधिक चिंता नहीं करती। आजकल अंतर्राज्यीय विवाह भी होने लगे हैं, प्रेम-विवाहों और विलंब विवाहों की संख्या भी बढ़ रही है। समाज के लिए कुछ स्त्रियों द्वारा प्राप्त की गई उल्लेखनीय सफलता उतना महत्व नहीं रखती जितना इस बात का अध्ययन कि विगत अपेक्षाओं एवं मान्यताओं में कितना परिवर्तन हुआ है। प्रस्तुत अध्ययन का यही एक मात्र उद्देश्य है।

शोध प्रारूप -

प्रस्तुत अध्ययन जोधपुर शहर के हिन्दू परिवारों से प्राप्त तथ्यों पर आधारित है। सविचारपूर्ण निदर्शन पद्धति के आधार पर जोधपुर से 50 हिन्दू परिवारों का चयन करके अविवाहित हिन्दू नारियों का अध्ययन किया गया। अध्ययन के अंतर्गत उच्च तथा मध्य पारिवारिक स्तर के परिवारों को सम्मिलित किया गया है। सूचनादाताओं से तथ्य संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची प्रविधि को उपयोग में लाया गया।

उत्तरदाताओं की पारिवारिक पृष्ठभूमि आयु एवं आय -

जोधपुर शहर में 50 हिन्दू परिवारों के सर्वेक्षण में उत्तरदाता नारियों की आयु 18 से 28 वर्ष हैं, क्योंकि भारतीय संविधान में 1978 के संशोधन में लड़की की आयु 18 वर्ष मान्य है। उत्तरदाताओं की पारिवारिक मासिक आय 6500 रुपये से अधिक है। जिसमें पारिवारिक स्वरूप एकाकी 64 प्रतिशत तथा संयुक्त 36

प्रतिशत हैं। एकाकी परिवार की बढ़ोतरी तथा परंपरागत मूल्यों के हास के कारण सह शिक्षा पद्धति में भी गति आई है और 76 प्रतिशत लड़कियां सह शिक्षा पद्धति को उचित मानती हैं। उनका विचार है कि इसके कारण वैचारिक खुलापन, समझ के द्वारे में बढ़ावा, परस्पर सामंजस्य की भावना का विकास एक स्वतंत्र वातावरण उपलब्ध होता है तथा वहीं दूसरी ओर 24 प्रतिशत लड़कियों का विवाह के प्रति संदेश बदला हुआ है। वह प्रेम विवाह के प्रति आकर्षित है। इसका प्रबल कारण है, परिवर्तनोन्मुख परिस्थिति।

पिछले 40-50 वर्षों में स्त्री पुरुषों के विवाह की आयु में वृद्धि हुई। विवाह की आयु बढ़ने से अब विवाह संबंधी निर्णयों में युवती अपने अधिकारों का प्रयोग करने लगी है। लड़कियां अधिक समय तक अपने पिता के घर रहती हैं, और उच्च शिक्षा तथा तरह-तरह के प्रशिक्षण प्राप्त करती हैं। अध्ययन के अंतर्गत 18 प्रतिशत लड़कियों ने विवाह की उचित उम्र 18-22 वर्ष बताई है परंतु इनमें एक सामान्य बात यह है कि यह लड़कियां स्वयं इस उम्र से जुड़ रही हैं तथा शिक्षा भी सामान्यतः इंटर या स्नातक करती हुई है तथा इसमें उनकी अपरिपक्वता झलकती है। विवाह की औसतन उचित उम्र 60 प्रतिशत सूचनादाताओं के अनुसार 22-26 वर्ष है तत्पश्चात् 12 प्रतिशत लड़कियां उचित उम्र 26 से अधिक मानती हैं।

प्रेम विवाह के अंतर्गत जातीय एवं अन्तर्जातीय विवाह के लिये जब जीवन साथी का चुनाव एक-दूसरे के द्वारा किया जाता है तो इसे रोमांस पर आधारित विवाह या प्रेम-विवाह कहते हैं। जब इनका चुनाव अभिभावकों या संबंधियों या मित्रों द्वारा होता है तो इसे व्यवस्थित विवाह (अरेज मैरिज) की संज्ञा दी जाती है। आधुनिक युग में बदलते हुए परिवेश में जहां 56 प्रतिशत विवाह, व्यवस्थित विवाह की तरह हो रहे हैं, वहीं 44 प्रतिशत विवाह प्रेम विवाह के रूप में सर्वेक्षण से सामने आये हैं। सर्वेक्षण में युवतियों का यह मानना है कि 50 प्रतिशत प्रेम विवाह, सफल विवाह है चाहे वह जातीय हो या अन्तर्जातीय। परन्तु 44 प्रतिशत युवतियां जातीय प्रेम विवाह को पसन्द करती हैं।

सहशिक्षा को उचित पद्धति मानने वाली 76 प्रतिशत युवतियां पुरुषों के साथ नौकरी करने की सुविधा के फलस्वरूप जाति-पाति के बन्धनों को तोड़कर 44 प्रतिशत अन्तर्जातीय विवाह करने के लिए प्रोत्साहित किया है, परन्तु फिर भी 56 प्रतिशत युवतियां अपने जातीय परम्परागत हिन्दू आदर्श मूल्यों से अप्रत्यक्ष व प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हैं। परन्तु दूसरी ओर अन्तर्जातीय विवाह के दोषों (1) सामंजस्य की समस्या (2) ऊँच-नीच के दोषों (3) असुरक्षा की भावना को 36 प्रतिशत युवतियां स्वीकार नहीं करती, वहीं 32 प्रतिशत युवतियां इन दोषों को स्वीकार करती हैं। 40 प्रतिशत युवतियों का मानना है कि इस तरह की परेशानी जाति के अन्तर्गत भी प्रस्तुत हो सकती है।

अन्तर्जातीय विवाहों के होने से जीवन-साथी के चुनाव का क्षेत्र विस्तृत हो गया है। चुनाव का क्षेत्र विस्तृत होने के कारण बेमेल विवाहों का भी अन्त हो गया है तथा जातिगत अनेक समस्याएँ स्वतः समाप्त हो गयी हैं। उदाहरणतः वर-मूल्य प्रथा के साथ अनेक कुप्रथायें भी

समाप्त सी होने लगी है, परन्तु यदि आलोचनात्मक दृष्टि से अन्तर्जातीय विवाहों पर विचार करें तो ज्ञात होगा कि इसकी एक-दो बुराइयां भी हैं - जैसे दम्पति का अपने समाज एवं जाति से कट जाना और इनसे सम्बन्धित समूह के लोगों द्वारा किसी भी प्रकार की कोई सहायता नहीं मिलती है किन्तु अन्तर्जातीय विवाह करने वाले लोग अपने सुदृढ़ आर्थिक स्थिति एवं कानून के द्वारा इन बुराइयों का मुकाबला कर सकते हैं।

आज से तीस-पैंतीस वर्ष पहले अन्तर्जातीय विवाह बहुत थोड़े होते थे। अपनी जाति के बाहर विवाह करने वालों को वास्तव में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। वर्तमान समय में, ऐसे विवाह करने वाले लोगों की कठिनाइयां बहुत ही कम हो गई हैं। स्त्रियों में उच्च शिक्षा के प्रसार-प्रचार से युवा पीढ़ी में अन्तर्जातीय विवाहों के प्रति रुचि बढ़ती जा रही है इसका प्रभाव सर्वेक्षण में स्पष्टतः समझ में आता है। समग्र रूप में ऐसा प्रतीत होता है कि अन्तर्जातीय विवाह का भविष्य बहुत ही उज्ज्वल है और समय के साथ-साथ ऐसे विवाहों को समाज की अधिकाधिक स्वीकृति प्राप्त होती जा रही है।

जीवन साथी के प्रति दृष्टिकोण-

इससे पूर्व कि विवाह संस्कार सम्पन्न हो, पहली तथा जरूरी शर्त उचित साथी का चुनाव है। ठीक साथी का चुनाव इतना महत्वपूर्ण है कि गलत चुनाव हो जाने की सूरत में परिवार मुसीबत में फंस जाता है।

विवाह में स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध में सम्बद्ध व्यक्तियों का व्यक्तित्व महत्वपूर्ण है क्योंकि व्यक्तित्व ही व्यक्ति के समायोजन की प्रक्रिया को बनाता या मिटाता है। इसके लिये जीवन-साथी के चुनाव में पूर्ण स्वतंत्रता की आवश्यकता है। अभी गत तीन या चार दशकों से ही माता-पिता ने विवाह के लिये जीवन साथी की पसन्द में बच्चों की सलाह लेना प्रारम्भ किया है। प्रारम्भ में तो केवल लड़कों से ही इस विषय में उनकी सहमति प्राप्त की जाती रही, लेकिन आधुनिक समय में लड़कियों की भी इच्छा पूछी जाने लगी है। अध्ययन में पाया गया कि 44 प्रतिशत युवतियां प्रेम विवाह पसन्द करती हैं। वहीं वह व्यवसायपरक संलग्न व्यक्ति से अधिक, नौकरी-पेशा जीवन-साथी को ज्यादा पसन्द करती हैं तथा प्रेम विवाह उच्च आदर्शों से परिपूर्ण गुणों को अत्यधिक पसन्द करती हैं। दूसरी तरफ व्यवस्थित विवाह में युवती की अपेक्षा रहती है कि वह उच्च शिक्षित, सुन्दर तथा होशियार जीवन-साथी को पायें। विदेशी जीवन-साथी से अधिक, स्वदेश में, मध्यम वर्गीय आय प्राप्त व्यक्ति को 88 प्रतिशत युवतियां पसन्द करती हैं। उनका विचार है कि "अपनी संस्कृति, परम्परा तथा परिवार के समीप रहती है तथा यह देश प्रेम से जुड़ी हुई है।"

जीवन साथी का चुनाव करते समय कभी-कभी ऐसी परिस्थिति उपस्थित हो जाती है, जिसमें लड़की को अपने से "कम उम्र के व्यक्ति" को अपने साथी के रूप में चुनाव करना पड़ता है। 56 प्रतिशत युवतियों के दृष्टिकोण में कम उम्र के व्यक्ति से विवाह करने में, वह अपने जीवन-साथी के प्रति आदर-भाव, अपने से कम समझदार तथा उच्च स्थान नहीं दे पाती है। परन्तु 12 प्रतिशत युवतियों के कम

उम्र के व्यक्ति के साथ विवाह करने में कोई आपत्ति नहीं समझती हैं, वहीं दूसरी ओर 12 प्रतिशत “कभी नहीं” का जवाब देती है तथा 20 प्रतिशत समयानुसार अपने को बदलने को तैयार हैं तथा मानती है कि किसी विशेष परिस्थिति में वह विवाह करने को तैयार हो जायेंगी।

इस युग में वैवाहिक विज्ञापन भी साथी के चुनाव में प्रचलित है। इस संदर्भ में कुछ अध्ययन उपर्युक्त सूचनाएँ देते हैं। वह अध्ययन दर्शाते हैं कि साथी के चुनाव की प्रक्रिया केवल शिक्षित लोगों द्वारा ही प्रयोग होते हैं लेकिन महत्वपूर्ण यह है कि विज्ञापन देने, छान-बीन करने, पारिवारिक पृष्ठभूमि का निरीक्षण करने, पत्र-व्यवहार करने आदि का समस्त कार्य माता-पिता ही करते हैं। लोग विज्ञापन की सहायता तभी लेते हैं जब वे अपने बच्चों के लिये सामान्य रूप से साथी के चुनाव में असफल होते हैं तब वह विधि चुनाव का वृहद क्षेत्र प्रदान करती हैं परन्तु 38 प्रतिशत लोग इस विधि को नापसन्द करते हैं क्योंकि विज्ञापन तथ्य विज्ञापनकर्ता के गुणों को ठीक से प्रदर्शित नहीं करते हैं।

परम्परागत मूल्यों से विचलन-

जहाँ भारत में परंपरागत हिन्दू कानून के अनुसार विवाह एक धार्मिक संस्कार है। प्रत्येक हिन्दू के लिये एक आवश्यक संस्कार अथवा पवित्र अनुष्ठान है। हिन्दू धर्म ग्रंथों में विवाह को एक दायित्व बतलाया गया है, क्योंकि एक अविवाहित स्त्री या पुरुष अधिकांशतः महत्वपूर्ण धार्मिक कार्यों को संपन्न नहीं कर सकते हैं। अतः भारत में विवाह धार्मिक कार्यों के समापन हेतु एक पवित्र संयोग है। संक्षेपतः हिन्दुओं में विवाह अनिवार्य है तथा यह धार्मिक संस्कार है जिसे सर्वेक्षण में 76 प्रतिशत युवतियों ने भी स्वीकारा है तथा वहीं 24 प्रतिशत युवतियाँ एक स्तर तक उचित ठहराती हैं।

परंपरागत हिन्दू समाज में विवाह के उद्देश्य धर्म, प्रजा तथा रति है। इनमें से धर्म को सर्वाधिक महत्व दिया गया है, तत्पश्चात संतानोत्पत्ति तथा यौन संतुष्टि को। अध्ययन में भी शत-प्रतिशत युवतियों ने इसे स्वीकारा है। वहीं दूसरी तरफ यह पूर्व जन्म के कर्म-फल को 64 प्रतिशत युवतियाँ नहीं स्वीकारती। शायद यहाँ आधुनिकता की मांग तथा परिवर्तनोन्मुख परिस्थिति है तथा वह उचित जीवन-साथी को न पाने पर अगले जन्म में उसका साथ देने से इंकार करती हैं बल्कि वर्तमान जन्म में भी उचित व्यवहार नहीं करने पर अलग होने को उचित ठहराती हैं। परंपरागत समाज की युवती की तरह जीवन-साथी को हर-हाल में स्वीकार नहीं करती।

जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष है जिसे अध्ययन की 36 प्रतिशत युवतियाँ स्वीकारती हैं तथा 36 प्रतिशत मोक्ष को नहीं मानती तथा वह उदासीन भाव प्रकट करती हैं। 24 प्रतिशत युवतियाँ वहीं तटस्थ हैं। वर्तमान अध्ययन का मूल उद्देश्य विवाह के प्रति युवतियों के दृष्टिकोण में होने वाले परिवर्तनों के साथ-साथ उनकी विवाह के प्रति क्या अपेक्षाएँ हैं, का अध्ययन करना रहा है। सर्वविदित है कि जीवन-मूल्यों में होने वाले परिवर्तन संस्थाओं को भी प्रभावित करते हैं। संस्थाओं का भौतिक पक्ष भले ही अपने मूल रूप में बना रहे परन्तु उनमें गुणात्मक परिवर्तन निश्चय ही आ जाता है- विवाह में सप्तपदी

का विरोध किसी युवती ने नहीं किया, वहीं एक भी उत्तरदाता ऐसा नहीं मिला तो सप्तपदी को सात जन्मों का साथ का आधार मानता हो। सर्वेक्षण से जो निष्कर्ष उभर कर आये हैं वह निश्चय ही एक नई दिशा की ओर इंगित करते हैं।

आधुनिक शिक्षित युवतियों की विवाह के प्रति मान्यतायें-

- विवाह सहभागिता है, न कि पुरुष पर निर्भरता।
- मोक्ष, कर्म से सुनिश्चित होता है, अविवाहित रहकर भी वह प्राप्त किया जा सकता है।
- विवाह आवश्यक है, पर जीवन की अनिवार्यता नहीं। बेमेल साथी या इच्छित पुरुष न मिलने से एकाकी जीवन आत्मनिर्भरता और सम्मान के साथ व्यतीत किया जा सकता है।
- अंतर्जातीय विवाह यदि पारस्परिक एवं पारिवारिक सहमति पर आधारित है तो बेमेल विवाह से निश्चय ही श्रेष्ठ है।
- पुरुष के चुनाव में आर्थिक पक्ष आवश्यक हैं परन्तु एक मात्र निर्धारक नहीं, उसके साथ-साथ शारिरिक और मानसिक सौंदर्य भी आवश्यक है। विवाह पुरुष से होता है न कि संपत्ति से।
- विवाह एक स्थायी संबंध है, पारस्परिक निर्भरता और सहयोग पर आधारित सहभागिता होनी चाहिए परन्तु इस स्थायी संबंध का अर्थ यह कदापि नहीं कि एक पक्ष दूसरे पर अत्याचार और उसका शोषण करता रहे और नारी उसे जन्म-जन्मान्तर का साथ मानकर सहती रहे।
- विवाह और युवती की सुरक्षा सह-सम्बद्ध है यह जीवन मूल्य आश्चर्यजनक रूप से परिवर्तित हो रहा है सामाजिक पर्यावरण स्वयं अस्सुरक्षा की तरफ बढ रहा है। पर नारी केवल अपने को ही असुरक्षित नहीं समझती, असुरक्षित है तो सभी है, विवाह उसका निदान नहीं। असुरक्षा का व्यक्तिगत स्तर पर सामना करने का आत्मविश्वास आज कहीं अधिक है। प्रतिउत्तर देने की क्षमता का विश्वास कदाचित नारी जागरूकता और शिक्षा का ही परिणाम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

- 1 अग्रवाल, ए- “वीमेंस स्टडी इन एशिया एंड पैसिफिक: दी आवर वॉग करेन्ट स्टेटस एण्ड नीडेड प्रायोरिटीज” ए.पी.डी.सी कालालम्बपुर (1983)
- 2 झा, उमाशंकर, पुजारी, प्रेमलता, “इंडियन वूमैन टुडे:- ट्रेडिशन, मॉडर्निटी एंड चेंजेज,” बॉस. 3. 1998 द्वितीय संस्करण
- 3 मजूमदार, बी. 11 “रोल ऑफ रिसर्च इन वीमेंस डवलपमेंट: ए केस स्टडी ऑफ आई.जी.एस.एस. आर प्रोग्राम ऑफ वुमेंस स्टडीज,” श्यामा शक्ति, बाल्यूम 1983
- 4 कपाडिया., के.एम. “मीरिज एंड फैमिली इन इंडिया,” आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, कलकत्ता 1981,

सामाजिक सुरक्षा का संगठित एवं असंगठित क्षेत्रों में प्रभाव

नीलम साहू

शोध छात्रा, रानी दुर्गावति विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्यप्रदेश)



shodhshree@gmail.com

सामाजिक सुरक्षा योजनायें वे योजनायें होती हैं जिसके अंतर्गत व्यक्ति की सामाजिक स्थिति एवं सुरक्षा संबंधी नीतियों का निर्माण किया जाता है जैसे- बीमारी की रोकथाम तथा इसका इलाज, बेरोजगारी की अवस्था में श्रमिक को सहायता देना और श्रमिकों को उचित मजदूरी और रोजगार प्रदान कर उसके जीवन को सुरक्षा प्रदान करना आदि। परंतु सुरक्षा का अभिप्राय केवल भौतिक साधनों को प्राप्त करना नहीं है बल्कि सुरक्षा एक ऐसी मानसिक अनुभूति है जिसके कारण व्यक्ति सुरक्षा का अनुभव करता है। और यह अनुभव व्यक्ति को केवल भौतिक या प्रत्यक्ष वस्तु की उपलब्धता से प्राप्त नहीं हो सकता बल्कि सुरक्षा प्राप्त करने वाले व्यक्ति को इस बात पर पूर्णतया विश्वास होना चाहिए कि जीवन में कभी भी आवश्यकता पड़ने पर उसे सम्पूर्ण सुविधाएं प्राप्त हो जाएगी। साथ ही एक राज्य का यह भी दायित्व बनता है कि वह सुरक्षा प्रदान करते समय यह सुनिश्चित कर ले कि सहायता और सुविधाओं की मात्रा और गुणवत्ता पर्याप्त है या नहीं।

सन् 1942 में अपनी सामाजिक सुरक्षा योजना प्रस्तुत करते समय बेवरीज ने कहा था कि सामाजिक एवं आर्थिक पुनर्निर्माण के मार्ग में पांच दानव (आवश्यकता, बीमारी, अज्ञानता, गंदगी और बेकारी) जो सबसे बड़ी बाधाएँ हैं। अतः वह संस्थात्मक व्यवस्था एवं संगठन जो इन पांच दानवों पर आक्रमण करने के उद्देश्य से संगठित हो सामाजिक सुरक्षा संगठन कहलाते हैं। सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने की मुख्यतः दो पद्धतियाँ हैं-

- सामाजिक बीमा
- सामाजिक सहायता

साथ ही कुछ लोग तीसरे प्रकार की पद्धति सामाजिक सेवा को अपनाते हैं।

सामाजिक सेवा सार्वजनिक बीमा में बीमाकृत व्यक्तियों विशेषकर कर्मचारियों की बेरोजगारी, बीमारी, मृत्यु आदि के वक्त सहायता प्रदान की जाती है। इसके द्वारा दी जाने वाली आर्थिक सहायता की राशि की व्यवस्था कर्मचारियों एवं नियोजकों के अंशदान से होती है। सामाजिक बीमा के अंतर्गत प्राप्त सहायता अधिकार स्वरूप मिलती है एवं सहायता राशि कानून द्वारा वर्णित होने के कारण इसमें अधिकारियों द्वारा स्वनिर्णय का अधिकार नहीं होता।

सामाजिक बीमा - सामाजिक बीमा का स्वरूप व्यापारिक बीमा से बिल्कुल अलग है। सामाजिक बीमा का उद्देश्य न्यूनतम जीवन स्तर का बनाये रखना है जबकि व्यापारिक बीमा ऐसा कोई उद्देश्य नहीं रखता। वही नहीं, व्यापारिक बीमा किसी व्यक्ति के जोखिमों के खिलाफ सुरक्षा की व्यवस्था करता है, जबकि सामाजिक बीमा अलग-अलग स्वभाव एवं तीव्रता वाली मुसीबतों के खिलाफ व्यवस्था करता है।

सामाजिक सहायता - सामाजिक सहायता के अंतर्गत उन लोगों को मदद पहुंचाई जाती है जो अपनी आकस्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकते अर्थात् जो निम्न साधन वाले हैं। इसके अन्तर्गत दी जाने

वाली राशि की व्यवस्था राज्य कोष से होती है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत आर्थिक स्थिति की जांच करने के उपरांत सहायता राशि का निर्धारण अधिकारियों द्वारा किया जाता है। इसके अंतर्गत आने वाली कुछ योजनाएँ हैं- वृद्धवस्था पेंशन, विधवाओं का पेंशन, निर्धन छात्रों के लिए छात्रवृत्ति आदि।

सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के उद्देश्य-

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्राणी होने के कारण उसको अनेक आवश्यकताओं का सामना करना पड़ता है। वह कभी दूसरों को आश्रय प्रदान करता है तो कभी स्वयं ही उसे दूसरों पर आश्रित रहना पड़ता है। आधुनिक यांत्रिक युग में वह अनेक प्रकार की दुर्घटनाओं का शिकार हो सकता है। इन दुर्घटनाओं से मुक्ति दिलाने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाए। सामाजिक सुरक्षा के अन्तर्गत मुख्यतः तीन उद्देश्यों को सम्मिलित किया गया है-

- हरजाना (Compensation)
- पुनर्स्थापन (Restoration)
- निवारण (Prevention)

हरजाने का संबंध आय सुरक्षा से है और इस विचार पर आधारित है कि जाखिमों के दौरान व्यक्ति और इससे परिवार की दोहरी मुसीबत (जिसमें बेसहारा होना तथा स्वास्थ्य, अंग, जीवन या काम का नुकसान दोनों शामिल हों) नहीं भुगतने देना चाहिए। पुनःस्थापन का मतलब है बीमार एवं असमर्थ का इलाज, पुनः रोजगार एवं पुनर्वास और कुछ ढंगों में यह सामाजिक सुरक्षा के कार्यों से सम्बन्धित पुरानी धारणाओं का बदना है। निवारण का सम्बन्ध बीमारी, बेरोजगारी या असमर्थता के कारण उत्पादन क्षमता का नुकसान रोकना तथा रोकी जा सकने वाली बीमारी या बेकारी के कारण खत्म हुए साधनों को फिर से दिलाना तथा इस तरह समाज का भौतिक, बौद्धिक एवं नैतिक कल्याण बढ़ाना है।

सामाजिक सुरक्षा एवं अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन-

फिलाडेलफिया घोषणा के अंतर्गत श्रम संगठन को सबके लिए जिन्हें जरूरत हो एक मूल आय और व्यापक चिकित्सा सुविधा देने के लिए सामाजिक सुरक्षा व्यवस्थाओं को बढ़ाने के लिए जिम्मेदार बनाया गया है इस घोषणा के मुताबिक अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने कई कन्वेंशनों और सिफारिशों को मंजूर किया जिनके द्वारा श्रमिकों को हरजाना, डॉक्टरों देखभाल, बीमारी लाभ, बेकारी लाभ, बुढ़ापा लाभ एवं प्रसूति लाभ के लिए अन्तर्राष्ट्रीय प्रमाण नियत किये गये। एशियाई देशों के सम्बन्ध में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने खास कार्यवाही की है। यह मानते हुए कि अनिवार्य बीमारी बीमा श्रमिकों की उत्पादन क्षमता के किसी तरह के नुकसान को लगातार और ठीक से दूर करने के लिए सबसे अच्छा उपाय है। 1927 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन में इस विषय पर दो कन्वेंशन और सिफारिशें मंजूर की गईं। भारत सरकार ने इन पर 1928 में विचार किया और इस नतीजे पर पहुंची कि I.L.O. द्वारा सुझायी गई किसी बड़ी योजना को उस समय लागू करना देश में

उस समय पायी जाने वाली परिस्थितियों को देखते हुए अव्यवहारिक था।

1947 में नयी दिल्ली में हुए प्रारम्भिक एशियाई क्षेत्रीय सम्मेलन में सामाजिक सुरक्षा एक व्यापक प्रस्ताव माना गया जिसमें यह सिफारिश की गई थी कि विभिन्न एशियाई देश में सामाजिक सुरक्षा योजना की गति को तेज किया जाए। सामाजिक बीमा को तय करते समय इसकी एक अभिन्न और दीर्घकालीन योजना शुरू से ही बना लेनी चाहिए। जिसे विभिन्न अवस्थाओं में पूरा किया जाए तथा बुढ़ापा और मृत्यु के जाखिमों के लिए काफी व्यवस्था करने की दिशा में पहले कदम के रूप में ठीक उपाय करने चाहिए।

सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय स्टैंडर्ड तय करने के अलावा सदस्य देशों को सामाजिक सुरक्षा योजनायें बनाने अमल में लाने और चालू रखने के संबंध में तकनीकी सलाह देना भी अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का एक महत्वपूर्ण कार्य रहा है। भारत में कर्मचारी राज्य बीमा एक्ट, 1948 के अधीन कर्मचारी राज्य बीमा योजना बनाने में इस तरह की सलाह दी गयी थी। इस तरह विभिन्न देशों में आम तौर से और भारत जैसे कम विकसित और विकासशील देश में खास तौर से सामाजिक सुरक्षा व्यवस्थाओं को बढ़ाने में I.L.O. की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण रही है।

संगठित एवं असंगठित क्षेत्र में सामाजिक सुरक्षा-

सामाजिक सुरक्षा की अवधारणा सामाजिक उद्देश्य के लिए सामाजिक भागीदारी के सिद्धांत पर आधारित है। इसका उद्देश्य एक सुनियोजित सुविचारित एवं दीर्घकालीन सामाजिक प्रवास और भागीदारी के जरिये उत्पादक श्रमिकों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाना और वृद्ध एवं कमजोर लोगों की देखभाल करना है। किसी भी सामाजिक सुरक्षा प्रणाली की सफलता इस बात पर निर्भर करती है वह अभाव और शोषण से मुक्ति दिलाने के साथ साथ मृत्यु बीमारी या अक्षमता के दुःप्रभावों को कितना कम कर सकती है सामाजिक सुरक्षा उपायों को राज्य के नीति निर्देशक तत्वों और भारतीय संविधान की समवर्ती सूची से भी बल मिलता है। आज सामाजिक सुरक्षा को निरंतर विकास प्रणाली से श्रमिक वर्ग की आकांक्षाएँ काफी बढ़ गई हैं। लोगों की जरूरतों और उनके रोजगार एवं आय के स्तर के आधार पर सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम भी भिन्न-भिन्न प्रकार के हैं।

एक अनुमान के अनुसार विश्व भर में 2 अरब से अधिक लोगों को किसी भी रूप में सामाजिक सुरक्षा प्रणाली के अंतर्गत सुरक्षा प्रदान की गई है। बीमारी क्षति आय की हानि और कार्य करने की अक्षमता के चलते होने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए संस्थागत सहायता के रूप में विकसित मौजूदा सामाजिक सुरक्षा प्रणाली के समक्ष यह एक प्रमुख चुनौती है।

भारत में असंगठित क्षेत्र-

असंगठित क्षेत्र से तात्पर्य उन श्रमिकों से है जो रोजगार के अस्थायी स्वरूप अज्ञानता और निरक्षरता छोटे तथा बिखरे प्रतिष्ठानों आदि कुछ

कारणों से अपने साझा के लिए स्वयं को संगठित नहीं कर पाए। राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे संगठन 1999-2000 में कराए गए सर्वेक्षण के अनुसार देश में संगठित और असंगठित दोनों ही क्षेत्रों में श्रमिकों की कुल संख्या 39.7 करोड़ थी इनमें से 2.8 करोड़ संगठित क्षेत्र में थे और बाकी 36.9 करोड़ यानी कुल रोजगार का 92 प्रतिशत असंगठित क्षेत्र में थे। असंगठित क्षेत्र के 36.9 करोड़ श्रमिक में से 23.7 करोड़ कृषि क्षेत्र में लगे हुए थे जबकि 1.7 करोड़ श्रमिक निर्माण क्षेत्र में, 4.1 करोड़ श्रमिक विनिर्माण गतिविधियों में और व्यापार में 3.7 करोड़ लोग संलग्न थे। इसके अलावा परिवहन और संचार सेवाओं के क्षेत्र में 3.7 करोड़ लोग लगे हुए थे। असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा और कल्याण की देखरेख के लिए सरकार ने विधायी उपायों तथा कल्याण योजनाओं और कार्यक्रमों की द्विपक्षीय नीति अपनाई है। विधायी उपायों में न्यूनतम मजदूरी कानून 1948, कर्मकार मुआवजा अधिनियम 1923, मातृत्व लाभ अधिनियम 1961, बंधुआ मजदूरी प्रथा उन्मूलन अधिनियम 1976, ठेका मजदूर विनियमन और उन्मूलन अधिनियम 1970 अंतर्राज्यीय प्रवासी कर्मकार रोजगार विनियमन और सेवा शर्त अधिनियम 1979 भवन और अन्य निर्माण श्रमिक अधिनियम 1996 आदि शामिल हैं।

भारत सरकार ने बीड़ी श्रमिकों, कोयले को छोड़कर अन्य खानों के श्रमिकों के कल्याण के लिए कल्याण कोष का गठन किया है। इन कल्याण कोषों का उपयोग श्रमिकों को उनके बच्चों की शिक्षा मनोरंजन सामूहिक बीमा, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं, मकानों के निर्माण आदि पर किया जाता है। कुछ राज्यों जैसे केरल ने भी असंगठित क्षेत्र के इन श्रमिकों के लिए कल्याण कोष की स्थापना की है।

सरकार ने हाल ही में असंगठित क्षेत्रों के उद्यमों की समस्याओं के समाधान के लिए डॉ. अर्जुन सेन गुप्ता की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की है। आयोग द्वारा असंगठित क्षेत्रों के उद्यमों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा प्रणाली की समीक्षा की जाती है। असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के कल्याण के लिए व्यापक कानून बनाने सम्बन्धी एक प्रस्ताव सरकार के विचाराधीन है। प्रस्ताव के मसौदे में असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की सेवा शर्तों, उनकी सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा अन्य कल्याण सम्बन्धी मामलों पर विचार किया गया। विधेयक के सभी पहलुओं पर विचार करने तथा असंगठित क्षेत्र के उद्यमों के लिए गठित राष्ट्रीय आयोग की सहमति पर कार्य किया जाता है।

असंगठित क्षेत्र में प्रचलित मौजूदा सामाजिक सुरक्षा को मोटे तौर पर चार समूहों में विभाजित किया जा सकता है।

1. केन्द्र द्वारा वित्त पोषित सामाजिक सुरक्षा सहायता कार्यक्रम।
2. सामाजिक बीमा योजनाएँ।
3. केन्द्र और राज्य सरकारों के कल्याण कोषों के जरिये सामाजिक सहायता।
4. स्वयं सहायता समूहों के रूप में गैर सरकारी संगठनों द्वारा किये गये सार्वजनिक उपाय।

केन्द्र द्वारा वित्त पोषित सहायता कार्यक्रमों से अंतर्गत राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना, राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना और राष्ट्रीय प्रसूति लाभ योजना, सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना आदि शामिल हैं। ये कार्यक्रम ग्रामीण विकास मंत्रालय और शहरी रोजगार एवं गरीबी उन्मूलन मंत्रालय के जरिये लागू किये जा रहे हैं।

असंगठित क्षेत्र में सामाजिक बीमा योजना के माध्यम से लागू की जा रही हैं। इनमें समूह बीमा योजनाएँ हैं जिसके अंतर्गत एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जन श्री बीमा योजना आदि शामिल हैं। इसके अतिरिक्त सरकार ने कृषि सामाजिक सुरक्षा योजना सन् 2001 में प्रारंभ की है। इसके अंतर्गत जीवन दुर्घटना बीमा लाभ धन वापसी पेंशन और सेवा निवृत्ति लाभ प्रदान करने की व्यवस्था है।

केन्द्र सरकार श्रम मंत्रालय के माध्यम से वर्तमान में बीड़ी श्रमिकों चूना पत्थर और डोलामाइट खनिज श्रमिकों, लोहा, खनिज और मैंगनीज खनिज श्रमिकों के लिए कल्याण कोष संचालित कर रही है। इन कोषों का इस्तेमाल स्वास्थ्य देखभाल, आवास, बच्चों के लिए शैक्षणिक सहायता, पेय जलापूर्ति आदि क्षेत्रों में श्रमिकों को विभिन्न प्रकार की कल्याण सुविधायें जुटाने के लिए किया जाता है। केन्द्र सरकार के अतिरिक्त अनेक राज्य सरकारों ने भी विभिन्न श्रेणियों के श्रमिकों के लिए कल्याण कोष स्थापित किये हैं।

भारत सरकार ने प्रयोग के तौर पर असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा योजना प्रारंभ की है। इसके तीन घटक हैं स्वास्थ्य बीमा, व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा और वृद्धावस्था पेंशन। इसके अतिरिक्त श्रम मंत्रालय की क्षेत्रीय इकाईयां श्रमिक सुविधा केन्द्रों के रूप में कार्य करती हैं। इन केन्द्रों का काम श्रमिकों, स्वरोजगार में लगे व्यक्तियों में जागरूकता पैदा करना है, ताकि श्रमिकों को इस योजना में शामिल करने के लिए प्रेरित किया जा सके।

योजनाओं का कार्यान्वयन कर्मचारी भविष्य निधि संगठन (ई.पी.एफ.ओ.) द्वारा किया जाता है जिसका करीब 260 शाखाओं के साथ देश भर में व्यापक सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के प्रमुख तीन उद्देश्य होते हैं: हरजाना (Compensation), पुनर्स्थापन (Restoration) एवं निवारण (Prevention)। हरजाने का संबंध आय सुरक्षा से है और इस विचार पर आधारित है कि जाखिमों नेटवर्क है। बीमा व्यवस्था प्रमुख बीमा कंपनी जैसे ओरियन्टल इन्श्योरेंस कंपनी, यूनाइटेड इंडिया कंपनी न्यू इंडिया इन्श्योरेंस कंपनी आदि के द्वारा किया जाता है।

सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ-

सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का उद्देश्य गरीबी, बेकारी एवं बीमारी को जड़ से दूर करना है जो सभी व्यक्तियों और सभी जोखिमों को शामिल करते हुए मिले जुले दृष्टिकोण का लक्ष्य रखती है। सामाजिक बीमा और सामाजिक सुरक्षा की बड़ी-बड़ी योजनाओं का एकीकरण करने पर ही आर्थिक विकास मुमकिन हो सकता है क्योंकि भारत में सामाजिक सुरक्षा की अवस्था अभी भी विकासशील अवस्था में है।

सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण योजनाएँ एवं अधिनियम इस प्रकार हैं।

- श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम, 1923
- कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948
- कोयला खान भविष्यनिधि एवं विविध व्यवस्थाएँ अधिनियम, 1948
- कर्मचारी प्रॉविडेंट फण्ड तथा विविध उपबन्ध अधिनियम, 1952
- कर्मचारी भविष्यनिधि एवं विविध प्रावधान अधिनियम, 1952
- असम चाय बागान प्रॉविडेंट फण्ड योजना अधिनियम, 1955
- श्रमजीवी पत्रकार अधिनियम, 1955
- व्यक्तिगत चोट (क्षतिपूर्ति बीमा) अधिनियम, 1963
- परिवारिक पेंशन योजना, 1971
- मृत्यु सहायता कोष, 1971
- आनुतोषिक भुगतान अधिनियम, 1972
- विक्रय संबर्द्धन सेवा शर्तें अधिनियम, 1976
- सामाजिक सुरक्षा प्रमाण पत्र
- बेरोजगारी भत्ता
- मातृत्व कालीन लाभ और बीमा
- रोजगार गारन्टी योजना।

निष्कर्ष-

निष्कर्ष तौर पर कहा जा सकता है कि सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ श्रमिकों को बुरे स्वास्थ्य, दुर्घटना और वृद्धावस्था में काफी हद तक सहायता देती हैं। भारत में ये सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ देर से लागू की गईं परंतु जिनसे श्रमिकों को व्यापक सुरक्षा प्राप्त होती है। भारत जैसे देश में जहाँ बेरोजगारी प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ऐसी स्थिति में सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की महत्ता और आवश्यकता और भी बढ़ रही है। देश की निर्धनता का प्रमुख कारण बेरोजगारी ही है। बेरोजगारी लाभ की व्यवस्था होने पर ही भारत में श्रमिकों के लिए एक अच्छी सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था उपलब्ध करायी जा सकती है।

सामाजिक सुरक्षा योजना को बेवरीज योजना की तरह एक विस्तृत योजना बनाकर भारत में लागू करने की आवश्यकता है जिससे भारत देश की प्रमुख समस्याओं बेरोजगारी, देश की गरीबी, लागत एवं प्रशासन संबंधी समस्याएँ, देश के साधनों का अधूरा विकास आदि समस्याओं को दूर किया जा सके। वर्तमान में प्रशासन द्वारा सामाजिक सुरक्षा के अंतर्गत अनेक योजनाएँ चलाई भी जा रही हैं। जिसके अंतर्गत राष्ट्रीय आय बढ़ाने, पालन पोषण एवं आवास व्यवस्था को सुधारने, सामान्य एवं व्यवसायिक शिक्षा के माँके बढ़ाने तथा रोजगार बढ़ाने के सार्थक प्रयास किये जा रहे हैं। भारत में सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ आर्थिक विकास की दूसरी योजनाओं की तरह केवल एक व्यवस्था के रूप में लागू नहीं की जा सकती। देश में विभिन्न योजनाओं के लागू होने के साथ ही सभी औद्योगिक श्रमिकों के लिए सामाजिक

सुरक्षा की एक बड़ी योजना के रूप में लागू करने की आवश्यकता है।

सामाजिक सुरक्षा हेतु सुझाव-

- भारत देश में सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की महत्त्वता को देखते हुए योजना का निर्माण करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक होता है जो इस प्रकार हैं-
- देश के सभी नागरिकों को आय की सुरक्षा एवं रोजगार की गारंटी दी जानी चाहिए जिससे देश की विकास दर में भी वृद्धि की जा सके।
- सामाजिक सुरक्षा का सम्पूर्ण प्रशासन विकेंद्रित किया जाना चाहिए जिससे अंतर्गत केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार और समाज द्वारा प्रशासन कार्य किया जाना चाहिए।
- राष्ट्र की सर्वांगीण चिकित्सा सेवाओं को व्यवस्थित ढंग से संचालित किया जाना चाहिए।
- सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का क्रियान्वयन करते समय अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ की सेवाएँ प्राप्त की जानी चाहिए।
- सभी सामाजिक सेवाओं, कल्याण कार्यक्रमों, सामाजिक सहायता योजनाओं एवं सामाजिक सुरक्षा विधान समन्वित होने चाहिए जिससे इनका संचालन एवं क्रियान्वयन एक संस्था द्वारा किया जा सके।
- सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के द्वारा इतनी सुविधा तथा सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए कि श्रमिक अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके तथा संकट कालीन परिस्थितियों में सहायता प्राप्त कर सके।
- वर्तमान में निर्मित एवं संचालित की जा योजनाओं में सामाजिक सुरक्षा का लक्ष्य निहित होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. डॉ. भगोलीवाल, टी.एन. एवं श्री मति भगोलीवाल, प्रेमलता, श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक संबंध साहित्य भवन पब्लिकेशन 2003
2. डॉ. जी.आर. मदन: समाज कार्य, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली - 7
3. डॉ. उपेन्द्र नाथ : समाज कार्य
4. डॉ. अनुपम गोयल : "भारतीय अर्थव्यवस्था" संस्करण 2007-2008.
5. डॉ. रवीन्द्र मुखर्जी : "भारत में सामाजिक कल्याण और सुरक्षा"।
6. आर.सी. सक्सेना : श्रम समस्याएँ एवं समाज कल्याण
7. A.N. Agarwal : Indian Labour Problems, Page 214.
8. कुन्देश्वर 2004, 2007
9. योजना 2006, 2009

खेतड़ी तहसील में बाल श्रम एवं स्वास्थ्य

अनिल कुमार मावर

शोध छात्र, सिंधानिया विश्वविद्यालय, पचेरी बड़ी, झुन्डुनू

डॉ. मुकेश कुमार शर्मा

शोध निर्देशक, सिंधानिया विश्वविद्यालय, पचेरी बड़ी, झुन्डुनू



shodhshree@gmail.com

खे तड़ी का प्रशासनिक ढांचा काफी मजबूत है। खेतड़ी विधानसभा क्षेत्र होने के कारण इसका प्रशासनिक महत्व काफी बढ़ जाता है। खेतड़ी झुन्डुनू से 70 कि.मी. की दूरी पर है व संभागीय मुख्यालय 170 कि.मी., भारत की राजधानी दिल्ली से 350 कि.मी. व प्रदेश की राजधानी जयपुर से 170 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। सागर तल से 484 मी. ऊँचाई पर स्थित खेतड़ी नगर 27°8' उत्तरी अक्षांश एवं 75°98' पूर्वी देशांतर पर है।

राजस्थान प्रदेश अन्य राज्यों की तुलना में इतना ज्यादा विकसित नहीं है। इस प्रदेश के पिछड़ेपन के कई कारण विद्यमान हैं जिनमें अकाल पड़ना, रोजगार के साधन उपलब्ध नहीं होना, उद्योग धन्धों की स्थापना नहीं होना प्रमुख रूप से है। बाल्य अवस्था का स्वरूप भी राजस्थान में ठीक स्थिति में नहीं है। निम्न व मध्यम वर्ग के कई परिवारों के बच्चे शिक्षा से वंचित रहकर बालश्रम में लगे हुए हैं। राजस्थान के झुन्डुनू जिले की खेतड़ी तहसील की बात करें तो यहाँ पर भी ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में बच्चे मजदूरी करते हुए पाये जा सकते हैं। इन बच्चों को शिक्षा व स्वास्थ्य की सुविधाएं भी कम मिलती हैं। खेतड़ी तहसील विकसित अवस्था में होने के बावजूद भी यहाँ पर बाल-श्रम में कई बच्चे लगे हुए देखे जा सकते हैं। यहाँ पर निम्न से लेकर मध्यमवर्गीय परिवार तक बच्चे भी कई तरह के कार्यों में संलग्न हैं। ये बच्चे होटल पर मजदूरी करते, चाय की दुकान पर, अखबार वितरण में, किराणा स्टोर की दुकान पर, प्राइवेट कम्पनियों में व रंग-रोगन व अन्य कार्यों में लगे हुए हैं।

झुन्डुनू जिले में स्थित खेतड़ी तहसील विकास के मायने में अपनी अलग पहचान रखती है। खेतड़ी तहसील के विशिष्ट भौगोलिक स्वरूप व ऐतिहासिक महत्व के कारण इसका नाम इतिहास के पन्नों में गिना जाता है। खेतड़ी तहसील में दो लाख से भी ज्यादा जनसंख्या निवास करती है। इनमें ऐसे कई परिवारों के बच्चे शामिल हैं जो बाल-श्रम में लगे हुए हैं। इन परिवारों में अनुसूचित जाति व पिछड़े वर्ग के बच्चे शामिल हैं। बाल्य अवस्था वह अवस्था होती है जिसमें बच्चों को भविष्य के लिये तैयार किया जाता है। कई बच्चों की पारिवारिक आर्थिक स्थिति ठीक नहीं होने से उन परिवारों के बच्चे मजदूरी व अन्य कार्य में लग जाते हैं। खेतड़ी तहसील के ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में अध्ययन करने पर हमें यह पता चलता है कि यहाँ पर बच्चे भिन्न-भिन्न कार्यों में संलग्न हैं। ये बच्चे प्रायः 10 साल से 18 साल तक के पाये गये। इनको कार्य शारीरिक रूप को देखकर नहीं दिया जाता है। इनकी आय भी इनके कार्य के अनुसार ही निर्धारित की जाती है। कई बच्चों को तो कार्य करने के लिए काफी दूर तक जाना पड़ता है। इन बच्चों को कई प्रकार की समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है जिनमें प्रमुख रूप से घर से कार्यस्थल की ज्यादा दूरी होना, भारी व वजनी काम होना, थकावट भरा कार्य होना व अन्य प्रकार की समस्याएं शामिल हैं। इन बच्चों के कार्य में कई प्रकार की दुर्घटनाएं घटित होने की सम्भावनाएं होती हैं। इनमें शरीर से सम्बन्धित खतरे व स्वास्थ्य से सम्बन्धी खतरे शामिल हैं। इन बच्चों का जीवन उद्देश्य भी इस शोध के माध्यम से पूछा गया तो उन्होंने पढ़ने की इच्छा सर्वाधिक जताई है। यद्यपि कई बच्चों ने इस कार्य को सिर्फ पैसे कमाने के लिए अपनाया हुआ है। उनका उपयोग ये स्वयं पर व परिवार की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने के लिए करते हैं। खेतड़ी तहसील में शोध करके देखा गया कि यहाँ पर बाल-श्रम की उपस्थिति ग्रामीण व नगरीय दोनों क्षेत्रों में मिलती है।

कृषि कार्य एवं बच्चे-

खेतड़ी तहसील के ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि कार्य सर्वाधिक होने के साथ ही यहाँ पर बच्चे भी कृषि के कार्य में संलग्न रहते हैं। कृषि व पशुपालन जैसे कार्यों में घर के सभी छोटे-बड़े सदस्यों का योगदान रहता है। कृषि कार्य

में लगे हुए बच्चे 1 से 4 घण्टे तक कार्य करते हैं। अध्ययन क्षेत्र में कृषि कार्य में बच्चों की मदद लेने वाले परिवारों में से ज्यादातर बच्चों से औसतन 1-2 घंटे प्रतिदिन काम लेते हैं।

सारणी 1.1 : ग्रामीण खेतड़ी में कृषि कार्य में मदद करने वाले बच्चों के अनुसार परिवारों का वितरण

क्र.स.	दिया गया समय	एस.सी.	अन्य जातियाँ	योग
1.	1-2 घंटे	06 (35.29%)	29 (61.7%)	35 (54.69%)
2.	3-4 घंटे	11 (64.71%)	18 (38.3%)	29 (45.31%)
	प्रतिवेदक योग	17	47	64
	अध्ययन में शामिल परिवार	48	102	150

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

सारणी 1.1 दर्शाती है कि अनुसूचित जाति के ग्रामीण परिवारों में बच्चे औसतन ज्यादा कार्य (3-4 घंटे) करते हैं, जबकि अन्य जातियों के ऐसे परिवारों में बच्चों से हल्का कार्य (1-2 घंटे) लिया जाता है।

घरेलू कार्य में बच्चों की भूमिका

खेतड़ी तहसील में कई बच्चे घरेलू कार्य में भी अपना समय देते हैं। ग्रामीण व नगरीय दोनों क्षेत्रों में बच्चे घरेलू कार्य में भी हाथ बंटाते हैं। जिनका विवरण निम्न प्रकार से है -

सारणी 1.2 से यह प्रतीत होता है कि ग्रामीण व नगरीय दोनों क्षेत्रों में बच्चे घरेलू कार्यों में मदद करते हैं। प्रायः पहरी क्षेत्र में बच्चे, विशेषकर बच्चियाँ, घर की सफाई-सज्जा व रसोई आदि में कुछ समय हाथ बंटाती हैं। ग्रामीण क्षेत्र की सभी जातियों में पहरी बच्चों की अपेक्षा अधिक देर तक बच्चे घर का कार्य करते हैं। गांवों में घर व पशु सम्बन्धी काफी कार्य रहता है, जिसके लिए बच्चों को अधिक योगदान देना पड़ता है।

सारणी 1.2 : खेतड़ी तहसील में घरेलू कार्य में मदद करने वाले बच्चे का विवरण

क्र.स.	दिया गया समय	एस.सी.		अन्य जातियाँ		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	1-2 घंटे	23(62.16%)	17(100%)	54(75%)	60(100)	154(82.8%)
2.	3-4 घंटे	14(37.84%)	0(0.0%)	18(25%)	0(0.0%)	32(17.2%)
3.	प्रतिवेदक योग	37	17	72	60	186
	अध्ययन में शामिल परिवार	48	33	102	117	300

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

बच्चों द्वारा किये कार्यों का स्वरूप

खेतड़ी तहसील के नगरीय व ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चे कई प्रकार के कार्यों में संलग्न हैं। ये बच्चे कृषि कार्य, मजदूर पर काम करना, व्यापार पर,

प्राइवेट कम्पनियों में विभिन्न प्रकार के कार्य करते हुए देखे गये हैं, जिनका विवरण निम्न प्रकार से है-

सारणी 1.3: खेतड़ी के बच्चों द्वारा ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में किये गये आर्थिक कार्य

क्र.स.	किये गये कार्य	एस.सी.		अन्य जातियाँ		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	कृषि	8(27.00%)	0(0.0%)	45(79.00%)	0(0.0%)	53(42.06%)
2.	मजदूरी	14(37.84%)	2(33.00%)	03(5.00%)	18(54.55%)	34(26.98%)
3.	व्यापार पर	1(3.00%)	1(17.00%)	0(0.0%)	0(0.0%)	2(1.59%)
4.	प्राइवेट कम्पनी	10(33.00%)	3(50%)	9(16.00%)	15(45.45%)	37(29.37%)
	प्रतिवेदक योग	30	6	57	33	126
	अध्ययन में शामिल परिवार	48	33	102	117	300

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

सारणी 1.3 से यह पता चलता है कि खेतड़ी में बच्चों द्वारा विभिन्न प्रकार के आर्थिक कार्य किये जाते हैं। नगरीय क्षेत्रों में कृषि को छोड़कर लगभग सभी प्रकार के कार्यों में बच्चे संलग्न हैं। इनमें मजदूरी करना, व्यापार पर, प्राइवेट कम्पनी पर मजदूरी करना शामिल है। ये बच्चे एस.सी. व अन्य दूसरी जातियों के भी शामिल हैं। ग्रामीण क्षेत्र में एस.सी. परिवारों के बच्चों कृषि कार्य के अतिरिक्त मजदूरी व प्राइवेट कम्पनी में काम करते हैं। अन्य जातियों के बच्चे कृषि कार्यों में अधिकतर लगे रहते हैं।

खेतड़ी नगर में बाल श्रम-

झुन्डुनु जिले की खेतड़ी तहसील अपेक्षाकृत विकसित में है। यहाँ पर आर्थिक गतिविधियाँ काफी मात्रा में संचालित है। यहाँ पर एक बड़ी परियोजना "हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड" की है जिसमें कई लोग कार्यरत हैं। परन्तु यहाँ पर बाल-मजदूर भी विद्यमान है। खेतड़ी नगर में कई परिवारों के बच्चे मजदूरी करते हैं। ये बच्चे विभिन्न प्रकार के कार्य

अलग-अलग जगहों पर करते देखे गये हैं। इनमें होटल पर खाना बनाना, बर्तन साफ करना, अखबारों का वितरण करना, रंग-रोगन का काम करना प्रमुख है। कई बच्चे प्राइवेट कम्पनियों में काम करते हैं। खेतड़ी नगर का अध्ययन करके हमने देखा कि यहाँ पर भी बच्चे मजदूरी करते हैं। इन बच्चों को बाल श्रम के बारे में कुछ भी नहीं पता है। कुछ बच्चे इच्छा से इन कार्यों में लगे हुए हैं।

खेतड़ी नगर के बाल श्रमिकों का कार्य विभाजन-

खेतड़ी नगर के बच्चे कई प्रकार के कार्यों में संलग्न है ये विभिन्न प्रकार के कार्य अपनी इच्छा के अनुसार करते हैं। इन बच्चों का कार्य दुकानों पर मजदूरी करना, सुबह-सुबह अखबारों का वितरण करना, रंगाई-पुताई के कार्य करना आदि व कुछ बच्चे प्राइवेट कम्पनियों में मजदूरी करते हैं। (सारणी 1.4) यहाँ पर हम नगर में बाल-श्रमिकों का कार्य विभाजन प्रस्तुत कर रहे हैं।

सारणी 1.4: खेतड़ी नगर के बाल-श्रमिकों का व्यावसायिक/कार्य स्वरूप

क्र.स.	व्यवसाय	एस.सी.	अन्य जातियाँ	योग
1.	दुकान पर मजदूरी	12(30%)	20(50%)	32(40%)
2.	अखबार का वितरण	8(20%)	4(10%)	12(15%)
3.	रंगाई- पुताई	4(10%)	4(10%)	8(10%)
4.	प्राइवेट कम्पनी	16(40%)	12(30%)	28(35%)
	योग	40	40	80

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

खेतड़ी नगर में विभिन्न समुदायों के बाल-श्रमिक अलग-अलग कार्यों में संलग्न है। (सारणी 1.4)। यहाँ पर अनुसूचित जाति के बच्चों की बात करें तो दुकान पर मजदूरी करने वाले 30 प्रतिशत तक, अखबार वितरण में 20 प्रतिशत, रंगाई-पुताई में 10 प्रतिशत व प्राइवेट कम्पनियों में 40 प्रतिशत तक के बच्चे लगे हुए हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ पर अन्य जातियों के बच्चे भी इन्हीं कार्यों में संलग्न है जिनमें दुकान पर मजदूरी 50 प्रतिशत तक, अखबार वितरण में 10 प्रतिशत, रंगाई-पुताई के कार्य में 10 प्रतिशत व प्राइवेट कम्पनी में 40 प्रतिशत तक बच्चे लगे हुए हैं। इस प्रकार नगर के बाल-श्रमिक अल्पायु में ही कार्य करते हुए रोजगार में लगे हुए है।

कार्य की अवधि

खेतड़ी नगर में बच्चे अलग-अलग कार्यों में संलग्न होने के साथ ही

उनके कार्य की अवधि भी असमान है। ये बच्चे प्रतिदिन काम करते हैं। इनमें कुछ बच्चों का कार्य 1-5 घण्टे तक के बीच में हो जाता है जबकि अधिकांश बच्चों को 5 से 10 घण्टे तक भी लग जाते हैं। नगर में अध्ययन करके हमने यह देखा कि यहाँ पर बच्चे कई घंटों तक मजदूरी करते हैं। इनका विवरण दैनिक अवधि के अनुसार सारणी संख्या 1.5 में हैं -

सारणी 1.5 से हमें यह पता चलता है कि विभिन्न कार्यों में लगे बच्चों को कितने घंटों तक कार्य करना पड़ता है। इनमें अनुसूचित जाति के बच्चे 1 से 5 घंटा प्रतिदिन के हिसाब से 2 प्रतिशत तक बच्चे कार्य करते हैं। इसके अलावा 5 से 10 घंटे प्रतिदिन के हिसाब से 80 प्रतिशत बच्चे काम करते हैं। यहां पर 5-10 घंटों के बीच में अन्य जातियों के बच्चों का प्रतिशत ज्यादा है।

सारणी 1.5: दैनिक कार्य की अवधि के अनुसार खेतड़ी नगर के बाल-श्रमिक

क्र.स.	कार्य की अवधि	एस.सी.	अन्य जातियाँ	योग
1.	1-5 घंटे	8(20%)	4(10%)	12(15%)
2.	5-10 घंटे	32(80%)	36(90%)	68(85%)
	योग	40	40	80

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

पारिश्रमिक दरें-

खेतड़ी तहसील के नगरीय क्षेत्र में कार्य करने वाले बच्चों को उनके कार्य के अनुसार ही पारिश्रमिक दरें दी जाती हैं। ये दरें कहीं पर ज्यादा तो कहीं पर कम दी जाती हैं। उनकी ये दरें कार्य की अवधि व कार्य के

अनुसार दी जाती हैं। कई बच्चों को मासिक रूप में व कई बच्चों को दैनिक रूप में दरें दी जाती हैं। खेतड़ी नगर में अध्ययन किये बच्चों की पारिश्रमिक दरों का विवरण यहाँ पर प्रस्तुत है।

सारणी 1.6: पारिश्रमिक दरों के अनुसार खेतड़ी नगर के बाल-श्रमिकों का वर्गीकरण

क्र.स.	मासिक पारिश्रमिक दरें (रु.)	एस.सी.	अन्य जातियां	योग
1.	1000	24(60%)	28(70%)	52(65%)
2.	2000	0(0%)	0(0%)	0(0%)
3.	3000	0(0%)	0(0%)	0(0%)
4.	4000	16(40%)	12(30%)	28(35%)
	योग	40	40	80

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

सारणी 1.6 से यह पता चलता है कि बच्चों को पारिश्रमिक कितनी दर से इनको कार्य के अनुसार दिया जाता है। एस.सी. के बच्चों में 1000 रु. तक प्राप्त करने वाले करीब 60 प्रतिशत तक बच्चे हैं। इनके अतिरिक्त 4000 रु. तक 40 प्रतिशत बच्चे मासिक प्राप्त कर रहे हैं। इनके अलावा अन्य जातियों के बच्चों 1000 रु. प्राप्त करने वाले करीब 70 प्रतिशत पाये गये हैं। 4000 रु. तक 30 प्रतिशत बच्चे मासिक दर से पारिश्रमिक प्राप्त कर रहे हैं।

कार्य से जुड़े खतरे व समस्याएं

खेतड़ी नगर में बाल-श्रम में लगे हुए बच्चों को इन कार्यों में काफी समस्याएं व खतरों का सामना करना पड़ता है। बाल-श्रम वैसे तो खुद

एक गम्भीर चुनौती है लेकिन इसमें कार्यरत बच्चों को भी अनेक समस्याएं व खतरों से जूझना पड़ता है। ये बच्चे इन समस्याओं व खतरों से अनजान होने के कारण से ये सब कार्य करते हैं। इन बच्चों को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है उनमें कार्य स्थल की घर से ज्यादा दूरी होना, भारी व वजनी काम का होना, दूर तक अखबार का वितरण करना, थकावट भरा कार्य करना आदि शामिल है। इन समस्याओं के अलावा कार्य से जुड़े कई खतरे भी शामिल है जिनमें दुर्घटनाएं घटने की संभावना होती है। इनमें बच्चों को भारी व वजनी काम से खतरा होना, शरीर से सम्बन्धित खतरे आदि शामिल है। अध्ययन के अनुसार इन बच्चों की कार्य से जुड़ी समस्याएं व खतरों का विवरण सारणी 1.7, 1.8 में प्रस्तुत है।

सारणी 1.7: कार्य की समस्याओं के अनुसार खेतड़ी नगर के बाल-श्रमिकों का वर्गीकरण

क्र.स.	कार्य की समस्याएं	एस.सी.	अन्य जातियां	योग
1.	घर से दूरी	20(50%)	12(30%)	32(40%)
2.	भारी व वजनी काम	0(20%)	8(20%)	16(20%)
3.	दूर तक अखबार वि.तरण	8(20%)	4(10%)	12(12%)
4.	थकावट भरा कार्य	0(0%)	8(20%)	8(10%)
5.	अन्य समस्याएं	4(10%)	8(20%)	12(15%)
	योग	40	40	80

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

सारणी 1.8: खेतड़ी नगर में बाल श्रम के कार्य से जुड़े खतरे

क्र.स.	कार्य की समस्याएं	एस.सी.	अन्य जातियां	योग
1.	भारी व वजनी काम	4(10%)	8(30%)	12(15%)
2.	शरीर से सम्बन्धित	4(1%)	24(60%)	28(35%)
3.	कोई नहीं	32(80%)	8(20%)	40(50%)
	योग	40	40	80

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

माता-पिता का दृष्टिकोण

खेतड़ी नगर में कार्यरत बच्चों के माता-पिता इन बच्चों के कार्य के प्रति कैसी सोच रखते हैं। यहाँ पर नगरीय क्षेत्र में अध्ययन करने हमने देखा कि बच्चों के अधिकतर माता-पिता उनके कार्य से संतुष्ट नजर आते

हैं। उनकी नजर में बच्चों द्वारा किये जाने वाला कार्य सही है। यह तथ्य इस समस्या के प्रति लोगों के रुख को दिखाता है जो कि शायद उनकी पारिवारिक दशाओं का भी चोतक है।

सारणी 1.9: खेतड़ी नगर के बाल-श्रमिकों माता-पिता का कार्य के प्रति दृष्टिकोण

क्र.स.	माता-पिता का दृष्टिकोण	एस.सी.	अन्य जातियां	योग
1.	सकारात्मक	40	36	76
2.	नकारात्मक	0	0	0
3.	पता नहीं	0	4	4
	योग	40	40	80

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

उपर्युक्त तथ्य व आंकड़ें यह बताते हैं कि यहाँ पर लगभग सभी माता-पिता अपने बच्चों द्वारा किये जाने वाले कार्य से संतुष्ट हैं व उनका नजरिया उनके कार्य के प्रति सकारात्मक है।

जीवन, शिक्षा एवं कार्य के प्रति दृष्टिकोण

खेतड़ी तहसील के नगरीय क्षेत्र में जो बच्चे बाल-श्रम में कार्यरत हैं उनको अपने जीवन के उद्देश्य के बारे में कुछ हद तक पता होने के

बावजूद भी ये इन कार्यों में संलग्न हैं। इनके जीवन में मूल उद्देश्य क्या है? यह पता लगा कि इनका मूल उद्देश्य पढ़ने के साथ-साथ पैसे कमाना भी है। शिक्षा के बारे में जब इनसे पूछा गया तो उन्होंने बताया कि इनकी इच्छा पढ़ने की भी है। कार्य के प्रति इनका दृष्टिकोण यह है कि ये एक बेहतर प्रकार का कार्य करने की इच्छा रखते हैं। अतः इन तीनों का विवरण सारणी 1.10 से 1.12 में है।

सारणी 1.10: जीवन के उद्देश्य के अनुसार खेतड़ी बाल-श्रमिकों का वर्गीकरण

क्र.स.	जीवन का उद्देश्य	एस.सी.	अन्य जातियां	योग
1.	पढ़ना	32(80%)	32(80%)	64(80%)
2.	पैसे कमाना	8(20%)	8(20%)	16(20%)
	योग	40	40	80

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

उपर्युक्त आंकड़ें हमें यह बताते हैं कि बाल श्रमिकों का जीवन में उद्देश्य पढ़ना है। अधिकतर बच्चे पढ़ना चाहते हैं। अनुसूचित जाति के बच्चे 80 प्रतिशत तक पढ़ने की इच्छा रखते हैं, साथ ही अन्य बच्चे भी 80

प्रतिशत तक जीवन में पढ़ना चाहते हैं। केवल 20 प्रतिशत तक बच्चे पैसे कमाना चाहते हैं। अतः इससे यह स्पष्ट होता है कि इन बच्चों के जीवन का मूल उद्देश्य पढ़ना है।

सारणी 1.11 : शिक्षा हेतु इच्छा के अनुसार बाल-श्रमिकों का वर्गीकरण

क्र.स.	पढ़ने की इच्छा	एस.सी.	अन्य जातियां	योग
1.	हां	40(100%)	40(100%)	80(100%)
2.	नहीं	0	0	0
	योग	40	40	80

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

कार्य के प्रति दृष्टिकोण

कार्य के प्रति बच्चों का दृष्टिकोण किस प्रकार का है, वे एक बेहतर प्रकार का कार्य करने की इच्छा रखते हैं या फिर अपने कार्य से संतुष्ट है।

सारणी 1.12 : बेहतर प्रकार के कार्य की इच्छा के अनुसार खेतड़ी नगर के बाल-श्रमिकों का वर्गीकरण

क्र.स.	बेहतर कार्य की इच्छा	एस.सी.	अन्य जातियां	योग
1.	हां	40(100%)	40(100%)	80(100%)
2.	नहीं	0	0	0
	योग	40	40	80

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

इन सभी आंकड़ों का मूल्यांकन करने से हमें यह पता चलता है कि सभी बाल श्रमिक अपनी वर्तमान स्थिति को संतुष्ट नहीं हैं तथा यह दिखाता है कि एक बेहतर प्रकार के कार्य करने की इच्छा रखते हैं। शारीरिक रूप से भारी, थकाऊ तथा घर से दूर रखने वाले कार्य से वे उब चुके हैं।

आय तथा व्यय-

नगरीय क्षेत्र में कार्यरत बाल श्रमिक अपने कार्य से मिलने वाली आय को स्वयं पर खर्च करते हैं अथवा मुख्यतः पारिवारिक खर्च में अपना योगदान देते हैं। कुछ बच्चे अपनी आय दोनों पर खर्च करते हैं। इनका विवरण निम्न प्रकार से है-

सारणी 1.13 : अपनी आय का खर्च करने के अनुसार खेतड़ी के बाल-श्रमिकों का वर्गीकरण

क्र.स.	आय खर्च का विवरण	एस.सी.	अन्य जातियां	योग
1.	स्वयं पर	16(22.22%)	12(21.43%)	28(21.88%)
2.	पारिवारिक खर्च पर	40(55.56%)	36(64.29%)	76(59.38%)
3.	दोनों पर	16(22.22%)	8(14.29%)	24(18.75%)
	योग	72	56	128

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

खेतड़ी के ग्रामीण व नगरीय दोनों क्षेत्रों में कई बच्चे कई प्रकार के कार्य में संलग्न हैं। इन बच्चों का भविष्य उन्नत नहीं कहा जा सकता है। शिक्षा की पूर्ण व्यवस्था व पारिवारिक स्थितियां ठीक नहीं होने के कारण से इन्हे मजबूर होकर कार्य करना पड़ता है। कई कार्यों में तो इतना ज्यादा खतरा होता है कि कभी भी कोई दुर्घटना घटित हो सकती है। अतः सरकार व प्रशासन की जिम्मेदारी बनती है कि बाल-श्रम में लगे हुए बच्चों की उचित व्यवस्था करें। जो बच्चे होटलों व ढाबों पर काम कर रहे हैं उन होटलों व ढाबा मालिकों को उचित कार्यवाही करके पाबन्द किया जाए। इससे बाल मजदूर कम होंगे।

खेतड़ी तहसील में स्वास्थ्य एवं चिकित्सकीय सुविधाओं का प्रारूप-

झुन्डुनू जिले में स्थित खेतड़ी तहसील का स्वास्थ्य सम्बन्धी एवं चिकित्सा की सुविधा का प्रारूप ठीक स्थिति में दिखाई पड़ता है। झुन्डुनू नगर के बाद दूसरा सबसे बड़ा अस्पताल खेतड़ी तहसील में ही स्थित है। खेतड़ी तहसील विकास की दृष्टि से इतनी विकसित अवस्था में होने का एक प्रमुख कारण यहाँ का स्वास्थ्य सम्बन्धी दशाओं का ठीक होना है। खेतड़ी तहसील में कई प्रकार के अस्पताल नगरीय क्षेत्र में उपलब्ध हैं। गांवों में भी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना व उप-स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना भी की गई है जिनमें स्थानीय लोग अपना उपचार करवाते हैं। गंभीर मामलों में ही उन्हें खेतड़ी स्थित सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र पर भेजा जाता है। खेतड़ी नगर में एक सी.एच.सी. सेन्टर है जिसमें शहर व आसपास के लोग उपचार के लिये आते हैं। गांवों में स्थित पी.एच.सी. सेन्टरों पर गंभीर बीमारियों के इलाज की सुविधा नहीं होने के कारण से उन्हें नगर में भेज दिया जाता है। खेतड़ी में स्थित सी.एच.सी. सेन्टर काफी पुराना 'हेल्थ सेन्टर' है। इसकी स्थापना 100 वर्ष पूर्व की गई थी। यहाँ के सेन्टर पर

अनेक सुविधाएं एवं उचित स्टाफ की पूर्ण व्यवस्था है। यहाँ पर विभिन्न बीमारियों का इलाज संतुष्टिपूर्वक किया जाता है। यहाँ के सेन्टर पर बुखार, ए.आर.आई., यू.आर.आई., टी.बी., ए.एन.सी., पी.एन.सी., प्रसव सुविधा, आर.टी.पी., जोड़ों का दर्द व डायरिया जैसी विभिन्न बीमारियों का इलाज किया जाता है। यहाँ पर कई प्रकार की सुविधाओं भी प्राप्त है जिनमें टीकाकरण की सुविधा, गर्भवती महिलाओं को टी.टी., बच्चों को छः माह से बी.सी.जी., डी.पी.टी., ओरल पोलियो, मलेरिया व हेपेटाइटिस-बी, स्वयं के खर्च पर सुविधा प्राप्त है। इसके अलावा अन्य सुविधाएं भी यहाँ के सेन्टर पर उपलब्ध हैं।

अतः खेतड़ी तहसील में स्वास्थ्य सम्बन्धी दशाएं अपेक्षाकृत अच्छी स्थिति में हैं। यहाँ पर लगभग सभी बीमारियों की जांच की सुविधा होने से व उचित स्टाफ होने से स्वास्थ्य सम्बन्धी सभी दशाओं से खेतड़ी व आस-पास के क्षेत्र के लोग संतुष्ट हैं।

चिकित्सा सुविधाओं का प्रकार-

खेतड़ी तहसील में चिकित्सा की सुविधा ग्रामीण व नगरीय दोनों क्षेत्रों में उपलब्ध है। यहाँ पर लोग सरकारी अस्पताल व निजी अस्पतालों में उपचार करवाते हैं। अध्ययन में देखा गया कि कई परिवार सरकारी अस्पतालों में ही उपचार करवाते हैं। इसका कारण प्रमुखता से यह है कि उन्हें सस्ती कीमत पर दवाईयां व जांच उपलब्ध हो जाती है। ग्रामीण क्षेत्र में बड़ा अस्पताल नहीं होने से वे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर ही अपना इलाज करवाते हैं। नगरीय क्षेत्र में कई निजी अस्पताल मौजूद हैं। चिकित्सा की सुविधा के प्रकार के अनुसार ग्रामीण व नगरीय परिवार इन सुविधाओं का लाभ उठा रहे हैं। इसका विवरण निम्न प्रकार से है -

सारणी 1.14 : खेतड़ी तहसील में चिकित्सा सुविधा के प्रकार व उपयोग अनुसार परिवारों का वर्गीकरण

क्र.स.	चिकित्सा की सुविधा	एस.सी.		अन्य जातियां		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	सरकारी	47(88.68%)	33(91.67%)	99(92.52%)	112(89.6%)	291(90.65%)
2.	निजी	6(11.32%)	3(8.33%)	8(7.48%)	13(10.4%)	30(9.35%)
3.	चैरिटी	0(3.00%)	0(0.00%)	0(0.00%)	0(0.0%)	0(0.0%)
	योग	53	36	107	125	321

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

सारणी 1.14 से में यह पता चलता है कि यहाँ पर सरकारी अस्पतालों में सबसे ज्यादा लोग सुविधा प्राप्त करते हैं। निजी अस्पतालों में चिकित्सा की सुविधा इतने ज्यादा लोग प्राप्त नहीं करते हैं। ग्रामीण व नगरीय दोनों क्षेत्रों के लोग चिकित्सा की सुविधा सरकारी अस्पतालों से ही प्राप्त करते हैं। यहाँ पर ग्रामीण एस.सी. के लोग सरकारी में 88 प्रतिशत से भी ज्यादा व निजी में मात्र 11 प्रतिशत तक ही चिकित्सा की सुविधा प्राप्त करते हैं। नगरीय भागों में एस.सी. के लोग सरकारी चिकित्सालयों में 91 प्रतिशत व निजी में मात्र 8 प्रतिशत तक सरकारी अस्पतालों में चिकित्सा की सुविधा प्राप्त करते हैं। ग्रामीण क्षेत्र की अन्य जातियां 92 प्रतिशत तक सरकारी अस्पतालों में चिकित्सा की

सुविधा प्राप्त करते हैं। नगरीय क्षेत्र में भी 90 प्रतिशत लोग सरकारी में व मात्र 9 प्रतिशत लोग निजी क्षेत्र में चिकित्सा की सुविधा प्राप्त करते हैं।

चिकित्सा स्थल की दूरी-

ग्रामीण क्षेत्रों में गंभीर बीमारियों के उपचार की सुविधा नहीं होने के कारण से उन्हें खेतड़ी स्थित स्वास्थ्य केन्द्र पर आना पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी दूरी ज्यादा लगती है व नगरीय क्षेत्र में यह दूरी कम लगती है। ग्रामीण व नगरीय परिवारों का वर्गीकरण यहाँ पर दूरी के अनुसार निम्न प्रकार से है-

सारणी 1.15 : चिकित्सा सेवा स्थल की दूरी के अनुसार खेतड़ी के ग्रामीण व नगरीय परिवार

क्र.स.	चिकित्सा स्थल की दूरी	एस.सी.	अन्य जातियां	योग
1.	0-1.5 कि.मी.	28(19%)	143(94%)	171(57%)
2.	1.5-3.0 कि.मी.	22(15%)	09(6%)	31(10%)
3.	3 कि.मी. से ज्यादा	98(66%)	00(0.00%)	98(33%)
	योग	148	152	300

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

टीकाकरण की स्थिति, आवश्यकताएं व सुविधाएं-

खेतड़ी नगर में स्थित सी.एच.सी. केन्द्र व ग्रामीण क्षेत्र में स्थित पी.एच.सी. सेन्ट्रों पर कई प्रकार के टीके लगवाने की व्यवस्था प्राप्त है। विशेषकर नगरीय क्षेत्र में स्थित सेन्टर पर लगभग सभी प्रकार के टीकों की उपलब्धता है। यहाँ पर टिटनेस, पोलियो, विटामिन, टी.बी.टी.

आदि प्रकार के टीके उपलब्ध हैं। लगभग सभी परिवार चाहे वह ग्रामीण हो या नगरीय सभी टीकाकरण की आवश्यकता को महसूस करते हैं। और इन टीकों की सुविधाएं भी केन्द्रों पर उपलब्ध हैं। इनका विस्तारपूर्वक विवरण अध्ययन क्षेत्र के अनुसार निम्न प्रकार से हैं।

सारणी 1.16 : खेतड़ी तहसील में टीकाकरण की स्थिति के अनुसार ग्रामीण व नगरीय परिवार

क्र.स.	टीकाकरण की स्थिति	एस.सी.		अन्य जातियां		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	है कराया	48(100%)	33(100%)	102(100%)	117(100%)	291(90.65%)
2.	नहीं	0(0.0%)	0(0.0%)	0(0.0%)	0(0%)	0(0.0%)
	योग	48	33	102	117	300

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

उपर्युक्त आंकड़ों से हमें यह पता चलता है कि अध्ययन में शामिल सभी परिवारों ने टीकाकरण करवाया है।

टीकाकरण की आवश्यकता-

अतः खेतड़ी तहसील में लगभग सभी लोग अपने बच्चों का टीकाकरण

करवाने व उसकी जरूरत को महसूस करते हैं। अध्ययन क्षेत्र के अनुसार टीकाकरण की आवश्यकता महसूस करने वाले परिवारों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से है -

सारणी 1.17 : खेतड़ी तहसील में बच्चों के टीकाकरण की आवश्यकता अनुसार परिवार वितरण

क्र.स.	टीकाकरण की आवश्यकता	एस्.सी.		अन्य जातियां		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	हां	48(100%)	33(100%)	102(100%)	117(100%)	300(100%)
2.	नहीं	0(0.0%)	0(0.0%)	0(0.0%)	0(0%)	0(0.0%)
	योग	48	33	102	117	300

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

इससे प्रतीत होता है कि यहां पर ग्रामीण व नगरीय दोनों ही क्षेत्रों में परिवार टीकाकरण की आवश्यकता व जरूरत को समझते हैं।

टीकाकरण की सुविधाएं-

खेतड़ी नगर में स्थित सी.एच.सी. सेन्टर व ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित

पी.एच.सी. सेन्टर पर टीकाकरण की सुविधाएं लगभग प्राप्त हैं। यहाँ पर टीकाकरण की सुविधा सभी केन्द्रों पर उपलब्ध है।

सारणी 1.18 : खेतड़ी में टीकाकरण की सुविधा की पर्याप्तता

क्र.स.	टीकाकरण की पर्याप्तता	एस्.सी.		अन्य जातियां		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	हां	48(100%)	33(100%)	102(100%)	117(100%)	300(100%)
2.	नहीं	0(0.0%)	0(0.0%)	0(0.0%)	0(0%)	0(0.0%)
	योग	48	33	102	117	300

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

मिड-डे मील की गुणवत्ता, पर्याप्तता व आवश्यकता-

राजस्थान के सभी ग्रामीण व नगरीय दोनों क्षेत्रों के सरकारी स्कूलों में संचालित यह योजना बच्चों को पौष्टिक आहार देने की योजना है जिससे बच्चों का शारीरिक विकास व मानसिक विकास हो सके। मिड-डे मील की गुणवत्ता में बच्चों को भोजन उत्तम व निम्नतम किस

प्रकार का दिया जाता है, इसके अलावा मिड-डे-मील की पर्याप्तता और इस योजना की आवश्यकता आदि के विषय में अध्ययन से हमें यह पता चलता है कि मिड-डे मील एक सफल प्रयास है बच्चों के विकास के लिये। अतः इस योजना की पूर्णरूप से आवश्यकता है।

सारणी 1.19 : खेतड़ी के स्कूलों में मिड-डे मील में भोजन की गुणवत्ता

क्र.स.	भोजन की गुणवत्ता	एस्.सी.		अन्य जातियां		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	उच्चतम	19	14	49	28	110
2.	निम्नतम	0	0	0	0	0
	योग	19	14	49	28	110

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

उपर्युक्त तथ्यों से यह पता चलता है कि जो बच्चे सरकारी स्कूलों में जा रहे हैं उन्हें भोजन की गुणवत्ता उत्तम प्रकार की दी जाती है। ग्रामीण

व नगरीय दोनों क्षेत्रों में बच्चों को भोजन उच्चतम प्रकार का दिया जाता है।

सारणी 1.20 : मिड-डे मील की पर्याप्तता

क्र.स.	मिड-डे मील की पर्याप्तता	एस्.सी.		अन्य जातियां		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	हां	19	14	49	28	110
2.	नहीं	0	0	0	0	0
	योग	19	14	49	28	110

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

खेतड़ी तहसील के ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में सरकारी स्कूलों में जाने वाले बच्चों को मिड-डे मील पर्याप्तता से मिलता है। क्षेत्र में अध्ययन से भी यह बात स्पष्ट हो जाती है।

सारणी 1.21 : खेतड़ी में मिड-डे मील की आवश्यकता के अनुसार परिवारों का वर्गीकरण

क्र.स.	मिड-डे मील की आवश्यकता	एस्.सी.		अन्य जातियां		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	हां	19	14	49	28	110
2.	नहीं	0	0	0	0	0
	योग	19	14	49	28	110

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

उपर्युक्त तथ्य व आंकड़े यह बताते हैं कि जो सरकारी स्कूलों में बच्चे जा रहे हैं उन्हें मिड-डे मील की आवश्यकता है या नहीं। यहाँ पर लगभग सभी सरकारी स्कूलों में जा रहे बच्चों के अभिभावकों ने मिड-डे मील की आवश्यकता बताई है।

स्वास्थ्य पर औसत खर्च-

बीमार हुए लोगों को इलाज के लिए दवाइयां व जांच करवाने पर

विभिन्न प्रकार का खर्चा आता है। तहसील में यह खर्च 100 रु. से लेकर 500 रु. मासिक से ज्यादा तक पाया गया है। क्षेत्र के अध्ययन के अनुसार ग्रामीण व नगरीय दोनों क्षेत्रों के परिवारों में स्वास्थ्य पर खर्च का प्रारूप सारणी 1.23 में है। ग्रामीण क्षेत्र के परिवार स्वास्थ्य पर औसतन अधिक खर्च करते दिख पड़ते हैं, जो कि कुपोषण या प्रदूषण आदि के कारण हो सकता है।

सारणी 1.22 : खेतड़ी तहसील में स्वास्थ्य पर औसत परिवारिक खर्च

क्र.स.	स्वास्थ्य पर मासिक खर्च	एस्.सी.		अन्य जातियां		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	100-300 रु.	15(31%)	33(100%)	27(26%)	117(100%)	192(64%)
2.	300-500 रु.	14(29%)	0(0.0%)	48(47%)	0(0.0%)	62(21%)
3.	500-700 रु.	15(31%)	0(0.0%)	21(21%)	0(0.0%)	36(12%)
4.	700-800 रु.	4(9%)	0(0.0%)	6(5%)	0(0.0%)	10(3%)
	योग	48	33	102	117	300

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

चिकित्सा की गुणवत्ता में सुधार

खेतड़ी तहसील में चिकित्सा की इतनी अच्छी व्यवस्था होने के बावजूद भी यहाँ के लोग चिकित्सा में और सुधार की गुंजाइश रखते हैं। लोगों के

उपचार में बेहतर सुविधाओं का इजाजा होना चाहिए व अधिक से अधिक डॉक्टर व अधिक अस्पतालों की स्थापना होनी चाहिए। जिससे चिकित्सा की गुणवत्ता में बढ़ोतरी हो सके। क्षेत्र अध्ययन पर भी यहाँ बात सभी लोगों ने बताई है।

सारणी 1.23 : खेतड़ी में चिकित्सा की गुणवत्ता में सुधार की शर्तें

क्र.स.	चिकित्सा की गुणवत्ता	एस्.सी.		अन्य जातियां		योग
		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1.	बेहतर सुविधाएं हो	48	33	102	117	300
2.	अधिक अस्पताल हों	48	33	102	117	300
3.	अधिक डॉक्टर हों	48	33	102	117	300

स्रोत : क्षेत्र अध्ययन, मई 2010

उपर्युक्त आंकड़ों से यह प्रतीत होता है कि लगभग सभी परिवार चाहे वह अनुसूचित जाति का हो या अन्य जाति का सभी भी एक ही राय है कि बेहतर सुविधा उन्हें उपलब्ध हो, अधिक अस्पतालों की स्थापना की जाए व अधिक से अधिक डॉक्टरों की नियुक्ति की जाए। इससे चिकित्सा की सुविधाएं और भी बेहतर हो सकेंगी।

चिकित्सा सुविधाओं का वितरण एवं उपलब्धता

खेतड़ी तहसील का विकास तीव्र गति से हुआ है। इसमें चिकित्सा सुविधाओं का भी महत्वपूर्ण योगदान है। खेतड़ी में ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में चिकित्सा की सुविधा मौजूद है। यहाँ पर विभिन्न बीमारियों के उपचार के लिए प्रशिक्षित डॉक्टर व दवाईयों की उपलब्धता व बीमारियों की जांच की सुविधाएं भी उपलब्ध है। खेतड़ी के ग्रामीण

क्षेत्रों में 10 जगहों पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना कर रखी है। इसके अतिरिक्त 62 उप स्वास्थ्य केन्द्र भी यहाँ पर मौजूद हैं। एक सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र व राजकीय आयुर्वेद चिकित्सालय खेतड़ी के शहरी क्षेत्र में स्थापित है। खेतड़ी के शहरी क्षेत्र में चिकित्सा की पूर्णतः सुविधाएं प्राप्त हैं। यहाँ पर लगभग सभी सामान्य बीमारियों के ईलाज व टीकाकरण की सुविधा उपलब्ध है। यहाँ पर हम खेतड़ी तहसील के संदर्भ में चिकित्सा सुविधाओं के विभिन्न प्रात्यों का अध्ययन करेंगे।

चिकित्सा प्राप्त रोगी-

खेतड़ी तहसील व झुन्झुनू जिले में कई प्रकार के मरीज विभिन्न प्रकार की चिकित्सा प्राप्त करते हैं। इनका विवरण निम्न प्रकार से प्रस्तुत है -

सारणी 1.24 : राजकीय चिकित्सा संस्थाओं में चिकित्सा प्राप्त रोगी, 2000-01 से 2004-05

क्र.स.	वर्ष	एलोपैथिक		आयुर्वेदिक		कुल	
		अंतरवासी	बाह्य	अंतरवासी	बाह्य	अंतरवासी	बाह्य
1.	2000-01	75915(99.91%)	2932483(63.32%)	70(0.09%)	1698684(36.68%)	75988	4631167
2.	2001-02	79829(99.9%)	3167078(63.32%)	76(0.1%)	1834574(36.68%)	79905	5001652
3.	2002-03	85587(100%)	3088706(69.61%)	0(0.0%)	1348291(30.39%)	85587	4436997
4.	2003-04	89059(100%)	3094963(71.07%)	0(0.0%)	1259657(28.93%)	89059	4354620
5.	2004-05	88506(99.99%)	2927903(66.13%)	13(0.1%)	1499805(33.87%)	88519	4427708

स्रोत : कार्यालय जिला आयुर्वेदिक एवं एलोपैथिक अधिकारी, झुन्झुनू

चिकित्सा केन्द्रों पर स्टाफ-

खेतड़ी तहसील के ग्रामीण व नगरीय स्वास्थ्य केन्द्रों पर अलग-अलग स्टाफ की व्यवस्था है। ग्रामीण क्षेत्रों में पी.एच.सी. सेन्टरों पर अलग-अलग संख्या में कर्मचारी कार्यरत है।

सारणी 1.25 : खेतड़ी तहसील में विभिन्न केन्द्रों पर स्टाफ, 2010

क्र.स.	स्वास्थ्य केन्द्र का नाम	स्टाफ की संख्या	प्रतिशत
1.	सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र	28+4+2	26.15
2.	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	पपुरना 8+3, बवाई 8+3, रसूलपुर 7+5, ढाणी बादान 5+3, तातीजा 6+3, शिमला 2+6, टीबा बसई 3+3, सिहोड़ 7+3, त्वीन्दा 8+3, जसरापुर 9+1	74.62
	कुल	130	130

स्रोत : ब्लॉक स्वास्थ्य अधिकारी कार्यालय, खेतड़ी

यहाँ नगर के स्वास्थ्य केन्द्र पर 34 कर्मचारियों की नियुक्ति कर रखी है। इसके अलावा ग्रामीण स्वास्थ्य केन्द्र जो, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के नाम से जाने जाते हैं उनमें भी अलग-अलग संख्या में कर्मचारी नियुक्त है। यहाँ पर 10 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर पपुरना में 11, बवाई में 11, रसूलपुर में 12, ढाणी बादान में 8, तातीजा में 9, शिमला में 8, टीबा बसई में 6, सिहोड़ में 9, त्वीन्दा में 11, जसरापुर में 10 कर्मचारियों की नियुक्ति कर रखी है। कुल स्टाफ का 26 प्रतिशत अकेले खेतड़ी नगर के सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र पर ही पदस्थापित है।

स्वास्थ्य सेवाओं का वितरण-

खेतड़ी तहसील में ग्रामीण व नगरीय दोनों क्षेत्रों में स्वास्थ्य की सुविधाओं का इतना ज्यादा पाया जाना स्वास्थ्य की दृष्टि से काफी

महत्वपूर्ण है। यहाँ पर चिकित्सा सेवाओं का वितरण ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में अलग-अलग प्रकार से करेंगे। इन सेवाओं का वितरण हम क्षेत्रफल के आधार पर, लाभान्वित जनसंख्या के आधार पर व स्टाफ के आधार पर करेंगे।

खेतड़ी के ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं का वितरण निम्न प्रकार से प्रस्तुत है -

खेतड़ी तहसील के ग्रामीण क्षेत्र में स्वास्थ्य सेवाओं का वितरण एवं उपलब्धता का आंकलन हम विभिन्न प्रकार के आयामों द्वारा करेंगे। इनमें स्वास्थ्य केन्द्रों की (क्षेत्रफल के आधार पर), पी.एच.सी. द्वारा सेवित जनसंख्या व स्टाफ द्वारा सेवित जनसंख्या का विवरण प्रस्तुत है।

(अ) स्वास्थ्य केन्द्रों का वितरण

सारणी 1.26 : खेतड़ी क्षेत्र में प्रति 100 वर्ग कि.मी. में स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या

क्र.स.	क्षेत्र	संकेतक	प्राप्त संख्या
1.	ग्रामीण	पी.एच.सी. संख्या	1.27
2.	नगरीय	सी.एच.सी. संख्या	4.85

सारणी 1.26 से यह पता चलता है कि यहाँ पर ग्रामीण क्षेत्र में प्रति 100 वर्ग किमी. पर 1.27 की संख्या में पी.एच.सी. मौजूद

हैं जबकि नगरीय क्षेत्रों में यह संख्या अपेक्षाकृत काफी अधिक अर्थात् लगभग चार गुणा पाई गयी।

(ब) स्वास्थ्य केन्द्रों द्वारा लाभान्वित जनसंख्या

खेतड़ी क्षेत्र में स्वास्थ्य केन्द्रों द्वारा लाभान्वित जनसंख्या निम्न प्रकार है-

सारणी 1.27 : खेतड़ी क्षेत्र में एक स्वास्थ्य केन्द्र द्वारा लाभान्वित औसत जनसंख्या

क्र.स.	क्षेत्र	संकेतक	प्राप्त संख्या
1.	ग्रामीण	लाभान्वित जनसंख्या	2729.09
2.	नगरीय	लाभान्वित जनसंख्या	1901.16

सारणी 1.27 से यह पता चलता है कि यहाँ पर ग्रामीण क्षेत्र में एक पी.एच.सी. सेन्टर द्वारा औसतन 2729.09 जनसंख्या लाभान्वित हो रही है। तहसील के नगरीय क्षेत्र में एक स्वास्थ्य केन्द्र औसतन 1901.16 व्यक्तियों को अपनी सेवाएं दे रहा है। अतः नगरीय क्षेत्रों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति केन्द्र पर आश्रित

जनसंख्या करीब 1.44 गुणा है।

(स) चिकित्सा स्टाफ द्वारा लाभान्वित जनसंख्या

खेतड़ी क्षेत्र में चिकित्सा स्टाफ की उपलब्धता का विवरण निम्न प्रकार है-

सारणी 1.28 : खेतड़ी तहसील में एक चिकित्सा स्टाफ द्वारा लाभान्वित औसत जनसंख्या

क्र.स.	क्षेत्र	संकेतक	प्राप्त संख्या
1.	ग्रामीण	स्टाफ द्वारा लाभान्वित जनसंख्या	26199.3
2.	नगरीय	स्टाफ द्वारा लाभान्वित जनसंख्या	23774.86

सारणी 1.28 यह बताती है कि ग्रामीण क्षेत्र में औसतन 26199.3 जनसंख्या एक चिकित्सा स्टाफ पर आश्रित है जबकि नगर में यह आश्रित 23774.86 व्यक्ति हैं। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति चिकित्सकीय स्टाफ पर आश्रित जनसंख्या नगरीय क्षेत्र से 1.10 गुणा अधिक है।

खेतड़ी के ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में चिकित्सा सुविधाओं के वितरण की तुलना करने पर असमानता का प्रारूप उभरता है, क्योंकि नगरीय क्षेत्र में स्थिति गांवों से बेहतर है।

निष्कर्ष-

क्षेत्र अध्ययन के कृषि एवं घरेलू कार्य में मदद करने वाले बच्चों के साथ आर्थिक रूप से सक्रिय बच्चों का अध्ययन भी किया गया है। कृषि कार्य में बच्चों की मदद को प्रतिबेदन करने वाले परिवारों में से लगभग 55 प्रतिशत परिवारों के बच्चे कृषि कार्य में 1 से 2 घंटे तक मदद करते हैं। यह कार्य एस.सी. वर्ग के बच्चे अधिक मात्रा में करते हुए पाये गये हैं। इसी प्रकार घरेलू कार्य में मदद करने वाले बच्चों का विवरण दर्शाता है कि करीब 83 प्रतिशत परिवारों के बच्चे 1 से 2 घंटे तक की मदद घरेलू कार्य में करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चे इसमें ज्यादा संलग्न पाये गये हैं।

आर्थिक रूप से सक्रिय बच्चों में से अन्य जातियों के करीब 80 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों के बच्चे कृषि कार्य में लगे हैं। नगरीय क्षेत्र में दोनों ही समुदायों के बच्चे मजदूरी पर अधिक आश्रित पाये गये हैं। खेतड़ी नगर में बाल-श्रमिकों के अलग से किये गये अध्ययन में भी बाल श्रमिक मजदूरी एवं शारीरिक श्रम करते हुए देखे गये हैं। इनमें से ज्यादातर बच्चे 5 से 10 घंटे कार्य करते हैं। बाल श्रमिकों द्वारा अपने कार्य से जुड़ी समस्याओं में कार्यस्थल की दूरी एवं भारी, थकावट भरे कार्य को गिनाया गया। बाल-श्रमिकों के अभिभावक उनके द्वारा किये गये कार्य को अपने परिवार के लिए महत्वपूर्ण मानते हैं। अधिकांश बाल श्रमिक अपने जीवन में शिक्षा ग्रहण करके आगे बढ़ने व सफल होने का सपना देखते हैं। लगभग 80 प्रतिशत बाल श्रमिक पूर्ण या आंशिक रूप से पारिवारिक खर्च में अपनी आय से मदद करते हैं।

अधिकतर परिवार चिकित्सा सुविधाओं के लिए सरकारी चिकित्सा सुविधाओं पर आश्रित हैं, किन्तु नगर की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को चिकित्सा सेवाएँ हेतु अधिक दूर तक जाना पड़ता है। अधिकांश लोग बच्चों के टीकाकरण के महत्व को समझते हैं तथा इसे अपनाते हैं। गरीब विद्यार्थियों के लिए शिक्षा को संभव बनाने एवं कुपोषित बच्चों की स्थिति को सुधारने के लिए बताई गई मिड-डे मील

की आवश्यकता एवं पर्याप्तता के प्रति सम्बन्धित लोग सकारात्मक हैं। सर्वेक्षण में नगरीय की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों द्वारा स्वास्थ्य सेवाओं पर अधिक खर्च करने का प्रारूप देखा गया है। लोगों में बेहतर सुविधाएं, अधिक अस्पताल व डॉक्टरों को लेकर आम राय पाई गई है। स्वास्थ्य केन्द्रों के वितरण तथा चिकित्सकीय स्टाफ के संकेतकों से ज्ञात होता है कि नगरों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में इनकी दशा खराब है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

- 1 अंकर, आर एण्ड बर्ज, एम (1998) इकोनोमिक्स ऑफ चाइल्ड लेबर इन इण्डस्ट्रिज, आइएलओ, जिनेवा
- 2 चांदना, आर सी (1994), ए ज्योग्राफी ऑफ पोपुलेशन कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली
- 3 चौधरी, डी पी, (1996) डायनेमिक प्रोफाइल ऑफ चाइल्ड लेबर इन इंडिया, नई दिल्ली
- 4 दत्ता, एस के (2001) चाइल्ड लेबर इन इंडिया : ट्राइलिंग द रूट आफ द प्रोब्लमस
- 5 दिनेश, बीएम (1988) इकोनोमिक एक्टिविटीज आफ चिल्ड्रन डायमेंसन, काजेज एण्ड कॉन्फेनसेज, दया पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली
- 6 घोष, ए (1992) स्ट्रीट चिल्ड्रन ऑफ कोलकाता, ए सन्सटोन्सियल एनालिसिस, नेशनल लेबर इंस्टीट्यूट, नोएडा
- 7 गवर्नमेंट ऑफ इंडिया (1986) चाइल्ड लेबर प्रोहिबिशन एण्ड रेगुलेशन एक्ट, 1986, मिनिस्ट्री ऑफ लेबर एण्ड एम्प्लोयमेंट, नई दिल्ली
- 8 खाट्ट, के के (1993), वर्किंग चिल्ड्रन इन इंडिया, ऑपरेशन रिसर्च ग्रुप बडौदा
- 9 कुलश्रेष्ठ, सी जे (1994) इंडियन चाइल्ड लेबर, उपल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली
- 10 मिश्रा, एस (1990) माइग्रेशन - स्पेशियल प्रेसपेक्टिव, रायत पब्लिकेशन, जयपुर
- 11 मिश्रा, एल (2000) चाइल्ड लेबर इन इंडिया, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली
- 12 सक्सेना, अनू (1999) ह्यूमन राइट्स एण्ड चाइल्ड लेबर इन इंडिया इण्डस्ट्रीज, शिप्रा, दिल्ली
- 13 शर्मा, बी के एण्ड विश्वामित्र (1990) चाइल्ड लेबर एण्ड अरबन इनफोर्मल सेक्टर, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशनस, नई दिल्ली
- 14 सिन्हा, ए (1998) चाइल्ड लेबर एण्ड हेल्थ, सोशियल चेंज, वोल्यूम 48(1), जनवरी-मार्च
- 15 वनिता, बी (2009), स्ट्रीट चिल्ड्रन : फेक्ट्स एण्ड इश्यूज, कुरुक्षेत्र

भारतीय परम्पराओं में लोक कलाएँ

प्रिया सिंह

शोधार्थी, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर



shodhshree@gmail.com

लोक का शाब्दिक अर्थ है 'प्रकाश'- अर्थात् 'इन्द्रिय गोचर समूचा संसार।' यह एक व्यापक शब्द है, जो स्वयं में समस्त संचरणशील सविर जीवन सम्मिलित किए हुए है। लोक व्यतीत नहीं, प्रतिक्षण उपस्थित वर्तमान है, प्रमाण है। लोक शब्द उतना ही व्यापक है, जितना मानव समाज का प्रसार। लोक संस्कृति स्वयं में विविध गुण, रंग, प्रभाव, रूप सीपित करती है। लोक संस्कृति में जीवन का प्रभाव है। ये कलाएँ ग्रामीण एवं नगरीय संस्कृति के समन्वय का अनन्त स्रोत है। लोक संस्कृति मांगलिक अनुष्ठानों में विधिवत् सम्पादित व प्रसारित होती दिखाई पड़ती है। इसमें श्रद्धा व भक्ति की प्राथमिकता है। इसी के अन्तर्गत सोलह संस्कारों की पुष्टि विधि-विधान पूर्वक की जाती है, यथा- जन्म संस्कार, अन्नप्रदान, कर्णबेधन, मुण्डन, यज्ञोपवीत, विवाह आदि। भारतीय शास्त्रों में कला का अर्थ - सुन्दर, मधुर, कोमल व सुख लाने वाला माना गया है। इस रूप में देखा जाए तो लोक कला में लोक जीवन की आनन्दमय धारा प्रवाहित होती रहती है। लोक कला मन की सहजावस्था में आदिम-आनन्द की अजस्र धारा है जिसमें समय तथा स्थान की नवीन चेतना की छोटी-छोटी धारयें मिलती रहती हैं और विलीन होती रहती हैं। लोक जीवन में कला का सहज स्फूर्ण होता है तथा वह अपने शुद्ध आदिम संस्कारों के साथ संस्कृति तथा युग संदर्भ से जुड़कर प्रवाहमान होती है।

आदिकाल से ही मानव का जीवन कलामय रहा है और आज भी उसकी स्पष्ट झलक दिखाई देती है। कला ने मानव जीवन को अपने रंग में ऐसा रंगा, जिसका रंग किसी भी देश- प्रदेश के आज के प्रगतीशील समाज में भी फीका नहीं पड़ा है। लोककलाएं मानव जीवन से गहराई से जुड़ी हैं। जिन्हें वह कलात्मक रूपों में सम्पादित करता है। लोककला उतनी ही प्राचीन है जितनी मानव सभ्यता। लोककलाएं विशेष रूप से धार्मिक भावना एवं अनुष्ठानों से जुड़ी हुई हैं जिसके अनेक रूप हम समाज में देखते हैं। लोककला शान्त व अबाध गति से धार्मिक, सांस्कृतिक व पारिवारिक परम्पराओं के साथ कोटि-कोटि जनता के जीवन में एक रस होकर अतीत की किसी स्वर्णिम बेला से हमारे साथ आनन्द और प्रेम के अटूट बंधन से बंधी चली आ रही है। संस्कृति से संस्कारों का जन्म हुआ। जीवन को शुद्ध और पवित्र बनाने में संस्कारों ने एक विशेष भूमिका निभाई है। इन संस्कारों पर सजा, अलंकरण एवं धार्मिक भावना से युक्त लोककलाएं जन-जीवन में रच-बस गईं। भारत में कोई त्यौहार, उत्सव या संस्कार ऐसा नहीं होगा, जहां कला का किंचित मात्र भी प्रदर्शन या प्रयोग न होता हो। अतः धार्मिक जीवन में लोककलाओं का विशेष महत्व रहा है।

लोक परम्परा व लोकाचार आदि विषयों के अध्ययन का प्रारंभ सर्वप्रथम यूरोप में सन् 1687 में जान आत्रे की पुस्तक (रिमेन्स ऑफ जेंटिलिज्म एण्ड जुडाइज्म) के लेखन के साथ प्रारंभ हुआ लेकिन 'फोक' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग सन् 1856 में इंग्लैंड के सुप्रसिद्ध पुरातत्वविद् विलियम जान थामस ने किया। लोक कला मानव समूह की सहज अभिव्यक्ति का ही एक स्वरूप है। यह कला मानव सभ्यता के अभ्युदय के साथ विकसित हुई तथा धार्मिक विश्वासों, आस्थाओं के नियमन में पल्लवित हुई। भारतीय साहित्य में घर-आँगन की भित्तियों पर स्त्रियों द्वारा चित्रों को उकेरने के उदाहरण मिलते हैं। जिसकी सौन्दर्यानुभूति एवं मांगलिक अभिलाषा, पारस्परिक सुख-समृद्धि प्रतीक रूप में अभिव्यक्त होती है। लोक कला हमारे जीवन का एक

अविच्छिन्न अंग है। भारत की कोटि-कोटि जनता के जीवन में प्राण होकर यह लोक कला न जाने अतीत की स्वर्णिम बेला से हमारे उल्लास सम्बन्धों से जुड़कर हमारे चली आ रही है।

इस प्रकार लोककला को पनपने का जो सहज वातावरण मिलना चाहिए था उसको सर्वप्रथम औद्योगिकरण ने बाधित किया था। औद्योगिकरण के कारण व्यक्ति को अपनी योग्यतानुसार काम मिलने से लोककला के लिए उसे अवकाश मिलना समाप्त हो गया था। इसके पश्चात आर्यी संचार-क्रान्ति एवं बाजारवाद ने सम्पूर्ण विश्व को एक ग्राम में बदल दिया। साथ ही समाज में बेरोजगारी फैलने लगी। सहज उपलब्ध वस्तुएँ भी अब मिलना कठिन हो गईं। अब सामान्य मानव को अपने जीवन को जीने के लिए अधिक संघर्ष करना पड़ रहा है। वे आधुनिक सुविधाएँ पाने के लिए अतिरिक्त श्रम में जुट गया है। ऐसी विषम परिस्थितियों में लोककला का स्वरूप परिवर्तित होता नजर आ रहा है। हमें इस बारे में विचार करना होगा। उसमें क्षैत्रियता का पुट समाप्त होता जा रहा है। लोककला के नाम पर कलाकार उन प्राचीन नमूनों को बनाकर बाजार में बेचने लगे हैं, जिससे उनका स्वाभाविक सौन्दर्य समाप्त होता जा रहा है। इन परिस्थितियों में लोककला के भविष्य की ओर देखें तो लगता है कि अब उसे समझने के लिए नये मापदण्ड खोजने होंगे। उसकी नई परिभाषा गढ़नी होगी। साथ यह भी विचार करना आवश्यक है कि इन लोककलाओं को समाप्त होने से बचाकर, उनको नई पीढ़ी तक कैसे हस्तान्तरण किया जाए जिससे इनका वजुद समाज के साथ समाज में बना रह सके।

प्रागैतिहासिक चित्रों में अनेक अनुपम उदाहरण हैं, जिन्हें लोक कला की संज्ञा दी जाती है। इसी पृथ्वीभूमि में यदि सिंधु नदी सभ्यता में मिले मृद-पात्रों पर लिखित लोक-चित्र नमूनों को दृष्टिगत किया जाये तो एक लोक परम्परा बनती नजर आती है। अजंता के भित्ति चित्रों, अपभ्रंश चित्रों की पुष्कल लोक परम्परा में लेकर मुगल व राजपूत काल के तो मुग्ध करने वाले उदाहरण प्राप्त होते हैं। यहाँ नहीं आधुनिक कला के विकास में भी इसका अद्वितीय योग रहा है। मानव जीवन की सचित्र कहानी तृपी लोक कला जन्म से मृत्यु तक जीवन में समाहित है जिसका हम अपने घरों में, त्यौहारों व उत्सवों, रीति रियाजों तथा अनुष्ठानों में अपनी अभिव्यक्ति के साधनों में प्रयोग करते हैं। यूँ तो भारत के समस्त प्रदेशों व क्षेत्रों में लोक कला के मन भावन विविध रूप देखने को मिलते हैं, लेकिन राजस्थान का जन मानस लोककला से पूरित बहुत ही निराला है। सदियों से रंगीले राजस्थान में साहित्य, कला व संस्कृति की जो अविरल रसधार प्रवाहित होती रही है उसी कारण यह गौरव प्रदेश आज भी अपनी लोक धर्मा परम्परा का अद्भुत उदाहरण बना हुआ है। यहाँ की सलोनी मारुना-कला, वस्त्रकला, मृणकला, काष्ठकला, खिलौने, तौरण, थम्भ, ईसर, गणगौर, कावड़, कठपुतली और काष्ठ पर नक्काशी जैसी कुशल, लोक कलायें राजस्थानी जन-जीवन की जीवन्त प्रतिबिम्ब बनी हैं।

संस्कृति कोई दस-बीस या सौ-पचास सालों से रची जा सकने वाली चीज नहीं है। कई शताब्दियों तक एक समाज के लोग जिस ढंग का खान-पान, रहन-सहन, पठन-लेखन, सोच-समझ और राज कार्य अपनाते अथवा धर्म-कर्म करते हैं, वे सभी कार्य उनकी संस्कृति

उत्पन्न करते हैं। हमारे पहनने-ओढ़ने, घूमने-फिरने और रोने-हँसने में भी हमारी संस्कृति की पहचान होती है। दरअसल संस्कृति जिन्दगी जीने का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से संग्रहित होकर उस समाज में छाया रहता है। जिसमें हम रहते हैं। इसलिए जिस समाज में हमारा जन्म हुआ है, हम पैदा हुये हैं अथवा जिस समाज के साथ मिलकर हम जी रहे हैं, उसकी संस्कृति हमारी संस्कृति है। यहाँ हमारी संस्कृति का अंग बन जाता है और हमारी मृत्यु के बाद हम दूसरी चीजों को के साथ अपनी संस्कृति की धरोहर भी अपनी सन्तानों के लिए छोड़ जाते हैं। समग्रतः संस्कृति वह कड़ी जायेगी जो जीवन में व्याप्त है। आदिकाल से ही दार्शनिक, चित्रकार और शिल्पकार हमारी संस्कृति के सृजनकर्ता रहे हैं। वे सभी समाज को अपनी ओर से सदा से कुछ देते आ रहे हैं।

जिस प्रकार भारतीय वाङ्मय का इतिहास भारतीय बोलियों के साहित्य के बिना अधूरा है। उसी प्रकार भारतीय चित्रकला का इतिहास उसकी लोककला के बिना अपूर्ण है। इस लोककला को जीवित रखने और उसमें नित नये जीवनी तत्वों का समावेश करने का श्रेय हमारी नारियों को रहा है। विभिन्न धार्मिक व सामाजिक उत्सवों वा घर के सभी उपयुक्त स्थानों पर भाँति-भाँति की आकृतियाँ अंकित करके मंगलमय आध्यात्मिक भावनाओं के रूप में इस लोककला की उल्लासमयी परम्परायें हमारे लोक-जीवन में नारियों के द्वारा कालान्तर से चली आ रही हैं।

लोक कलाओं से आशय हम उन कलाओं से लेते हैं, जिनका मूल गाँव में होता है और ये ग्रामीणों के जीवन, धर्म, धार्मिक अनुष्ठानों, त्यौहारों, मेलों आदि से जुड़ी होती है। जीवन से सीधी जुड़ी होने के कारण ही यह प्राचीन परम्परायें आज भी हमें उसी स्वरूप में जीवित मिलती हैं। किसी भी देश की पहचान उसकी कला एवं संस्कृति से होती है, जो उसे अन्य देशों से अलग करती है। परन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह निजता (पहचान) बनाए रख पाना असंभव सा होता जा रहा है। इसका कारण संचार क्रान्ति को माना जा सकता है। जिसके कारण विश्व के एक कोने में होने वाली प्रगति, विद्रोह एवं क्रांति कुछ ही क्षणों में विश्व के सभी भागों में पहुँच जाती है। परिणामस्वरूप विभिन्न देशों की संस्कृतियाँ आपस में लभान्वित होने के साथ-साथ संक्रमित भी हो रही हैं। यह प्रभाव लोककला पर भी नजर आता है, जिसका अध्ययन आवश्यक है।

लोककला सुविधासम्पन्न एवं सुविधाहीन समाज के बीच की कड़ी मानी जाती है। जिसको ग्रामीण सभ्यता से जोड़कर देखा जाता है। लोककला पर कोई बाह्य प्रभाव नहीं पड़ता और वे कलाएँ अकृत्रिम बनी रहती हैं। क्योंकि यह कला किसी क्षेत्र में रहने वाले मानव समूह के रहन-सहन तथा विचारों की सहज अभिव्यक्ति होती है। जिसमें स्थानीय वस्तुओं जैसे पर्वतीय क्षेत्रों में पत्थर तथा लकड़ी, समुद्री क्षेत्रों में शंख, सीप, कौड़ी आदि का उपयोग कर कलाकृतियों का निर्माण होता है। अतः इन दोनों स्थानों पर बनी कलाकृतियों के रूप भी, एक समान नहीं होते। ये कलाकृतियाँ वैयक्तिक शुद्ध संकीर्णताओं से परे जनजीवन की आस्था पर अवलम्बित रहती हैं तथा पूर्णतया भाव प्रधान होती हैं। वर्तमान समय में लोककला को उसके स्वरूप के आधार

पर प्रो.सी.एल. झा के अनुसार चार भागों में बाँटा जा सकता है। इन्हीं स्वरूपों के आधार पर लोक-कला की वर्तमान दशा पर विचार किया जाना उपयुक्त होगा जो इस प्रकार है-

धार्मिक भावनाओं पर आधारित लोककला- विभिन्न त्यौहारों, पर्वों, उत्सवों (शादी, विवाह आदि) पर अंकित की जाने वाली दन्तकथाओं, लोक कथाओं एवं नीति कथाओं आदि का चित्रण जो फर्श, दीवारों या कागज पर किया जाता है, इसके अन्तर्गत आता है। प्राचीन समय में प्रचलित माँडना एवं रंगोली आदि में प्रयुक्त होने वाली निर्माण सामग्री की अनउपलब्धता के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों में भी पक्के मकान होने के कारण दीवार को गोबर या मिट्टी से लीपकर जो आकार बनाए जाते थे वह पक्के मकानों में संभव नहीं हो पा रहा है। जिसके कारण माँडना अपने स्वाभाविक सौन्दर्य को खोता जा रहा है। वहीं राजस्थान के भीलवाड़ा और शाहपुरा आदि में प्रचलित 'पाकूजी की फड़' हो या बिहार के मिथिला में मधुवन नामक ग्राम के 'पट-चित्र' जो लोककला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं, पर व्यावसायिक मानसिकता के कारण वे चित्र सहज अभिव्यक्ति एवं सौन्दर्य को छोड़ते नज़र आते हैं। इसी क्रम में उदयपुर (राजस्थान) के निकट मौलेला ग्राम के शिल्प जो धार्मिक आस्था के कारण प्रचलित थे अब विशुद्ध व्यावसायिकता की भेंट चढ़ गए हैं।

विभिन्न ऋतुओं तथा जन्म, विवाह एवं मृत्यु के संस्कारों पर विभिन्न अलंकरणों तथा अनुष्ठानों का आयोजन किया जाता था जो लोककला के उत्कृष्ट स्वरूप हुआ करते थे। आज अपना महत्व खोते नज़र आ रहे हैं। शहर के व्यक्तियों के अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में भी अब इन कार्यों के प्रति लोगों में उत्साह नहीं रहा, वे इन्हें गैर जरूरी समझने लगे हैं। इन सभी कार्यों को वे पिछड़ेपन की निशानी मानने लगे हैं।

मनोरंजक भावनाओं पर आधारित लोककला- मानव अपने सहज कलाबोध के द्वारा तुच्छ से तुच्छ वस्तु को भी सौन्दर्य प्रदान करने की कला जानता है। इसके लिए वह दीवारों पर आलेखन, मेजपोश, फर्श, चादर व तक्ति के गिलाफ आदि पर कर्सीदाकारी करता है। कपड़े एवं अनुपयोगी वस्तुओं से खिलौनें आदि का निर्माण करता है। बालिकाओं के तरह-तरह से बालों को बनाना, हाथों में मेंहड़ी, पाँव में महावर लगाना आदि इसके अन्तर्गत आते हैं। परन्तु आज घर-घर में टीवी, कम्प्यूटर एवं इन्टरनेट की उपलब्धता ने नई-नई वस्तुओं की जानकारी उपलब्ध करवा दी है। मेंहड़ी जैसी सहज उपलब्ध वस्तु को भी बाजारवाद ने (कीप के रूप में) विकृत कर दिया है। जिन्हें सभी व्यक्ति अन्धानुकरण के कारण अपनाये जा रहे हैं। अनुपयोगी वस्तुओं के उपयोग एवं घर में किए जाने वाले कार्यों को भी समय की कमी एवं अपने आप को आधुनिक कहलवाने के लिए उन्हें बाजार से लाना ज्यादा पसंद करते हैं।

व्यक्तिवादी सांस्कृतिक भावनाएँ और लोककला- लोककला में व्यक्तिगत और सांस्कृतिक कला का भी एक स्वरूप है। यह सामूहिक और सामुदायिक भावनाओं पर आधारित होती है। एक जाति में प्रचलित परम्पराओं के रूप में जो शादी-व्याह, मृत्यु संस्कार आदि के समय चित्रों में अंकित किए जाते हैं वे प्रायः एक से ही होते हैं। जैसे बनजारों की पौशाक, शादी पर आलेखन आदि। वर्तमान में जब पूरा

विश्व एक ग्राम बन गया है तो ये सभी स्वरूप एवं निजता छूटती जा रहे हैं। सभी जातियों को विकास के समान अवसर प्राप्त हैं इसलिए वे एक समूह के होकर नहीं रह सकते, उनका पहनावा भी वैश्विक हो गया है। केवल परम्परा के नाम पर लोक कलाकारों द्वारा पहनी जाने वाली पौशाकें उन्हें अजूबा बना रही हैं न की उनकी पहचान। अन्य उदाहरण के रूप में राजस्थान की जलवायु के आधार पर यहाँ के पहनावे में धोती-कुर्ता एवं सिर पर साफा पहनना यहाँ की पहचान थी। परन्तु आज शहर तो छोड़ो गाँवों में भी यह प्रचलन घटता जा रहा है, सभी पेन्ट, शर्ट तथा जींस, टी-शर्ट आदि पहने दिखाई देते हैं। पगड़ी और साफा भी नदारद है जो कि समाज में उसके स्वाभिमान का प्रतीक थे। विवाह आदि पर प्रचलित सांस्कृतिक परम्पराएँ भी दम तोड़ने लगी हैं। कभी समय की कमी, कभी सामग्री की अनुपलब्धता एवं मंहगी होने के कारण छोड़ी जा रही हैं।

व्यावसायिक भावनाओं पर आधारित लोककला - यह लोककला का वह स्वरूप है जो मानव की व्यावसायिक भावनाओं की सहायता करता है। हाथीदाँत, लाख, लकड़ी, सींग और बर्तनों को सजाना आदि इसके अच्छे उदाहरण हैं। खिलौनें, गुड़िया, इलियाँ एवं मिट्टी की मूर्तियाँ आदि को विभिन्न रंगों से रंगने की प्रथा आदि लोककला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। वर्तमान समय में ये कलाएँ भी संघर्षशील नज़र आ रही हैं। आज हाथीदाँत, चंदन आदि प्रतिबन्धित हो गए हैं। लकड़ी भी आसानी से उपलब्ध नहीं हो रही है। मिट्टी से बने बर्तन आदि का उपयोग सभी जगह सीमित हो गया है। इसका स्थान स्टील एवं बौनचाइना जैसे पदार्थों ने ले लिया है। आज लोककला के नमूने जीवन की आवश्यकता न होकर धनाढ्य वर्ग के लिए कलात्मक नमूने के रूप में संग्रह की वस्तु बन गए हैं। इसके कारण इन कलाकृतियों को बनाने वाले कलाकार भी सहज उन्मुक्त होकर इनका निर्माण नहीं कर पा रहे हैं। इसलिए इन कलाकृतियों में लोककला का वह सहज सौन्दर्य नष्ट होता जा रहा है।

लोककला से हमारा स्वाभाविक अपनत्व है। भारतीय कला और विशेषतः चित्रकला के संवर्द्धन समुन्नयन की दृष्टि से उसका विशिष्ट महत्व रहा है। अनादि लोककला से प्रेरणा प्राप्त कर हमारे सभी युगों के चित्रकारों ने अपनी कला-कृतियों में लोकप्रियता का तत्व भरा। आज का चित्रकार प्राचीन चित्रशैलियों की मान्यता के सम्बन्ध में भले ही मतभेद रखता हो, किन्तु लोक कला के लिए उसकी भी स्वाभाविक अभिरुचि है। लोक शैली की प्रेरणा से आज के प्रतिष्ठा प्राप्त कुछ चित्रकार अच्छे प्रयोग प्रस्तुत कर रहे हैं। लोक शैली से प्रेरित इस प्रकार के आधुनिक चित्र सामाजिक जीवन में उसी निष्ठा से अपनाये जा रहे हैं। लोककला से हमारी इतनी निकटता एवं आत्मीयता है कि उसकी उपस्थिति को हम सभी जगह अनायास ही प्राप्त कर लेते हैं। एक कलाकार से लेकर एक साधारण ग्रामवासी में लोककला के लिए समान अभिरुचि है। लोककला किसी भी राष्ट्र की सांस्कृतिक मर्यादा है। इस मर्यादा में अनुस्यूत भिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ अपने मूल रूप में एक ही दृष्टिगत होती हैं। लोककला के द्वारा हमें इसी सांस्कृतिक एकता का आभास मिलता है। इस दृष्टि से लोककला का राष्ट्रीय महत्व है। हमारी सांस्कृतिक भावभूमि को अभिसिंचित करके लोककला की धारा

समान गति से निरन्तर आगे बढ़ती रही है। उसमें उताल तरंगे नहीं, गर्जन-तर्जन नहीं। यह तो सागर के समान गंभीर और अनन्त है।

लोककला का सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से विशेष महत्त्व है। प्रत्येक पर्व, त्यौहार और उत्सव के अनुष्ठान के लिए लोककला के भिन्न-भिन्न प्रतीक निश्चित हैं। किसी में गणेश-लक्ष्मी, सरस्वती और स्वस्तिक को बनाने का विधान है तो किसी में केवल प्रकृति के खाके बनाकर उनको पूजा जाता है। ऋतु परिवर्तन के परिचायक त्यौहारों पर जो लोकचित्र बनाये जाते हैं। उनमें प्रकृति का आह्वान और राष्ट्र की सुख-समृद्धि के लिए मंगल-कामना का भाव होता है। दैनिक व्यवहार की वस्तुओं के चित्र बनाकर उनकी अनुकूलता के लिए प्रार्थना की जाती है।

हमारे सामाजिक जीवन के किसी की शुभ अवसर पर मंगलमयी लोककला का आह्वान किया जाता है। प्रत्येक उत्सव पर मंगलघट की स्थापना का विधान लोककला के ही अस्तित्व को सूचित करता है। विवाह के समय बधू के सौभाग्य की मंगलकामना के लिए उसके ललाट, कपोल और भ्रूओं आदि पर श्वेत तथा लाल रंगों के अंकित बिन्दु लोककला के ही रूप हैं। धर्म से परिरक्षित और समाज द्वारा समाद्रत यह लोककला कलाप्रेमी मानव के लिए आनन्दानुभूति का अनुपम साधन रही है। उसका एक आध्यात्मिक पक्ष भी है। इस आध्यात्मिक पक्ष के कारण ही वह लोकसंपूजित होती रही है। लोककलाओं में सुख समृद्धि के साथ राष्ट्र की मंगल-कामना का भाव छिपा होता है। यह कलाएँ सभी धार्मिक व अन्य उत्सवों पर दृष्टिगोचर होती हैं। ये कलाएँ वहाँ के सांस्कृतिक परिवेश को दर्शाती हैं। जहाँ से वे अपना सम्बन्ध रखती हैं। वस्तुतः हमारी इन लोककलाओं को जीवित रखने और उसमें नवीन तत्वों का समावेश करने का श्रेय हमारी ग्रहणियों को है, जिनके प्रवास स्वरूप प्राचीनकाल से ही अनेक उत्सवों पर इन विविध लोककलाओं की स्थिति देखने को मिलती है।

भारत में कोई त्यौहार या उत्सव ऐसा ना होगा जहाँ कला का किंचित् मात्र भी प्रयोग वा प्रदर्शन न होता होगा। होली, दीपावली, अष्टमी, करवाचौथ, दशहरा, नागपंचमी, गणेशोत्सव, गोवर्धन पूजन, जन्माष्टमी, साँझी आदि त्यौहार अनेक पौराणिक कथाओं, किंवदन्तियों, आख्यानों, नाति कथाओं से सम्बन्धित हैं। यहाँ मांगलिक कार्यों पर देवों का आह्वान कर नवग्रहों की संरचना में ज्यामितीय रूपों का सौन्दर्य परिलक्षित होता है। कमल, कलश, स्वास्तिक, चन्द्र, सूर्य आदि प्रतीकों की रचना की जाती है जिनके पृथक-पृथक दार्शनिक अर्थ होते हैं। चन्द्रमा अमृत का, जल से पूर्ण कुंभ सम्पन्नता का, स्वस्तिक कल्याण, जीवन की गति, चार पुरुषार्थ चार आश्रम, चार वेदों, विष्णु की चार भुजाओं, चार दिशाएँ, चार दिक्पाल तथा बीच के हिन्दु सृष्टि के स्वरूप के प्रतीक रूप हैं। इस प्रकार धर्म ने इस कला को मांगल्य एवं शुचिता की भावना प्रदान की है।

जीवन की उपयोगिता की वस्तुओं में प्रयुक्त कला को उपयोगिता वादी लोककला कहा गया है। इसमें आवश्यकता की पूर्ति का विशेष स्थान रहता है। बर्तन, वस्त्र, औजार, हथियार, वाद्य-यंत्र, दैनिक

उपयोग की अन्य हस्तशिल्प की वस्तुएँ जैसे- पंखे, टोकरी, चटार्द, आसन आदि में प्रयुक्त डिजाइन, घड़े सुराही, खिलौने आदि की चित्रकारी उपयोगी कला का रूप है। इन वस्तुओं का निर्माता वस्तुओं को सजित करके आनन्द और आत्मतुष्टि का अनुभव करता है। वामिनी राय, रेड्डी, पनिकर, लक्ष्मण वै आदि कलाकारों ने लोककला की शैली में चित्रों का निर्माण करके कला को समृद्ध बनाया है। इसके अतिरिक्त बाजीगर, ढोलक, सांरगी आदि बजाने की कला द्वारा लोग अपनी आजीविका भी चलाते हैं। आदिमानव की कला से लेकर आज की कला तक अलंकरण की भावना हमें लोककला में दिखाई देती है। अपने चारों ओर के परिवेश को आकर्षक और सुकृतिपूर्ण बनाने की मानव प्रवृत्ति सदैव से रही है। इसी से तीज त्यौहारों, उत्सवों पर अपने उत्साह, आनन्द, उद्घास को सहज स्वाभाविक अनगढ़ रूपों में मंगलमयी भावनाओं से ओत-प्रोत करके अलंकरण के रंग भरता आया है। त्यौहारों, विवाह, जन्म आदि संस्कारों पर सुख-समृद्धि, शकुन एवं मांगल्य के निमित्त विविध आकृति, आलेखन, अल्पना पृहपन आदि सांकेतिक रेखाओं से तरह तरह के आलेखनों का निर्माण लोककला में किया जाता है।

घरती को मातृवत् पूज्य मानकर श्रद्धा पूर्वक उसका अलंकरण करके मानव ने अपनी आत्मीयता का परिचय दिया है। सभी प्रांतों में विभिन्न नामों से घरती को सजाया जाता है। विभिन्न त्यौहारों, उत्सवों, जन्म आदि पर सुन्दर आलेखनों द्वारा फर्श अथवा दीवारों को सजाया जाता है। भारतीय नारियां शरीर के विभिन्न अंगों पर लीला गुदवाकर स्वयं को अलंकृत करती हैं। बताशे, चावल, पत्ते, फूल आदि से भी स्त्रियां अपने शरीर एवं घरों को अलंकृत करती हैं। विचार, परिकल्पना एवं कार्य निष्पत्ति की दृष्टि से इन सांस्कृतिक अलंकरण रूपों में देश और काल की सीमा से विभिन्नताएँ पायी जाती है। किन्तु फिर भी इनका उद्देश्य और महत्त्व किसी अंश तक अत्यधिक साम्य रखता है। ये विविध रूप देश के पृथक भागों में भिन्न-भिन्न नामों से प्रचलित है। महाराष्ट्र में 'रंगोली', गुजरात में 'साथिया', उत्तरप्रदेश में 'सोन रखना' या 'चौक पूना', राजस्थान में माँह्या अर्थात् 'मांडणा', गढ़वाल में 'आपना', बंगाल में 'अल्पना' तथा बिहार में 'पृहपन' के नाम से इन्हें सम्बोधित किया जाता है।

दीपावली के विशेष अवसर पर लक्ष्मी के स्वागत के लिए अमावस्या की रात्रि के अंधकार को दूर करके प्रकाश किया जाता है। संसार का कौनसा अंचल ऐसा है जिसके लोक जीवन में समृद्धि एवं मंगल की कामना न की हो। लक्ष्मी के स्वागतार्थ अपने घरों को लीप पोतकर साफ करके दुल्हिन की तरह सजाकर ज्योतिर्मय लक्ष्मी के आगमन की राह देखते हैं। राजस्थान में दीपावली पर इन मांडणों में 'सोलह दीपक', चौक, पगल्ये, होली पर 'चंग', विवाह पर 'सोलह वाटके', 'पगल्ये', 'कलश', 'कूडे' जैसे मांडणे मांगलिक गृहों के बाहर मंडि जाते हैं। घुली हुई खड़िया से रूई अथवा साधारण कपड़े से ये मांडणे बनाये जाते हैं। इन मांडणों को अंकित करने के लिए किसी प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता नहीं होती है। निरन्तर अभ्यास, लगन एवं उत्साह से वह स्वयं ही इस कार्य में प्रवीण हो जाती हैं।

दीवारों पर गोबर से रखी गई सांझी को स्त्रियां लगन और परिश्रम से बनाती हैं उसको देवी का प्रतीक समझकर दीवारों पर चित्रित किया जाता है। इसमें चन्द्रमा, सूरज, पुष्प, खिलौना, आदि बनाये जाते हैं तथा सांझी के अलंकारों को भी सुन्दर ढंग से बनाकर सजाया जाता है।

इसी प्रकार मेंहड़ी भी एक आलंकारिक लोककला है। शरीर सजा के रूप में मेंहड़ी, बिंदी, महावर, लीला गोदना आदि रूपों में भी सामान्य जीवन में लोककला के अनुराग को स्पष्ट देख सकते हैं। तीज-त्यौहारों, व्रतों, उत्सवों, शादी-विवाह आदि पर स्त्रियां मेंहड़ी के सुन्दर और कलात्मक आलेखनों से अपने हाथ-पैरों को सजाती हैं। मेंहड़ी में चौपड़, पान, कुंज, खजूर, बेल-बूटे, त्रिकोण, सूरज, चन्द्रमा, बिच्छू, मोर, कमल, फूल, पत्तियां आदि अंकित किये जाते हैं जिसका विशेष अर्थ होता है। पर्वों, त्यौहारों, विवाह आदि पर आरती के थालों के सजाने में भी लोककला का प्रदर्शन दिखाई देता है। इन आरती के थालों को सजाने में स्त्रियां रंगों, गोटे, फूलों का प्रयोग करके उसे सजाने में अपनी कलात्मक अभिरुचि और लोककला का सुन्दर प्रदर्शन करती हैं।

मनोविनोदार्थ कला के अन्तर्गत हम उन आकृतियों को सम्मिलित कर सकते हैं जिन्हें व्यक्ति अपने मनोरंजन के लिए बनाता है। मनोरंजन के साथ-साथ इसमें अलंकरण की भावना भी निहित होती है। साथ ही साथ उन वस्तुओं की उपयोगिता भी होती है जैसे स्त्रियां विभिन्न प्रकार की कसीदाकारी बस्तुओं पर करती हैं उनमें अनेक रंगों के फूल-पत्ती, पशु-पक्षी बनाती हैं जिनमें सजीवता का भी आभास होता है। अनेक रंग के कपड़ों के टुकड़ों से सुन्दर वस्त्र या अन्य उपयोग की वस्तुएं बनाना लोककला का ही रूप है। रंग-बिरंगे दुपट्टे बनाना, सलमे सितारों से सुन्दर आलखेन बनाना इसी कला के अन्तर्गत माना गया है। भारत में स्त्रियां पीढा, पंखा, आसन बनाती हैं तथा सन (सण) को रंग भर कर भी उसमें सुन्दर रचनात्मक कार्य करती हैं, इन कार्यों को करने में प्राणी को सुख की अनुभूति होती है। लोककला जीवन में सुख और आनन्द का संचार करने वाली है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि मानव की सहज स्वाभाविक अनुभूति का अनायास उत्पन्न हुआ अनगढ़ रूप ही लोककला है जो प्रेम, उल्लास, आनन्द, मांगल्य तथा धार्मिक भावना का जीता-जागता रूप है जो कला में आकृतियों को रुपान्तरित करके चित्रित किया जाता है किन्तु ये आकृतियां सहज रूप से पहचानी जाती हैं। इन आकृतियों के निर्माण में स्त्रियां बिंदु, अर्धवृत्त एवं वृत्त, त्रिभुज आदि का प्रयोग करती हैं। बिंदु अथवा शून्य को महत्तम स्वीकार किया और उसी के संघटन द्वारा रेखा, आवत, त्रिभुज, वृत्त निर्मित होते हैं। यही कारण है कि हमारे देश की नारियां इसी से बेल-बूटे, पक्षी तथा अन्य ज्यामितीय आकृतियां निर्मित करती हैं। अलंकरण में त्रिभुज, रेखा का सर्वाधिक प्रयोग करती हैं। लोककला में सूक्ष्म प्रवृत्ति की प्रधानता होती है जिससे प्राकृतिक रूपों में लयबद्ध प्रवाह दिखाई देता है लोककला संस्कारों एवं रुढ़ियों पर आधारित होती है। एक बार प्रचलित रूप एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को स्वतः ही हस्तांतरित होता रहता है। नवीनता लाने के भाव से मुक्त हुआ कलाकार उसी प्रकार की

सामग्री और साधनों से इन रूपों को निर्मित करता रहता है।

लोककला की एक प्रमुख विशेषता उसकी सार्वभौमिकता है। लोककला के प्रायः एक समान रूप ही सर्वत्र प्राप्त होते हैं। भौगोलिक परिस्थितियों तथा रुचि भिन्नता के कारण न्यूनाधिक विभिन्नता अवश्य आ जाती है। लोककला हमारी संस्कृति का वह दर्पण है। जिसमें लोक-मानस का प्रतिबिम्ब झांकता दिखाई देता है और जन-जीवन के प्रत्येक पक्ष का निरूपण होता है। लोक कलाकार अपने पूर्वजों से जो कला ग्रहण करता है, उसके लिए किसी प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती है। ग्रहण की गई कला को वह उसी रूप में आने वाली पीढ़ी को प्रदान करता है। बिना किसी साधना के उसमें कुशलता आ जाती है। लोककला में किसी प्रकार के शास्त्रीय नियमों का बंधन नहीं होता। लोककला वास्तव में किसी देश की संस्कृति की रीढ़ है। इसकी जड़े पाताल की गहराई तक फैली हैं। लोककला में मनुष्य की प्रतिभा, कला, भावना, कल्पना, सृजन दृष्टि और रंगों की खुलकर अभिव्यक्ति मिली है। यह जीवन के प्रत्येक पहलुओं में समाई हुई है और प्राचीन और आधुनिकता के बीच की कड़ी है।

सामान्य जन-जीवन से जुड़ी होने के कारण लोककला में प्रयुक्त होने वाली सामग्री भी स्थानीय होती है, जो सहजता से प्राप्त हो जाती है। लोक चित्रों की रचना में सामान्यतः चावल को पानी के साथ पीस कर उसमें हल्दी मिलाकर प्रयुक्त किया जाता है। मांगलिक कार्यों में स्वस्तिक नवग्रह आदि की रचना में रोली, मेंहड़ी, आटा, हल्दी आदि का प्रयोग किया जाता है। गेरु के घोल को गींद में मिलाकर भी प्रयुक्त किया जाता है। पतियों के रस को हरे रंग के लिए प्रयोग में लाया जाता है। ब्रश के स्थान पर सीक अथवा खरपच्ची में रुई लपेट कर प्रयोग किया जाता है। रासायनिक रंगों का प्रयोग कम किया जाता है। भारत के समस्त प्रदेशों व क्षेत्रों में लोककला के मनभावन विविध रूप देखने को मिलते हैं, लेकिन राजस्थान का जन-समाज लोककला से जिस प्रकार जुड़ा है। वह अपने में बहुत ही निराला है। सदियों से रूपरहे राजस्थान में साहित्य, कला व संस्कृति की जो अखिल रसधार प्रवाहित होती रही है। उसी के कारण यह गौरव प्रदेश आज भी अपनी लोकधर्मी परम्परा का अप्रतिम उदाहरण बना हुआ है। यहां की सलौनी मांडना कला, खिलौने, तोरण, ईसर-गणगीर, आदि का लोक प्रचलित रूपोंकन एवं कावड़ और कठपूतली जैसे लोक परम्परा को जीवित रखने वाली लोक-कलाएँ राजस्थान के लोक जीवन की प्रतिबिम्ब हैं।

राजस्थान में अनेक वीर पुरुष हुये हैं उनमें कुछ ऐसे हुये हैं जो जन मानस, लोक-मानस के हृदय में सदा सर्वदा के लिए उतर गये हैं इन्हीं की वीरता की कहानी को लोक कलाकारों ने मिलकर कपड़े के पटों पर अंकित किया है, जिन्हें जन सामान्य देखकर और कथन को सुनकर आत्म विभोर हो उठता है। इसी चित्रांकन परम्परा को 'फड़' कहते हैं। पाबूजी, देव नारायण, रामदला, कृष्णदला, रामदेवजी आदि की फड़े मुख्य हैं। लोक एक ऐसा व्यापक शब्द है जो भू भाग पर प्रसारित समस्त मानव समुदाय के अर्थ में प्रस्तुत किया गया और किसी भी वर्गभेद से परे प्राचीन परम्पराओं की श्रेष्ठ राशि सहित संस्कृति के विकास का द्योतक माना जाता है। लोक शब्द जाति-वर्ग, वर्ण,

धर्म-सम्प्रदाय, नगर-ग्राम्य, शिक्षित-अशिक्षित, धनी-निर्धन और विकसित-अविकसित भेदोपभेदों से ऊपर उठकर समष्टि के लिए व्यवहार में आता है, जहाँ व्यक्तिगत स्वतंत्रता, तार्किकता, अहं और स्वयं का प्रभाव जैसा थोथापन नहीं होता। लोक इसी आधुनिक कहीं जाने वाली बर्गीय दृष्टि का निषेध करता है। लोक संस्कृति और लोक-कला शब्दों के भीतर समासगत 'लोक' शब्द का मूल भारतीय संस्कृति और साहित्य में विद्यमान होते हुए भी उसे प्रायः अंग्रेजी के 'फोक'(Folk) शब्द का रूपान्तर माना जाता है।

राजस्थान के कलाकारों ने लोक जीवन के कलागत विचारों और मान्यताओं से प्रेरित होकर कला-सृजन किया। सृजनमूलक आधुनिक कलाधारा में लोक कला कलाकारों के लिए विचार विषयक भाषाभिव्यक्ति रही है। इस रूप में लोक कला को अनेकार्थी में देखा जा सकता है। लोक कला एक विशेष अर्थ का वाचक शब्द है। इसको अंग्रेजी में (Folk Art) शब्द के रूप में जाना जाता है। 'लोक' का अंग्रेजी प्रतिशब्द फोक (Folk) है। इस 'फोक'(Folk) शब्द को मध्ययुगीन अंग्रेजी में (Folk) कहा जाता था एवं यही फ़ोल्क-सेवशन भाषा में (Volk) नाम से प्रचलित रहा। लोक के दो अर्थ प्रचलित हैं एक तो वह जिससे इहलोक, परलोक अथवा त्रिलोक का ज्ञान होता है। वर्तमान प्रसंग में यह अर्थ अभिप्रेत नहीं। दूसरा अर्थ होता है जनसामान्य। इसी का हिन्दी रूप 'लोक' है। लोक-नगरों और ग्रामों में फैले हुए समूचे जन समुदाय को 'लोक' माना जाता है। हम अपनी दृष्टि से यह भी कह सकते हैं 'लोक मनुष्य' समाज का वह वर्ग है जो अभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता, पाण्डित्य की चेतना और पाण्डित्य के अहंकार से शून्य है और जो एक परम्परा के प्रवाह में जीवित रहता है। ऐसे लोक की अभिव्यक्ति में जो तत्व मिलते हैं वे लोक तत्व कहलाते हैं।

लोककला के इन विविध रूपों का अध्ययन स्पष्ट कर देता है कि लोक कला राष्ट्रीय परम्परा को एक सूत्र में बांधती है एवं सर्वजन सुखाय की भावना को अपने में निहित किये हुए है। यह सहज व सरल कला है। लोककला हृदय की नैसर्गिक छवि प्रदर्शित करती है। यह स्वयं में पूर्ण कला है। यह कला जादुई भावना का अनुसरण भी करती है। इसके रूपों में परिवर्तन यदा कदा ही दिखाई देता है। भारत में लोक कलाओं को प्रमुख स्थान प्रदान करने में उत्सवों, पर्वों व ग्रामीण अंचलों में व्याप्त ईश्वर के प्रति अगाध आस्था है।

लोक कला की सजीवता ही उसकी रोचकता है, जो जीवन में माधुर्य व उत्साह का संचार कर देती है। लोककला का प्रत्येक प्रकार जनसाधारण के मानस पटल पर अमिट छाप बना हुआ है। लोककलाएँ मनुष्य की संस्कार सम्पन्नता बढ़ाती हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि जीवन जितना आवश्यक है, उतनी ही आवश्यक है लोक कलाएँ। लोक कला की चाहे कोई भी विधा हो उसमें कालजयी रसात्मकता है, जो इसे लोक-संवेदनशीलता से बांधती है। लोक कलाएँ लोकाश्रय से जीवित रहती हैं। इन सांस्कृतिक परम्पराओं को प्रदूषित व विलुप्त होने से बचाने हेतु लोक कला शैलियों का प्रस्तुतिकरण व प्रचार-प्रसार करना सामायिक आवश्यकता है।

भारत सरकार इन कलाओं के संरक्षण हेतु विभिन्न वित्तीय योजनाएं चला रही है, जिनके अन्तर्गत परम्परागत कलाओं को पुरस्कृत किया जाता है। इनमें प्रमुख हैं विभिन्न क्षेत्रों के युवाओं को छात्रवृत्तियाँ, साहित्यिक व रूपक में कनिष्ठ व बरिष्ठ छात्रवृत्तियाँ, सुविख्यात कलाकारों के सेवानुचित अध्येतावृत्तियाँ, कुमार गंधर्व फेलोशिप इत्यादि।

संदर्भग्रंथ सूची-

1. विद्यानिवास मिश्र, लोकदृष्टि : पूर्णता की आकांक्षा, पृ. 17-18
2. त्रिभुवननाथ शुक्ल, लोक संस्कृति की अवधारणा, पृ. 26
3. चमन किरन : कला के अंश, अलंकार, भाग-38, मेरठ, पृ. 122-123
4. आर. ए. अग्रवाल; भारतीय चित्रकला का विवेचन, मेरठ, 1988, पृ. 219
5. वाचस्पति गैरोला; भारतीय चित्रकला, इलाहाबाद, 1963, पृ. 246
6. आर. ए. अग्रवाल; भारतीय चित्रकला का विवेचन, मेरठ, 1988, पृ. 221-222
7. राजेश कुमार व्यास : सांस्कृतिक पर्यटन, जयपुर, 2009, पृ. 1-2
8. वाचस्पति गैरोला : भारतीय चित्रकला, दिल्ली, 1990, पृ. 249
9. डॉ सुधा सरन, बरेली, कला सिद्धान्त और परम्परा, लेखक-सरन बिहारी सक्सेना, पृ. सं. 67
10. विरेन्द्र सिंह : भारतीय कला एवं संस्कृति, मेरठ, 2008, पृ. 235
11. विरेन्द्र सिंह : वही, पृ. 235
12. चमन किरन : कला के अंश, अलंकार, भाग-38, मेरठ, पृ. 225-226
13. जयसिंह नीरज एवं भगवती लाल शर्मा : राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, जयपुर, 2008, पृ. 97
14. जयसिंह नीरज एवं भगवती लाल शर्मा : वही, पृ. 98
15. प्रतियोगिता दर्पण (अतिरिक्तांक) भारतीय कला एवं संस्कृति, आगरा, पृ. 109
16. प्रेमचन्द गोस्वामी : राजस्थान संस्कृति, कला एवं साहित्य, जयपुर, 2008, पृ. 116
17. कहानी मानावत : साँझी कला, जयपुर, 2007, पृ. 43
18. र.वि. साखलकर : कला कोष, जयपुर, 1998, पृ. 216
19. चमन किरन : कला के अंश, अलंकार, भाग-38, मेरठ, पृ. 128
20. चमन किरन : कला के अंश, अलंकार, भाग-38, मेरठ, पृ. 130
21. चमन किरन : वही, पृ. 129-130
22. धनराज दत्तरी एवं राजेन्द्र साईवाल : राजस्थानी संस्कृति, संदर्भ और स्वरूप, जयपुर, 2005, पृ. 13-14
23. हुक्कम चन्द जैन एवं नारायण माली : राजस्थान इतिहास एवं संस्कृति एनसाइक्लपीडिया, जयपुर, 2008, पृ. 178
24. एच. एन. मिश्र; वनास की चित्रकला, वाराणसी, 2002, पृ. 207

ग्रामीण विकास एवं महिला सशक्तिकरण

रेनू बाला मीना

शोधार्थी, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा



shodhshree@gmail.com

भारत की स्वतन्त्रता के विगत 65 वर्षों से हम इस बात पर गर्व कर रहे हैं कि अनेक विकासशील देशों के विपरीत भारत में लोकतन्त्र सफल रहा है। संवैधानिक एवं वैधानिक स्तर पर भारतीय महिलाएँ सशक्त हैं। यह एक सकारात्मक पक्ष है, किन्तु वैधानिक सशक्तिकरण के बावजूद सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक - सभी क्षेत्रों में महिलायें सशक्तिकृत नहीं हो पायी हैं। भारतीय राज्य की भूमिका महिलाओं के कल्याणकारी दृष्टिकोण की रही है। गरीबी उन्मूलन का क्षेत्र हो अथवा उनके समान अवसर के माध्यम से शक्ति प्रदान करना रहा है। महिला सशक्तिकरण की दिशा में निश्चित ही महत्वपूर्ण प्रयास हैं। महिला सशक्तिकरण विधिक सुरक्षा नहीं, बरन प्रदत्त अधिकारों की प्राप्ति के लिए सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैयक्तिक, सामूहिक, सभी क्षेत्रों में सभी स्तरों, अवसरों की उपलब्धता भी है।

दुनिया में ऐसा कोई भी देश नहीं है जहां महिलाओं को हाशिए पर रखकर आर्थिक विकास संभव हुआ हो। महिलाओं को विकास की मुख्यधारा से जोड़े बिना किसी समाज, राज्य एवं देश के आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। आज अनवरत संघर्ष के बूते देश में महिलाओं ने सत्ता के सर्वोच्च शिखर तक चढ़कर हर क्षेत्र में स्वयं को पुरुषों के समकक्ष साबित किया है। जहां शहरों में महिलाएं बुद्धि के हर क्षेत्र में स्वयं को पुरुषों के बराबर साबित कर रही हैं वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में भी महिलाओं में साक्षरता बढ़ी है और वे स्वरोजगार के जरिए आत्मनिर्भरता की ओर अपने कदम बढ़ा रही हैं। वे गांवों में पंचायत स्तर पर भी नेतृत्व प्रदान कर रही हैं। महिलाओं की आर्थिक स्थिति सुधरी है। वे नए जोश के साथ रसोईघर की दहलीज लांघकर सामाजिक दायित्व निभाती दिखाई पड़ रही हैं। अपने स्वप्नों को साकार करने के लिए महिलाओं ने गरीबी और सामाजिक बंधनों को भी तोड़ा है। वे सुधार जाहिर तौर पर महिलाओं में चेतना के प्रतीक हैं।

आज के आर्थिक युग में महिलाएं अधिक स्वावलंबी हुई हैं। उनमें आत्मविश्वास और मनोबल भी बढ़ा है। अपने अधिकारों के प्रति वे सचेत हुई हैं मगर महिलाओं में आर्थिक क्रान्ति की लहर अधिकतर शहरों में ही देखने को मिलती है। यह नहीं कि ग्रामीण महिला कामकाजी नहीं हैं परन्तु फिर भी वे आत्मनिर्भर नहीं हैं। इसका सबसे बड़ा कारण है उनका असंगठित होना। ग्रामीण महिला अधिकतर असंगठित क्षेत्र में कार्य करती हैं। इसलिए उन्हें बहुत मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। असुरक्षात्मक माहौल में कठोर श्रम के बावजूद उन्हें बहुत कम मजदूरी मिलती है और उन्हें दूसरी कई सुविधाओं से वंचित रखा जाता है।

उपलब्धियों और विकास एवं उत्थान के लंबे सफर के बावजूद अभी भी लाखों-करोड़ों महिलाएं अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत हैं। इनमें ग्रामीण महिलाओं की संख्या ज्यादा है चूंकि उनमें अभी साक्षरता की कमी है। केंद्र और राज्य सरकारों ने ऐसी महिलाओं को ही लक्षित कर कई योजनाएं बनाई हैं। जहां गर्भवती महिलाओं के लिए गोद भराई योजना, पूरक पोषण आहार योजना, जननी सुरक्षा योजना जैसी कई योजनाएं

हैं वहीं लाडली और लक्ष्मी योजना लड़कियों को शिक्षित और आत्मनिर्भर जीवन देने की सार्थक कोशिश है। गांव की प्रतिभाशाली बेटों की उच्च शिक्षा के लिए गांव की बेटों योजना और गरीब बालिकाओं के लिए साइकिल प्रदाय योजना अन्य महत्वाकांक्षी योजनाओं में शामिल हैं। राष्ट्रीय बालनीति के तहत भी लगभग 4600 परियोजनाएं देशभर में चल रही हैं।

भारतीय समाज में प्राचीनकाल से ही महिलाओं का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। नारी ने सदैव ही पुरुष के साथ सहधर्मिणी का रूप निभाया है। इसके लिए सबसे अच्छा उदाहरण आचार्य मंडन मिश्र की पत्नी शारदा देवी का है, जिन्होंने शंकराचार्य से शास्त्रार्थ किया था। इसमें न केवल उन्होंने पति की सहधर्मिता निभाई थी, बल्कि ज्ञान के क्षेत्र में भी अपनी योग्यता प्रदर्शित की थी। इस प्रकार से मैत्रेयी, गार्गी, सीता, अनुसूया, सावित्री, द्रौपदी आदि विदुषी महिलाओं के नामों से हमारा इतिहास भरा हुआ है। मध्यकालीन भारत में अहिल्याबाई, रानी दुर्गावती, रानी लक्ष्मीबाई ने राजनीतिक, प्रशासनिक और सामाजिक क्षेत्र में अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आधुनिक काल में राजनीति के क्षेत्र में सरोजनी नायडू, विजय लक्ष्मी पंडित, सुचेता कृपलानी और इंदिरा गांधी भी इसी शृंखला की एक कड़ी हैं।

वर्तमान में नारियां जिन पदों पर कार्य कर रही हैं, उनमें वे पुरुषों की अपेक्षा कम बुद्धिमत्ता का परिचय नहीं दे रही हैं। जहां सेवाभाव इनकी मूल धरोहर है वहीं वे शिक्षा, व्यवसाय, प्रशासन, सुरक्षा, जैसे क्षेत्रों में कार्यरत हैं। वे पुलिस अधिकारी, पायलट, जलयोत संचालक आदि के दायित्वों को संभाल रही हैं। महिलाओं ने अनवरत संघर्ष करके सत्ता के सर्वोच्च शिखर तक चढ़कर हर क्षेत्र में अपने को पुरुषों के समकक्ष साबित किया है। सच यह है कि जब तक महिलाएं शिक्षित नहीं होंगी, उनमें जागरूकता नहीं आएगी, उन्हें परम्परागत कार्यों से मुक्ति नहीं मिलेगी, उन्हें समाज में अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन, अपनी भूमिका अदा करने के लिए स्वतंत्रता नहीं होगी तब तक वे समाज व देश के विकास में अपना योगदान नहीं दे सकती। माना कि कुछ वर्षों से ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता बढ़ी है पर जब तक उनके हाथ में आय नहीं होगी और इसके लिए उन्हें रोजगार सम्पन्न नहीं बनाया जाएगा तब तक उनका जीवन जैसा का तैसा ही रहेगा।

स्वरोजगार के मामले में वे अभी पुरुष से बहुत पीछे हैं। उनके मानस पटल पर स्वरोजगार और उद्यमिता की लकड़ें अभी खिंच नहीं पाई हैं। प्रश्न यह है कि आखिर महिलाएं विशेषतः से ग्रामीण महिलाएं उद्यमिता के क्षेत्र में आगे क्यों नहीं आती हैं। उनके पास वर्ष के अधिकांश समय चूल्हे-चाँके के सिवाय कोई काम नहीं होता है। फिर वे अपने समय का सदुपयोग करने की बात क्यों नहीं सोचतीं। क्या उनमें पैसा कमाने की ललक नहीं है। वास्तव में सामाजिक-आर्थिक कारक व्यक्ति की उद्यमिता भावना को बहुत अधिक प्रभावित करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने समाज के मूल्यों व परम्पराओं की परिधि में जीता है। ये मूल्य और परम्पराएं उसके जीवन में बहुत गहराई तक समाए रहते हैं। हमारे मूल्य, हमारी परम्पराएं महिलाओं को बचपन से

ही भेदभाव का शिकार बना देती हैं। हर मामलों में लड़कों के सामने लड़कियों की उपेक्षा की जाती है। चाहे खानपान का मामला हो या फिर शान-शौकत का या पढ़ाई-लिखाई का या बीमार होने में दवा-दारु का हर वक्त, हर जगह महिलाओं को द्रोणम दर्जे का नागरिक माना जाता है।

भारत सरकार ने ग्रामीण विकास में महिला रोजगार की भागीदारी बढ़ाने के लिए समय-समय पर नीतियों का निर्माण किया है। महिलाओं और बच्चों के समग्र विकास को वांछित गति प्रदान करने के लिए 1985 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अधीन महिला और बाल विकास विभाग गठित किया गया है। 2006 से इसे स्वतंत्र मंत्रालय का दर्जा दे दिया गया है। महिला और बाल विकास मंत्रालय महिलाओं के विकास की देखरेख करने वाली प्रमुख एजेंसी के रूप में योजनाएं, नीतियां और कार्यक्रम तैयार करता है, महिलाओं के बारे में कानून बनाता है और उनमें संशोधन करता है और महिलाओं के विकास के क्षेत्र में काम करने वाले सरकारी और गैर-सरकारी दोनों तरह के संगठनों के प्रयासों का दिशा-निर्देशन और समन्वय करता है। इसके अलावा विभाग महिलाओं के लिए कुछ अभिनव कार्यक्रमों को भी लागू करता है। ये कार्यक्रम प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण, रोजगार और आमदनी बढ़ाने, कल्याण और सहायक सेवाओं तथा जागरूकता पैदा करने और महिलाओं में चेतना जगाने के क्षेत्र में होते हैं। इन सब कार्यक्रमों का अंतिम उद्देश्य महिलाओं को आत्मनिर्भर और सक्षम बनाना है। भारत में ग्रामीण विकास, रोजगार संवर्द्धन व विभिन्न क्षेत्रों की समस्याओं को हल करने के लिए तथा महिला के विकास के लिए कई योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है, जो निम्नलिखित हैं-

समेकित बाल परियोजना, पूरक पोषण आहार योजना, गोद भराई योजना, मातृ एवं शिशु रक्षा कार्ड, अति गरीब महिलाओं को प्रसव-पूर्व सहायता राशि, जननी सुरक्षा योजना, प्रसव परिवहन एवं उपचार योजना, प्रसव सहयोगी योजना, राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम, अन्नप्राशन योजना, जन्म दिवस योजना, लाडली लक्ष्मी योजना, किशोरी बालिका दिवस योजना, प्राथमिक शाला में अध्ययनरत अनुसूचित जाति की बालिकाओं को गणवेश, गांव की बेटों योजना, साइकिल प्रदाय योजना, कन्या साक्षरता प्रोत्साहन योजना, महिला खेलकूद प्रतियोगिता, मुख्यमंत्री कन्यादान योजना, अनुसूचित जाति कन्या विवाह के लिए सौभाग्यवती योजना, समस्याग्रस्त महिलाओं की सहायता, महिला जागृति शिविर, विपत्तिग्रस्त महिलाओं को कानूनी सहायता, विपदाग्रस्त महिलाओं की पुनःस्थापना के लिए प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना, उषा किरण योजना, सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, स्वाधार योजना, इन्दिरा आवास योजना, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, कृत्तिन अनुदान, प्रधानमंत्री रोजगार योजना, दीनदयाल रोजगार योजना, महिला डेवरी परियोजना, रानी दुर्गावती अनुसूचित जाति/जनजाति स्वरोजगार योजना, राष्ट्रीय परिवार सहायता

योजना, दीनदयाल अंत्योदय उपचार आदि योजनाएं महिलाओं के विकास को ध्यान में रखकर चलाई जा रही है ताकि इससे असहाय कमजोर वर्ग की महिलाएं भी अपना विकास कर सकें तथा पिछड़ी हुई अवस्था से उभर सकें तथा समाज में तेजी से बढ़ रहे अपराध, भ्रष्टाचार, अराजकता को रोकने के लिए इन महिलाओं की अहम भूमिका हो सकती है। अनियमित कार्य को करने वाले अथवा बढ़ावा देने वाले चाहे जन प्रतिनिधि हों, गांव के सम्भ्रान्त लोग हों अथवा सरकारी कर्मचारी और अधिकारी हों, उनके द्वारा पंचायतों के माध्यम से इस प्रकार के लोगों के प्रति पूरी पंचायत का ध्यान आवृष्ट कराया जा सकता है तथा जनतांत्रिक तरीके से विरोध भी प्रकट किया जा सकता है।

किसी भी देश की सामाजिक, आर्थिक प्रगति को जानने के लिए वहां की महिलाओं की स्थिति एवं स्तर का आकलन करना अति आवश्यक है। समाज में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। महिलाओं को विकास की मुख्यधारा में जोड़े बिना किसी समाज, राज्य एवं देश के आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसकी 72 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। यह जनसंख्या कृषि, कुटीर उद्योग, हथकरघा जैसे कार्यों से जुड़ी हुई है। देश के आर्थिक विकास में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। कृषि क्षेत्र में महिला श्रमिकों द्वारा किए जाने वाले कार्य बुवाई, निदाई-गुदाई, चारे की कटाई, अनाज निकलवाने आदि तक सीमित हैं। इसके अतिरिक्त महिलाएं मुर्गापालन, पशुपालन और मधुमक्खी पालन के कार्य भी करती हैं।

इस प्रकार पुरुषों और महिलाओं का प्रतिशत लगभग 52 और 48 है। इसके साथ-साथ यदि देश की अर्थव्यवस्था में महिलाओं के योगदान का अध्ययन करें तो पता चलता है कि यह इनके अनुपात से बहुत ही कम होता है। देश में कुल महिला श्रमबल का प्रतिशत मात्र 22.2 है। ग्रामीण क्षेत्रों में अपना योगदान बढ़ाना होगा और इसके लिए पंचायतों की इन नबनिर्वाचित महिला जन-प्रतिनिधियों को मार्गदर्शन देना होगा। आर्थिक विकास की अनेकानेक योजनाओं और कार्यक्रमों से उन्हें सीधे-सीधे जोड़ना होगा।

ग्रामीण विकास एवं महिला सशक्तिकरण में आने वाली बाधाओं का पता लगाकर उनके निराकरण के उपाय ढूंढने होंगे। पंचायतों के माध्यम से राजनीति में प्रवेश कर चुकी इन महिलाओं से जहां एक कुशल नेतृत्व की आशा की जाती है, वहीं राजनीति को प्रदूषण से मुक्त कराने की भी प्रबल अपेक्षा है। पंचायतों के निर्वाचन के बाद भी महिलाएं पहले की तरह मजदूरी व अन्य कार्य करती हैं, लेकिन कुछ मामलों में महिलाओं के आर्थिक स्तर में सुधार आया है। यह सुधार महिलाओं में चेतना का प्रतीक है। कुछ शिक्षित महिलाओं ने सिलाई, ट्यूशन, कल्याण कार्यक्रमों आदि में भागीदारी जैसे काम करने भी शुरू किये हैं। इसी प्रकार विकास की ग्रामीण प्रक्रिया को देखें तो ग्रामीण विद्यालयों के उचित संचालन, स्वास्थ्य केन्द्र, दृश्य केन्द्र, बागवानी, स्वच्छता-सफाई, पीने के पानी की व्यवस्था, सड़कों की रोशनी व

दूसरे कल्याणकारी कार्यक्रमों का पंचायत की चुनी हुई महिलाएं सक्रियता से संचालन व निरीक्षण कर सकती हैं। इसके अतिरिक्त स्थानीय संस्थाओं में अलग-अलग स्तर पर कार्य करने का उन्हें अवसर मिलेगा जिससे विकास की सभी योजनाओं में सभी वर्गों के लोगों के साथ मिलकर तथा विकास के कार्यक्रमों में जुड़कर कार्य करने तथा निर्णय लेने का अवसर व अनुभव प्राप्त होगा, इससे महिलाओं में राजनैतिक भागीदारी की इच्छाशक्ति का विकास होगा और उनके नेतृत्व के उभरने का रास्ता खुल जाएगा। अतः ग्रामीण विकास एवं महिला सशक्तिकरण की व्याख्या करने के लिए आमतौर पर जो शब्दावली उपयोग की जाती है उसमें शिक्षा, संसाधनों पर नियंत्रण और उनकी सुलभता, आत्मनिर्भरता, सम्मान, अधिकारों के लिए संघर्ष, शक्ति, स्वतंत्रता, स्वायत्तता, अपनी पसंद अथवा निर्णय लेने की क्षमता के संदर्भ में महिला की शक्ति जैसे शब्द सम्मिलित किए जा सकते हैं।

संदर्भग्रंथ सूची-

1. अंतारी, एम.ए., "महिला और मानवाधिकार", ज्योति प्रकाशन, जयपुर, 2000
2. बजवा, जी.एस., "भारत में मानवाधिकार, क्रियान्वयन तथा उल्लंघन", अनमोल पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1955
3. गोयल, प्रीतिप्रभा, "भारतीय नारी विकास की ओर", राजस्थानी ग्रन्थसागर, जोधपुर, 2009
4. जैन, प्रतिभा, शर्मा संगीता, "भारतीय स्त्री सांस्कृतिक संदर्भ", रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1998
5. कल्पना, रघुवंशी, "रुलर वूमन इन राजस्थान", कंचनजंगा पब्लिशर्स (जयपुर) 1983
6. कुमार विपिन, "वैश्वीकरण एवं महिला सशक्तिकरण", रीगल पब्लिकेशन्स, 2009
7. कौशिक, आशा, "महिला सशक्तिकरण-भूमण्डलीकरण के दौर में चुनौतियां", एक और अन्तरीप", जयपुर, 2002
8. मौर्य, शैलेन्द्र, "महिला राजनैतिक नेतृत्व एवं महिला विकास", पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2011
9. शर्मा, रोमी, "भारतीय महिलाएं : नई दिशाएं", प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
10. सिंह, जनमेय, "आधुनिकता एवं नारी सशक्तिकरण", रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2010

‘लेखनी’ की पाण्डुलिपि लेखन में महत्वपूर्ण भूमिका

राजकुमार जाँगिड़

शोधार्थी, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर



shodhshree@gmail.com

पाण्डुलिपि लेखन में लेखनी एक अहम् हिस्सा रखती है। जैसे आजकल लिखने में पेन और डॉटपैन का उपयोग होता है वैसे पहिले होल्डर (कलम) पेन्सिल आदि का उपयोग होता था। उससे पूर्व बांस बेंत आदि के अण्ट से लिखा जाता था। आजकल इसका प्रचलन अत्यधिक अल्पमात्रा में रह गया है। पर हस्तलिखित पाण्डुलिपियों अथवा ग्रंथों को लिखने में आज भी कलम का उपयोग होता है। कर्नाटक, सिंहल, ब्रह्म आदि देशों में जहाँ ताड़पत्र पर काटकर पुस्तक लिखी जाती है वहाँ लिखने के लिए नॉकदार सुइयों की जरूरत होती है। कागजों पर यंत्र व लाइने बनाने के लिए जुजकल का प्रयोग किया जाता था। जो लोहे के चिमटे के आकार की होती थी। आजकल के होल्डर की नीच इत्ती का विकसित रूप प्रतीत होती है। कलमों के घिस जाने पर उसे चाकू से छील कर पतला कर लिया जाता था, तथा मध्यभाग में एक खड़ा चीरा अथवा कट लगा दिया जाता था। जिससे आवश्यकतानुसार स्वाही नीचे उतरती रहती थी।

‘लेखनी’ एक सामान्य शब्द है, जिसका प्रयोग तूलिका, शलाका, वर्णवर्तिका (दशकुमार चरित के अनुसार), ‘वर्णिका’ (कोशों के) और ‘वर्णक’ (ललित विस्तार के अनुसार) सभी के लिए होता है। पत्थर और धातु पर अक्षर उत्कीर्ण करने वाली शलाका भी लेखनी है। चित्रांकन करने वाली कूची (तूलिका) भी लेखनी है, अतः लेखनी का अर्थ बहुत व्यापक है। ब्रह्मर ने बताया है कि-महाकाव्यों में पहले से ही पाया जाता है कि ‘लेखनी’ जो ‘लिखने के लिए एक साधन’ का एक सामान्य नाम है। जिसमें ‘लेखनी, ब्रश, ईख (सरकण्डा) और लकड़ी की कलम शामिल है।

नरसल या तेजे की लेखनी का प्रयोग विशेष रहा। इसे ‘कलम’ कहा जाता है। इसके लिए भारतीय नाम ‘इषीका’ या ‘इषिका’ जिसका शब्दार्थ है नरसल (Reed)।

डॉ. गौरीशंकर हीराचंद ओझाजी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक में कलम शीर्षक से यह सूचना दी है कि- विद्यार्थी लोग प्राचीनकाल से ही लकड़ी के पाटों पर लकड़ी की गोल तीखे मुख की कलम (वर्णक) से लिखते चले आ रहे हैं। स्याही से पुस्तकें लिखने के लिए नड (बरु) या बांस की कलमें (लेखनी) काम में आती हैं। अजंता की गुफाओं में जो रंगों से लेख लिखे गये हैं वे महीन बालों की कलमों (वर्तिका) से लिखे गये होंगे। दक्षिणी शैली के ताडपत्रों के अक्षर कुचरने के लिए लोहे की तीखे गोलमुख की कलम (शलाका) अब तक काम में आती है। कोई-कोई ज्योतिषी जन्मपत्र और वर्षफल के खरड़ों के लम्बे हाशिये तथा आड़ी तकरी बनाने में लोहे की कलम को अब तक काम में लाते हैं, जिसका ऊपर का भाग गोल और नीचे की स्याही के परकार जैसा होता है।

पाश्चात्य जगत् में एक ओर तो पत्थरों और शिलाओं में उत्कीर्ण करने के लिए छैनी (वेपेमस) को आवश्यक माना गया है, वहीं लेखनी के लिए पंख (पर या पक्ष), नरसल या धातु शलाका का भी उल्लेख मिलता है। पाश्चात्य जगत् में पंख की लेखनी का प्राचीनतम उल्लेख 7वीं शती ई. में मिलता है।

‘कोडेवस’ आधुनिक पुस्तक का पूर्वज है। यह एक प्रकार से दो या अधिक काष्ठपाट्टियों से बनती थी। ये

काष्ठपट्टियों एक छोर पर छेदों में से लीह-छहों से जुड़ी रहती थी। इन पर मोम बिछा रहता था। इस पर एक धातु शलाका से खुरचकर या कुरेदकर अक्षर लिखे जाते थे। किसी ने एक नुकीली चीज से कुरेद कर अथवा खुरचकर लिखा था कि एक नुकीले औजार से जिसके दूसरे सिरे पर एक सपाट पलटे जैसा है, जो मिटाने के काम आता है, बिल्कुल वैसा ही, आजकल की आधुनिक पेंसिल के पीछे होता है।¹⁰

लेखनी के संदर्भ में प्रचलित श्लोक “भारतीय जैन श्रमण संस्कृति की लेखन कला” में दर्शित है:-

ब्राह्मण को सफेद, क्षत्रियों को लाल, वैश्यों को पीली एवं असुरों (शूद्रों) को काले रंग की लेखनी से कार्य करना चाहिए। सफेद, सुख लाल गरीबी का पीला पवित्र लक्ष्मी का और काला रंग विनाश का प्रतीक होता है। चित्र के अग्र भाग वाली लेखनी पुत्र का निम्न मुख वाली धनका, बायें मुख वाली विद्या का नाश करती है। इसलिए दक्षिण मुख वाली लेखनी में लिखना चाहिए। अग्र मुख वाली, आयु का, मध्य वाली धन का पीछे वाली ग्रन्थि सभी का नाश करती है। अतः बिना गांठ वाली लेखनी से लिखना चाहिए। नव अंगुल वाली लेखनी श्रेष्ठ है। यदि आठ से अधिक हो तो भी श्रेष्ठ है। लेखनी से लिखने से हमेशा धन धान्य की प्राप्ति होती है।¹

अष्ट अंगुल प्रमाण वाली लेखनी सुखदायक है। विकार भावना से युक्त और कर्मों की अधिकता से अधिक फल प्राप्त होता है। ग्रन्थ का प्रारम्भ आयु का मध्य ग्रन्थी का और धन का, अन्त सुख का इसलिए गांठ रहित लेखनी शुभ का है।¹

दोस्ती में जब दरार आती है तो वह बुद्धि का विनाश करती है। लेखनी के बीच की गांठ धन का विनाश करती है।¹ रंग का संबंध वर्ण से जोड़कर लेखनी को भी चातुर्वर्ण्य व्यवस्था का माना गया है-

- सफेद वर्ण की लेखनी ब्राह्मणी - इसका फल है सुख।
- लाल वर्ण की क्षत्राणी - इसका फल है दरिद्रता।
- पीले वर्ण की वैश्ययी - इसका फल है पुष्कल धन।
- श्यामवर्ण की आसुरी - इसका फल है धन-नाश।

किन्तु इस समस्त शुभ-अशुभ के अंतरंग में यथार्थ अर्थ यही है कि निर्दोष लेखनी ही सर्वोत्तम होती है, उसी से लेखक को लेखन करना उचित है। इनकी यह पद्धति (परीक्षा पद्धति) ताड़पत्रीय युग की पुस्तकों से चली आ रही है। रत्न परीक्षा में रत्नों के श्वेत, पीत, लाल और काले रंग ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्व और शूद्र की भांति लेखनी के भी वर्ण समझना चाहिए। इसका किस प्रकार उपयोग करना, इसका पुराना विधान तत्कालीन विश्वास व प्रथाओं पर प्रकाश डालता है।¹⁰

संदर्भग्रंथ सूची-

1. जैन, पी.सी.; ए डिस्कप्टिव कैटेलाग ऑफ मैनुस्क्रिप्ट्स इन द इण्डियन ग्रंथ भंडार, नागौर, जयपुर, 1981, पृ. 8-9
2. Buhler, G. and Debiprasad Chattopadhyaya; *Indian Palaeography, Indian Studies past & present, Calcutta, 1962, P.147*
3. सत्येन्द्र; पाण्डुलिपि विज्ञान, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2007, पृ. 56
4. ओझा, गौरीशंकर हीराचंद; भारतीय प्राचीन लिपिमाला, शब्द महिमा प्रकाशन, जयपुर, 1996, पृ. 157
5. *Encyclopedia Americana, (vol. 18), P.241*
6. सत्येन्द्र; पाण्डुलिपि विज्ञान, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2007, पृ. 57
7. मुनिश्री पुण्यविजयजी; भारतीय जैन श्रमण संस्कृति अने लेखनकला, साराभाई मणिलाल नवाच, अहमदाबाद, पृ. 34
8. यह श्लोक स्व. चिम्नलाल द. दलाल द्वारा सम्पादित 'लेखपद्धति' में भी आया है। (सत्येन्द्र; पाण्डुलिपि विज्ञान, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2007, पृ. 55)
9. मुनिश्री पुण्यविजयजी; भारतीय जैन श्रमण संस्कृति अने लेखनकला, साराभाई मणिलाल नवाच, अहमदाबाद, पृ. 34
10. जैन, पी.सी.; इण्डियन ग्रंथ भंडार नागौर एण्ड जयपुर, जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर 1981, पृ. 9

भूमि अनुदान व्यवस्था में सक्रिय वणिक् वर्ग तथा उभरते व्यावसायिक नगरीय केन्द्रों का सर्वेक्षण: आभिलेखिक साक्ष्यों (भूमिदान पत्र) के विशेष संदर्भ में

डॉ. रजनी शर्मा

व्याख्याता, श्री स्तनलाल कंवर लाल पाटनी
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किरानमगढ़



shodhshree@gmail.com

प्राचीन भारत की आर्थिक व्यवस्था को जानने के स्रोत के रूप में भूमिदान पत्र प्रामाणिक स्रोत माने जाते हैं, जिनसे आर्थिक इतिहास के कई महत्वपूर्ण तथ्यों को प्रकाश में लाया गया। भूमिदान के धार्मिक पुण्यकारी कृत्य की प्रक्रिया में दाता के रूप में शासक वर्ग ही नहीं अपितु सामान्य जन तथा समाज के विभिन्न आर्थिक रूप से सम्पन्न वर्ग भी भागीदार रहे हैं।

भूमि अनुदान व्यवस्था को सुदृढ़ रूप प्रदान किये जाने में व्यापारियों की भी सक्रिय भूमिका रही है जिसका संदर्भ हमें विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त भूमि दान पत्रों में प्राप्त होता है।

उत्तरी पश्चिमी भातर (पंजाब) से प्राप्त जयचन्द्र के समय के बैजनाथ प्रस्तर अभिलेख (वि.सं. 1261, 1204 ई. शती) में दो व्यापारी भाईयों मन्वूक व अहूक द्वारा एक तेल मशीन व 4 हल नवग्राम की भूमि मन्दिर को दान में दिये जाने का वर्णन प्राप्त होता है।¹

इसी क्षेत्र के पेहेवा अभिलेख (वि.सं. 939, 882-83 ई. शती) में अश्व व्यापारियों का उल्लेख है। यह व्यापारी कर्नाटक, मध्यप्रदेश आदि क्षेत्रों से सम्बन्ध रखते थे, ये क्षेत्र चैनाब व रस्सी के बीच स्थित थे। इन व्यापारियों द्वारा अश्व व्यापार करने के अलावा मन्दिरों आदि को अनुदान दिया गया। पेहेवा अश्व व्यापार का मुख्य केन्द्र था।²

मध्य उत्तरी भारत में उत्तर प्रदेश क्षेत्र से इसमें आहड़ प्रस्तर अभिलेख (864-904 ई. शती) में 10 दस्तावेज हैं, जिसमें समाज के व्यावसायिक वर्गों द्वारा अनेक दान किये जाने का वर्णन है। दस्तावेज संख्या 2 में वणिक् जाति का उल्लेख है। यह जाति भीनमाल से प्रव्रजित थी, इस जाति द्वारा एक दुकान कंचन श्रीदेवी के मंदिर के निमित्त खरीदकर इसकी आय को मन्दिर के दैनिक व्यय हेतु व्यवस्थित कर दिया गया।³

गुर्जर प्रतिहार कालीन सियोदोनी प्रस्तर अभिलेख (वि.सं. 960 से 1025 तथा 903-04 से 968-69 ई. शती) भी सामूहिक लोक दस्तावेज है। इसमें 27 दस्तावेजों का वर्णन है। इसमें वर्णित दान विष्णु मंदिर को समर्पित किये गये थे।

दस्तावेज संख्या 1 में व्यापारी चाण्डुक द्वारा नारायण भट्टारक मन्दिर बनवाये जाने का उल्लेख है। इस मन्दिर को स्थानीय लोगों द्वारा 200 225 हस्त भूखण्ड दान में दिया गया।

दस्तावेज संख्या 2 में विष्णु भट्टारक मन्दिर को पंचियकाद्रम्म मुद्रा दिये जाने का उल्लेख है।

दस्तावेज संख्या 3 में तीन व्यापारियों द्वारा विष्णु भट्टारक मन्दिर के निमित्त एक आवास दिये जाने का उल्लेख है।

दस्तावेज संख्या 5 में चीनी उत्रालने वालों की श्रेणी ने मन्दिर को दैनिक रूप से वराहाकाया किशोपक मुद्रा अदा करने की व्यवस्था करी।

दस्तावेज संख्या 7 में व्यापारी चाण्डुक द्वारा एक दुकान मंदिर के निमित्त दान करी गयी।

दस्तावेज संख्या 8 में पान विक्रेता श्रेणी ने भी एक दुकान मन्दिर के निमित्त दान की।

दस्तावेज संख्या 12 में व्यापारी नागक द्वारा दो कापरदक मुद्रा दान में दिये जाने का उल्लेख है।

दस्तावेज संख्या 20 में व्यापारी नागक द्वारा प्रत्येक तेल मिल से एक पल्लिका दान में दिया जाना निर्धारित किया है।

इस प्रकार व्यापारियों की विभिन्न श्रेणियों द्वारा मन्दिर के दैनिक निर्वहन हेतु मुद्रा, तेल, आवास, दुकान तथा भूमि दान किये जाने का वर्णन प्राप्त होता है।

इस लेख में विभिन्न श्रेणियों में तेल निकालने वाले, बागवान श्रेणी, कुम्भकार श्रेणी, शिल्पकार श्रेणी, शराब विक्रेता श्रेणी, नमक विक्रेता श्रेणी, इत्र विक्रेता आदि का उल्लेख है।¹

मध्य भारत (मध्य प्रदेश) क्षेत्र के भिलसा अभिलेख में (वि.सं. 935, 878 ई. शती) में उल्लेख है कि व्यापारी द्वारा तीन वीथी का किराया मन्दिर को देना नियत किया गया। चूँकि आपातकालीन स्थिति (सन्धि-पते) में प्रतिग्रहीता देव को बेच भी सकता था या गिरवी भी रख सकता था, परन्तु इस प्रक्रिया को सम्पादित करने से पूर्व व्यापारी ने राजा की स्वीकृति ली।²

चंदेलवंश के शासक अर्जुनवर्मन के सीहोर ताम्रपत्र (वि.सं. 1272, 1215 ई. शती) में हाथीनचरा गाँव के भूखण्ड को पुरोहित गोविन्दसर्मन को दिये जाने का उल्लेख है। इस लेख में 'घाटदेव' शब्द का उल्लेख है, जिसका अर्थ है नौका घाट पर नौकाओं के ठहरने व सामान के आयात-निर्यात पर कर देना होता था। चूँकि यह ग्राम नर्मदा नदी के तट पर स्थित था।³

उपरोक्त ताम्रपत्र में सीहोर को आरंभिक मध्यकाल में व्यापारिक महत्व की दृष्टि से स्थान दिया गया है। सम्भवतया नर्मदा नदी के माध्यम से व्यापारिक आवागमन होता रहा होगा।

पूर्वी भारत (उड़ीसा) क्षेत्र से प्राप्त पारला क्रिमेड़ी ताम्रपत्र में व्यापारियों के संगठन, श्रेणी, निगम, नगर आदि वर्णित किये गये हैं।⁴

उड़ीसा से ही सोमेश्वर देव के सोनपुर ताम्रपत्र में नवनगुलकपत्तन तथा महाभवगुप्त प्रथम के कलिभान ताम्रपत्र में मुरासिमपत्तन का मुख्य व्यापारिक केन्द्रों के रूप में उल्लेख प्राप्त हुआ है।⁵

बिहार क्षेत्र से 8वीं ई.शती में जारी उदयमना का दुधपाणि शैल अभिलेख में उल्लेख है कि तीन व्यापारी भाईयों ने तीन ग्रामों भ्रमरशालमाली, छिंजाला तथा नभूतिसंदाक के स्वामित्व के बदले इन ग्रामों की प्रभुसत्ता ग्रहण करी। इसके बदले में उनके द्वारा तत्कालीन मगध के शासक अदिसिम्हा को प्रतिवर्ष अवलगक (सेवा कर) देना होता था, यद्यपि यह कर ग्राम निवासियों द्वारा देव था, परन्तु ग्रामवासियों की असमर्थता के कारण यह उत्तरदायित्व उपरोक्त व्यापारी भाईयों द्वारा ग्रहण किया गया।⁶

इती क्रम में असम क्षेत्र के धर्मपाल (1095-1120) के सुभान्करपटक बुनकर व्यापारी श्रेणियों का असम में बसने का उल्लेख

किया गया है। यह वर्णिक कहलाते थे।¹⁰

इस ताम्रपत्र में यह भी उल्लेख मिलता है कि यहाँ 24 बुनकर पूर्व से तथा अन्य वर्ग जिन्हें ओरंगी कहा जाता था, दोनों वर्गों को द्विजिना विषय में स्थित उत्तर की देव भूमि में बसाये जाने का उल्लेख प्राप्त होता है। यह दानपत्र असम में बत्त उद्योग के प्रचलन का प्रथम साक्ष्य प्रतीत होता है।¹¹

अर्थात् असम में बुनकर श्रेणी में इस व्यवस्था को समुद्ध करने में योगदान दिया। महाराष्ट्र में व्यापारिक वर्ग ने जो भी भूमिदान किया उसका अनुमोदन शासक से करवाया गया। अर्थात् शासक ने इस क्षेत्र में प्रतिगृहिता के अधिकारों की सुरक्षा का ध्यान रखा।

इसका उदाहरण है कि यहाँ के राष्ट्रकूट शासक कृष्ण तृतीय के छिन्नानी ताम्रपत्र अभिलेख (939-67 ई. शती) में भीलमाल के व्यापारियों द्वारा भगवान मधुसुदन को वहाँ प्रतिष्ठापित किया गया था। उपरोक्त स्थान पर एक अन्य भगवती देवी का मन्दिर था, इस मन्दिर के द्वारा भगवान मधुसुदन तथा मन्दिर अर्धाक्षक को एक भूखण्ड हेतु चारोंस द्रम्म किराये के निमित्त दिये जाने थे। इस साक्ष्य में यह भी उल्लेख है कि किराये का भुगतान सियके के रूप में श्रेष्ठिन द्वारा किया जावे। यदि कोई व्यापारी इस व्यवस्था का उल्लंघन करता है तो उसकी सारी सम्पत्ति जप्त कर लिये जाने का प्रावधान रखा गया। इस साक्ष्य में हूण जाति का उल्लेख है।¹²

इसी क्षेत्र के शिलाहार शासक अपराजित द्वारा जारी दानपत्र में मन्दिर के निमित्त एक ग्राम दान किया गया। यह दान मन्दिर के एवज में व्यापारी अम्बुश्रेष्ठिन, वपैयाश्रेष्ठिन, भोजक तथा ब्राह्मण गोवनेया द्वारा प्राप्त किया। इन्होंने एक श्रेणी की स्थापना की। इस श्रेणी द्वारा राजकुल को 260 द्रम्म अरहनभाव्य के रूप में रकम प्रतिवर्ष भूमि दान के एवज में अदा की जानी थी। यह ग्राम दान उद्वंग व उपरिक्कर करों से उपभोग के अधिकार के साथ-साथ वृक्षों से भी युक्त था।¹³

कर्नाटक क्षेत्र से प्राप्त यादव शासक सिहाना के समय जारी धारवाड़ दानपत्र (वि.सं. 1304, 1247 ई. शती) में श्रेष्ठिन द्वारा 180 निवर्तन भूमि 3 मन्दिरों, 56 ब्राह्मणों तथा 3 ग्रामों के मुखियाओं को दान में दी गयी। अन्य छः प्रतिग्रहीताओं में शिक्षकों (भट्टवृत्ति), बच्चों की शिक्षा हेतु (बाल शिक्षा), खण्डिका (अनेक धार्मिक विभाग) को भूमि के टुकड़े दान किये गये। यह श्रेष्ठिन सामन्त परिवार से सम्बद्ध था, यह सम्पदा उसे भी वीरता दिखाने पर पुरस्कार स्वरूप दी गयी थी। श्रेष्ठिन द्वारा इस भूमि दान के अनुमोदन हेतु राज्य को अरुवाना कर दिया जाना निश्चित किया गया।¹⁴

धारवाड़ नामक स्थान कपड़ा उद्योग का मुख्य केन्द्र था। यहाँ पर वर्तमान समय की भाँति उस समय का भी कपास का उत्पादन वाणिज्यिक पैमाने पर होता था। यहाँ पर तर्बि की खानों का अस्तित्व है।

इस प्रकार वर्णिक वर्ग ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को आत्म निर्भर बनाने तथा समाज कल्याण धार्मिक मूल्यों के संरक्षण आदि में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया।

उड़ीसा, असम आदि क्षेत्रों में यह वर्ग अन्य स्थानों से आमंत्रित किया गया जिससे आंतरिक व वैदेशिक व्यापार को गति मिली। मध्य-प्रदेश, महाराष्ट्र व कर्नाटक आदि क्षेत्रों में व्यापारियों ने अपने दान को शासक से अनुमोदित करवाया। अर्थात् वणिज वर्ग द्वारा सभी क्षेत्रों में भूमि अनुदान व्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान दिया गया। परन्तु इसके अन्तर्गत क्षेत्रगत अन्तर होना भी स्वभाविक था, क्योंकि प्रत्येक राज्य की आर्थिक नीति का स्वरूप कई माइनों में अलग-अलग हो सकता है। अभिलेखिक साक्ष्यों से यह भी स्पष्ट होता है कि सक्रिय वणिज वर्ग की भूमिका ने पेहेवा (पृथुदका) सियोदोनी, (झांसी जिले में ललितपुर के पास), गोपगिरी (ग्वालियर), सीहोर (मध्यप्रदेश), तत्तन्दपुरा (आहड़ के पास बुलन्दशहर तथा गंगा के पश्चिमी किनारे) नवनगुलकपत्तन, मुरासिमपत्तन (उड़ीसा) आदि नगरों को व्यापारिक केन्द्रों के रूप में उभारने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

संदर्भग्रंथ सूची-

1. सिंह, डॉ. सुशील, प्राचीन पंजाब के अभिलेखों का अध्ययन, न्यू भारतीय बुक कॉरपोरेशन, नई दिल्ली, 2003, पृष्ठ संख्या 231-235
2. एपिग्राफिआ इण्डिका, खण्ड 1(1892), प्रकाशित 1983, पृष्ठ संख्या 184-190
3. एपिग्राफिआ इण्डिका, खण्ड 19 (1927-28), प्रकाशित 1983, पृष्ठ संख्या 52-62
4. एपिग्राफिआ इण्डिका, खण्ड 19 (1927-28), प्रकाशित 1983, पृष्ठ संख्या 162-179
5. एपिग्राफिआ इण्डिका, खण्ड 30 (1953-54), प्रकाशित 1987, पृष्ठ संख्या 284-287
6. कॉर्पस इन्सक्रिप्शानम् इन्डिकेरम, खण्ड 7, भाग (ii), पृष्ठ संख्या 168-171
7. महाजन, मालती, उड़ीसा-फ्रॉम प्लेस नेम्स इन इन्सक्रिप्शान्स (कल्चरल एण्ड हिस्टोरिकल ज्योग्राफी), शारदा पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2003, पृष्ठ संख्या 342
8. वहीं, पृष्ठ संख्या 345
9. बाशम, ए.एल., अद्भुत भारत, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा, 1968, पृष्ठ संख्या 94
10. चौधरी, पी. सी., द हिस्ट्री ऑफ सिविलाइजेशन ऑफ द पीपल ऑफ असम टू द ट्रेल्थ सेन्चुरी ए.डी. द गवर्नमेन्ट ऑफ असम इन द डिपार्टमेन्ट ऑफ हिस्टोरिकल एण्ड एन्टिकेरिअन स्टडीज, गौहाटी, असम, पृष्ठ संख्या 303
11. मजूमदार, बी.पी., द जर्नल ऑफ द बिहार रिसर्च सोसायटी, खण्ड LXV-LXVI बिहार रिसर्च सोसायटी, पटना, 1979-80, पृष्ठ संख्या 244
12. सरकार, डी.सी., सीलेक्ट इन्सक्रिप्शान्स, बीअरिंग ऑन इण्डियन हिस्ट्री एण्ड सिविलाइजेशन वोल्यूम द्वितीय (फ्रॉम द सिक्स्थ टू एटीन्थ सेन्चुरी ए.डी.), मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1983, पृष्ठ संख्या 503-507
13. प्रकाश, ओम अरली इण्डियन लैण्ड ग्रान्दस एण्ड स्टेट इक्वॉनॉमी, एक्सिलेंस पब्लिशर्स, इलाहाबाद, 1988, पृष्ठ संख्या 19-20
14. एपिग्राफिआ इण्डिका, खण्ड 34 पृष्ठ संख्या 32-41
15. नंदी, रमेशनाथ, स्टेट फॉर्मेशन, अग्रेरिअन ग्रॉथ एण्ड सोशल चेन्ज इन यूडल साउथ इण्डिया (सी.ए.डी. 600-1200) अजय कुमार जैन, न्यू दिल्ली, 2000, पृष्ठ संख्या 149

Study of Blast Disease Infestation In Rice Plant Regarding Different Growth Parameters

Rohini Maheshwari

Lecturer, Government P.G. College, Bundi



shodhshree@gmail.com

Hundreds of millions of people world-wide depend on rice as a staple food. A crop failure for any reason, poses a real threat of starvation (Te Beest *et al* 2007). India plays a dominant role in the production and consumption of rice as a food. The rice crop is subjected to more than forty diseases, which are responsible for low yield of rice in the world. The rice blast diseases caused by *Pyricularia oryzae* may appear at any stage of development of plant, attacking the seed sown, root system, foliage, stalk, leaf sheath, inflorescence and even the developing grain (Shajia Iram *et al* 2003). The above disease on rice and yield losses due to that is equally common in Bundi district, Rajasthan.

The effects of *Pyricularia oryzae* the causal agent of blast disease in rice, on plant growth, grain yield and grain quality was studied by Spyridon *et al* (2009). The disease causes severe losses in yield (Rajarajeshwari and Muralidharan 2006).

Material and Methods:

Assessment and Comparison of Growth Parameters of Healthy and Blast Infected Rice Plants-

For this purpose susceptible Pusa Basmati – 1121 cultivar of rice (*Oryza sativa L*) was selected for the study. The surface sterilized seeds of above cultivars were sown and seedlings were then transplanted in pots containing sterile soil under green house conditions. At 10 days after transplantation 20 rice plants were inoculated with spore suspension of *P. oryzae* at the concentration of 10^6 conidia per ml. 20 plants were kept healthy (uninoculated) that served as healthy control. The plants were assessed and compared for growth parameters at maturity. Various growth parameters *viz.* shoot and root length (cm), shoot and root fresh and dry weight (g), number of tillers and leaves, leaf area, number of trichome, stomatal index, percent pollen viability, length of ear (cm) and yield in terms of seed weight (g) per plant were studied and compared in both healthy and blast infected plant samples.

For morphological study the plants were uprooted, washed gently, blotter dried and observations regarding the above said morphological parameters

were taken. Fresh weights (shoot and root) were taken immediately after blotter drying. For dry weight the rice plant parts were dried in oven at 40°C for seventy two hours. Number of leaves and tillers were counted visually and noted. Leaf area was calculated using graph paper, plant length (shoot and root) leaf size, ear length were measured with the help of measuring scale and seeds were weighed by using electronic balance. For counting number of stomata and trichomes per centimeter square, leaves of comparable size and age were collected both from *Pyricularia oryzae* inoculated and uninoculated (healthy) rice plants. The leaves were fixed in F. A. A. and preserved in 70% ethanol. Leaf pieces of 1 cm² were cut from preserved leaves and epidermal peels were obtained by Triple acid treatment method (Ramayya and Vaneja 1979). Epidermal peels were stained in 1% safranin and the stained preparations were observed under microscope to study stomata and trichome numbers by means of calibrated ocular and stage micrometer. Number of trichomes was calculated by manual counting and Stomatal index was calculated by using the following formula, given by Ferris and Taylor (1994).

$$S.I. = \frac{S}{E+S} \times 100$$

Where, S.I. = Stomatal Index

S = Number of stomata per unit area.

E = Number of epidermal cell in the same unit area.

The status of stomata and trichomes were examined on ten microscopic fields and average value was find out.

At the emergence of flowers, anthers were collected to test pollen viability in healthy and fungal (*Pyricularia oryzae*) infected plants. Immediately after collection, anthers were macerated and squeezed on wet glass slides to take out pollens from anthers. These pollens were stained with few drops of 1% acetocaramine. The slides were warmed gently over spirit lamp and cover slip was placed over the slide having stained pollen grains. The edges of the cover slip were sealed with Canada balsam and the slide was observed under microscope and pollen viability was tested, as viable pollen had intact wall and darkly stained and non viable pollen were shrunken and lightly stained. The counting was done manually for total number of pollens and viable pollen. Percent Pollen viability was calculated using formula given by (Kearns and Inouyen 1993)

$$\% \text{ pollen viability} = \frac{\text{No. of Stained Pollen}}{\text{Total No. of Pollen}} \times 100$$

Result And Discussion

Study of growth parameters of healthy and *Pyricularia oryzae* infected plants of *Oryza sativa* (observations are mean of 5 replicates).

S.N.	Growth Character	Healthy	I Nfected	%decrease over healthy plant
1	Shoot length (cm)	119.83	110.13	8.09
	Root length (cm)	18.27	16.33	10.61
2	Shoot Fresh weight(g)	20.16	18.07	10.36
	Root Fresh weight (g)	8.95	7.88	11.62
3	Shoot dry weight (g)	10.73	8.93	16.77
	Root dry weight (g)	4.86	3.99	17.90

4	No. of leaves	19	19	0
5	No. of tillers	9	6	33.3
6	Leaf area cm ²	144.52	111.50	22.84
7	Trichome no./microscopic field	9	5	44.4
8	Stomatal index	27%	11%	16
9	Percent Pollen viability	80%	48%	32
10	Ear length (cm)	23.6cm	19.2cm	18.64
11	Seed weight per plant(g) (yield)	.530 g	.330 g	37.73

The greater disease level of the infected plants was found to have a shortening effect, causing a mean plant height reduction of 8.09% in infected plants as compared to the healthy plants. These results are in agreement with those given by Torres and Teng (1993). There was reduction in fresh and dry weights of shoot and root in fungal infected paddy plant over healthy plant. Though the number of leaves were same in both the types of plants but the leaf area was 22.84 percent reduced in infected plant as compared to healthy plant. Decrease in fresh weight may be due to the toxins produced by the fungi, which affected K uptake and stomata function leading to uncontrolled transpiration and excessive loss of water (Aducci *et al* 1997). However, reduction in shoot dry weight might be related to increased rate of respiration, decompartmentalization due to membrane degradation (Orcutt & Nilsen 2000) as in the infected tomato shoots due to *Fusarium oxysporium*. Bastiaans and Kropff (1993) reported that the blast disease leads to a reduction in canopy photosynthesis mainly due to an adverse effect of lesions on leaf photosynthetic rate and also due to shading by dead leaf area resulting from disease induced senescence. This may be the reason of low weight and reduction of leaf area in infected plant as compared to healthy plant. The productive tillers produced by healthy

plant were more (9) than that of infected plant (6). Candole *et al* (2000) reported that infection was found to cause reduction in the number of productive tillers per plant. Number of trichomes was less in infected plants as compared to healthy ones. A high frequency of trichome may prevent mycelial penetration and infection imparting resistant to rice plant, as observed by Shaik (1985). The trichomes may act as physical barriers to the penetration of pathogen in the mesophyll. Same findings were also reported by Mastin and glover (2007). Stomatal abnormalities in infected plant in relation to a normal stoma were noticed. The number of stomata on the infected leaves decreased significantly. Stomatal index in healthy plant leaf was found to be 16% more than that of infected leaf. The results obtained in present work coincided with that of previously observed. In powdery mildew disease 12.5% smaller stomatal index per unit leaf area was reported in susceptible cultivars as compared to resistant ones by Soumen *et al* (2011). Similar relationship was established in stomatal index in downy mildew susceptible grapevine by Alnoso *et al* (2011). This reduction in stomatal index may be attributed to the reduction in the number of stomata and epidermal cells due to the effect of leaf blast lesions on leaf surface which causes

disruption of leaf surface and senescence of diseased leaf part. In the present study, to visualize the effect of blast on pollen grain development, pollen viability was tested. There was marked difference in percentage viable pollen grain in healthy and fungal infected plant. The results showed that *P. oryzae* invasion induced considerable disturbance in the pollen metabolism leading to decreased viability. Pollen and seed development is directly related to grain production. The stress factors during the pollen development and shedding could negatively affect plant reproduction and yield. This may be due to alteration in the activity of enzymes taking part in various pathways and basic metabolism, that play a specific role in stress responses. The above results were in accordance with the findings of Georgieva and Rodeva (2009), while studying- the pollen response to *Botrytis cinerea* infection on tomato. In the present investigation it was found that blast disease caused a considerable loss in yield which was calculated in terms of seed weight. Koutroubas *et al* (2009) found reduction in grain yield due to reduced accumulation and less remobilization of the pre anthesis assimilates in grain of rice in blast disease conditions. Okhovat *et al* (1989, 1990) also observed the same results.

As the disease led in the reduction of leaf area, there might be reduction in photosynthetic rate, causing less production of growth promoting metabolites which in turn might resulted in reduction of various morphological growth parameters. The above results matched the results of Sesma and Osbourn (2004), Dinkar and Muralidharan (2007) and Srinivas *et al* (2008). Our results emphasize the important effects of blast disease on rice growth and productivity under infected conditions. Plants grown under diseased conditions showed reduced plant height and grain yield compared to healthy ones.

The above study thus gives advance knowledge of disease infestations in the plant. It was further concluded that increased focus should be placed on considering the dynamics of plant growth.

References:

1. **Aducci P, Ballio A, Marra M** (1997). *Phytotoxins as molecular signals. In: Signal transduction in plants. Aducci, P. (ed.), Birkhauser Verlag, Basel:83-105*
2. **Alonso-Villa verde V, Boso S, Santiago J L, Gago P and Martinez M C** (2011). *Variability of the stomata among 'Albarino' (Vitis vinifera L.) clones and its relationship with and susceptibility to downy mildew. Vitis, 50(1): 45-46.*
3. **Bastians L and Kropff MJ** (1993). *Effects of leaf blast on photosynthesis of rice. Canopy photosynthesis Meth. J Plant Pathol, 99: 205-217.*
4. **Candole B L, Siebenmorgen T J, Lee F N and Cartwright R D** (2000) *Effect of Rice Blast and Sheath Blight on Physical Properties of Selected Rice Cultivars Cereal Chem, 77(5):535-540.*
5. **Dinakar C and Muralidharan K** (2007). *Measurement of leaf blast lesions and spores produced by Pyricularia grisea in commercial rice cultivars. J. Mycol.Pl Pathol.37 (2):215-226*
6. **Ferris R and Taylor G** (1994) *Stomatal characteristics of four native herbs following exposure to elevated carbon di oxide. Annals of botany, 73:453-477*
7. **Georgieva I, and Rodeva R** (2009). *Pollen response to Botrytis cinerea infection of Tomato. Acta Hort. (ISHS) 808: 359-362.*
8. **Kearns, C.A. and Inouyen, D.W.** (1993). *Techniques for Pollination Biologists. Niwot, Colorado: University Press of Colorado*
9. **Koutroubas SD, Katsantonis D, Ntanos DA and Leepotto E.** (2009). *Blast fungi inoculation reduced accumulation and remobilization of the pre-anthesis assimilates to the grains in rice. Phytopathol Mediterr (In Press)*
10. **Martin C and Glover B J** (2007). *Functional aspects of cell patterning in aerial epidermis. Current opinion in plant biology, 10: 70-78*
11. **Okhovat M, Sharifi Tehrani A and Eshtiaghi V** (1989). *Blast loss assessment in Amol. The proc. of 9th Iranian plant protection congress. Mashhad Iran: 77.*
12. **Orcutt DM and Nilsen ET** (2000). *Influence of plant phytopathogens on host physiology. In: Orcutt, D. M. and E.T. Nilsen (eds), The physiology of plants under stress. Soil and Biotic Factors, John Wiley & Sons, Inc. VSA, :239-236.*
13. **Rajarajeswari NUL and Muralidharan K** (2006). *Estimates of farm yields and districts production*

- loss from rice blast epidemics. *J. mycol Pl pathol* 36(2):115-124.
14. **Ramayya, N. and V. Vanaja** (1979). Development of a Triple Acid Treatment method for separation of firmly adherent foliar dermides. *Geobios* 6: 5-8.
 15. **Sesma A and Osbourn AE** (2004). The rice blast pathogen undergoes developmental processes typical of root infecting fungi. *Nature*, 431:582-586.
 16. **Shaikh M** (1985). Race non specific resistance in bean cultivar to races of *Uromyces appendiculatus* and its correlation with leaf epidermal characters. *Phytopathology*, 75:478-481
 17. **Shajia Iram, Iftikar Ahmad and AShrif M** (2003). A study on fungi and soil borne diseases associated with rice-wheat cropping system of Punjab province of Pakistan. *Pakistan Journal of Biological Science*, 6(1): 1-6.
 18. **Soumen Chattopadhyay, Kabiul Akhter Ali, S Gandhi Doss, Nirvan K Das, Ramesh K Aggarwal, Tapas K Bandopadhyay, A Sarkar and A K Bajpai** (2011) Association of leaf micromorphological characters with powdery mildew resistance in field grown mulberry (*Morus* spp.) germplasm. *AoB Plants Advance Access*: 1-27.
 19. **Spyridon D Koulroubas, Dimitrios Katsantonis, Dimitrios ANtanos, Elisabetta Lupotto** (2009). Blast disease influence on agronomic and quality traits of rice varieties under Mediteranean conditions. *Turk J for Agric*, 33: 487-494.
 20. **Srinivas M Prasad , Ramesha M S, Voleti S R, Pasalu I C and Vijayakumar C H M** (2008). Resistance to blast disease and tolerance to drought in rice genotypes. *Journal of mycology and plant pathology*, 38(1):108-111
 21. **Tebeest DO, Guerber C and Ditmore M** (2007). *Rice Blast The plant health instructor*, (7) 313.
 22. **Tores CQ and Teng PS** (1993). Path coefficient and regression analysis of the effects of leaf and panicle blast on tropical rice yield. *Crop protection*. 12:296-302.

E-commerce - A Revolution in Indian Economy

Dr. Minakshi Kumawat

Pune (Maharashtra)



shodhshree@gmail.com

"The e-commerce industry is a force that no investor can afford to ignore."

Cushla Sherlock

According to Harvard Law School, The broadest definition of E-commerce is "the conduct of transactions by electronic means." E-commerce means buying and selling of goods and services over internet. Through the assistance of the flexibility provided by computer and the option of the Network, E-commerce evolves with traditional business sector. It includes the use of information and communication technology (ICT) and electronics fund transfer (EFT) in making the commercial relation between consumer and organisation, organisation and organisation, and consumer and consumer. The electronic data interchange has also grown with the growing use of internet and so has flourished e-commerce with internet bazaar. This electronic data interchange and use of information and technology business on internet is called E-commerce, which is most effective and efficient way of coordinating business. International Journal of E commerce also states that the E-commerce refers to sharing business information, maintaining business relationships and conducting business transactions by means of telecommunications networks.

E-commerce has very wide range of applications relating to online banking, news group, social networking, video conferencing, instant messaging, electronic tickets, automated online and many others. It will be more logical if we say that use of information and technology transaction over internet is called E-commerce.

Seeing the growing trend and effect of E-commerce on economy, our government also decided to promote the E-Commerce by liberalising rules and policies. According to Dainik Bhaskar 20 march 2015, chairman of Securities Exchange Board of India (SEBI) Mr. U.K. Sinha announced the liberty under the rule of IPO for E-Commerce industry. Mr. Sinha said in the press conference that SEBI may clear its ground on these issue in coming three to four months. This will again be a step forward on the path of E-commerce liberalisation.

With the advent of the Internet, the term E-commerce began to include:

- Electronic trading of physical goods and of intangibles such as information.
- All the steps involved in trade, such as on-line marketing, ordering payment and support for delivery.
- The electronic provision of services such as after sales support or on-line legal advice.

Growing use of Internet and E-commerce:-

The scenario before 2010 is totally different related to e commerce in India. After 2010 people are more conscious about online shopping, online payments. Now they accept and explore shopping trend from traditional way of shopping. Between 2005 and 2010 there were very few companies which were in this E- field and people were also not used to of this trend, even most of the population was not connected with internet. After 2010 internet came in the reach of common people, online shopping and payment facility became available on phone. With this the area of online shopping is spreading more and more.

One of the major factor affecting the rapid growth of E-commerce in India is the fast growing use of Internet. Up to the year 2010, E-commerce was not a popular topic of discussion and attention, in India. This was the time when companies like Myntra, ebay, Flipkart, infibeam had started rising high. After 2010 India has seen very high growth on E-commerce. Now the market is growing with even faster velocity. Companies like Flipkart which is India's leading internet commerce site, has hit the heights. Snapdeal in addition to Amazon online are usually believed to follow match soon. Now e-commerce in India is evolved in terms of magnitude. This industry is additionally experiencing speedy enhancement throughout the grade of service proposed by organizations, using the introduction connected with similar day distribution and premium service provides.

Now with the time this e-commerce sector has seen unprecedented growth in 2014. This growth was driven by fast adoption of smart technology, increasing use of devices such as internet access via broadband, 3G 4G, tablets, smart phones etc.

**INTERNET USERS IN INDIA
(IN MILLION)**

■ Urban ■ Rural



As per this statistical information sourced by Internet And Mobile Association of India (IAMAI), internet user of urban Indian population in Dec. 2014 was estimated to be 190 million whereas in rural areas it was 112 million. It is projected that by June 2015 it will be 216 million in urban population and 138 million in rural population. A Huge jump from 2012 to 2015 of 54.1% considering urban population and 72.46% jump in rural population from 2012 to 2015.

In expensive smart phones and availability of mobile internet has contributed to the growth of e-commerce in areas where fixed internet is out of reach. It is predicted that the number of mobile internet user in India will reach 213 million by June 2015. The growing use of internet is resulting from the increased use of online services. As per The Financial Express, new Delhi PTI, "India to have 2nd largest online user base after China in 2016". This will push US to second position but China who has the largest internet user base, will continue to be at first position with 700 million internet users by 2016.

E-commerce and Legal Environment in India:-

In India E-commerce has a tremendous growth potential considering the large population in middle and higher class. However a lot of legitimate, technical as well as regulatory issues have slowed down its growth. Presently a very few firms in India are familiar with legal and technological aspect in e commerce laws. Lawyers in India must upgrade their expertise as well as knowledge in the fast growing legal environment. So, the business is not simple as it may seem and also involves a lot of legal aspects such as cyber laws and E-commerce laws.

Cyber law is the law which is governing cyber space. This has extremely vast expression along with computer, network, software, storage devices, e-mails, websites and even electronic devices including cell phones, ATM etc. In Modern world, any country's strength exists in the strength of its Cyber law. Even though we do not

have a dedicated e commerce law in our country, the information technology act (IT Act 2000) is the only cyber law of India, which is regulating business and transactions. As per IT Act 2000, the e-commerce website operating in India are internet intermediaries and they are required to comply with cyber law. The primary aim of this Information Technology Act 2000 is to provide the recognition to e-commerce. It came into recognition on 17 October 2000 and consisted of 94 sections segregated into 13 chapters. On 23 December 2008 the Information Technology Act has been amended in parliament as Information Technology Amended Act 2008, (IT Act 2008). IT Act 2008, provided the extra focus on information security as a new version of Information Technology Act,2000.

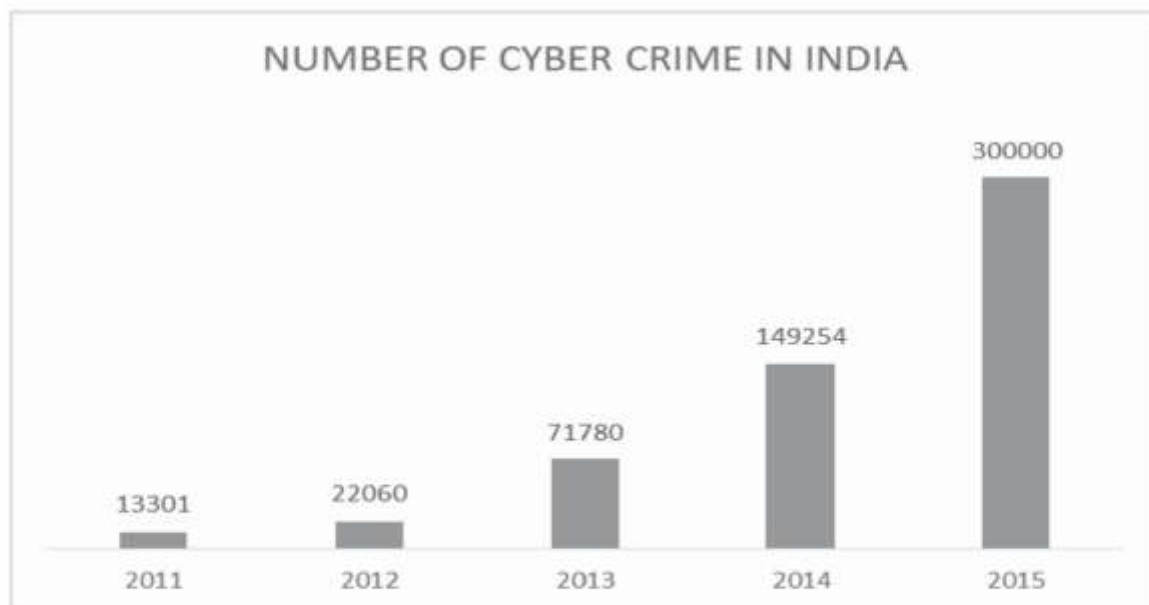
E-commerce and cybercrimes:-

India is witnessing a digital revolution with internet becoming an integral part of its population and availability of internet on mobile devices. People make e-frauds such as Phishing and identity theft. Online identity theft and phishing means stealing someone's banking information and using it to order goods or transferring money into wrong account, is the main fraud committed in e-consumers.

According to one of the study, Cybercrime in India is increasing rapidly. It is expected to increase at 107 % CAGR, from 2014 and reach to 300,000 in 2015. The statistics according to the ASSOCHAM - Mahindra SSG Report 2015, Nearly 13301 Cyber Crime situations were listed during 2011. The numbers increased simply by nearly 50 % within the next year, reaching 22, 601. Interestingly, in 2014 the quantity of situations listed under Cyber Crime laws and regulations increased simply by over 100% to 1,49,254.

So, cyber law should be very effective and strong but the reality is that e criminals are rarely caught may be because of changing e-mails, hackers using different computers in different part of the world.

NUMBER OF CYBER CRIME IN INDIA



Social and Economic Impact of E-Commerce in India:-

Now a days, in this world a large number of e-commerce websites are available that people can buy items through. Everything from the book, clothing, furniture, groceries and many more are now available to buy online using websites. Other than buying goods, people can get services like doctor's appointment, vehicle servicing, house renovating plans, travel booking, barbers appointment, and many other services. As e-commerce continues to grow fast, it could have significant impact on the social and economic structure of economy.

Economic Effect:-

Some of the major economic impacts are as below:-

- According to the present scenario particularly in India business has to follow the rule of "adapt or die" relating to e-commerce. It is hard to accept that without e-commerce the survival of any business is difficult.
- E-commerce provides the unique facility to small businessman or a person who doesn't have much to invest. So with this fantastic platform, marginal people can also gain to the maximum possible extent.

- E-governance initiatives increases access to information and thereby reducing corruption.
- With the increase in mobile banking the transaction cost reduces and gives the positive effect on banking business.
- E-marketing reduces the overheads of the middle men, on the goods and services which ultimately results in to cost benefits to the buyer.
- It is fast and easy.
- In the remote areas E-learning enhancing the access of education institution.

Social Impact:-

Some of the major social impacts are as below:-

- E-commerce may offer the social justice with regards to the balance of opportunities, wealth, and education to the marginal people of the country.
- E-commerce also gives the positive impact on giant Corporates and small business equally. It provide the equal opportunity to everyone to explore themselves.
- Family contacts are now become closer but on other hand it increase the virtual contact of people and as a result of this

people are now de-socialise in personal contact.

- This kind of activities includes psychological and physical health-related issues. A research suggests that as this type of work (and social) activity expands, businesses and government will have to consider broad-based means to offset health hazards with new policies and treatments.

Advantages of E-commerce:-

The author has highlighted numerous advantages in the above study. These advantages can be consolidated, but not limited to, in below bullet points:-

- Assessable 24/7.
- Cheaper to set up.
- Large profit margin.
- Eliminates travel time and expenses
- Less overheads so lower cost
- Conquer geographical constraint
- Create new customer with search engine
- Track down product or services more rapidly
- Provide comparison facility
- Convenient shopping
- Provide abundant information
- Low risk
- Need less management
- Shopping at your home comfort and home delivery

Disadvantages:-

- Risk of fraud
- Lack of personal touch
- Privacy problem
- Sometimes shipping cost involved.
- Difficult to earn customers trust.
- Lack of face to face interaction.

Conclusion:-

E-commerce has undoubtedly becoming an essential part of the society. It is the great way for business and consumers to interact beyond the

geographical boundaries. The traditional model of business is undergoing a sea change to reduce the prominence of physical infrastructure of big cities as an essential condition for the smooth functioning of business. It is actually a progression and growing as an important tool to ensure comprehensive growth.

Emergence of international shipping options creates the opportunity to reach online consumers around the globe. Emerging economies with a rapidly growing internet penetration offers an attractive option for the retailers to expand. China with the world's largest online population provides a great opportunity for the retailers. The concept of virtual companies is taking concrete shape and will usher into an era of boundary less world. The micro, small, and medium size companies will get the advantages of low cost operations, and opportunity to market the products globally on the click of a mouse. Neglected remote villages and states will get a chance to grow economically, socially and also contribute to empowerment of women, and all classes of society. E-commerce has the scope to lead India into an Economic superpower.

In general, today's businesses must always strive to create the next best thing that consumers will want because consumers continue to desire their products, services etc., to continuously be better, faster, and cheaper. E-commerce is continuously progressing and is becoming more and more important to businesses as technology continues to advance and is something that should be taken advantage of and implemented.

From the inception of the Internet and e-commerce, the possibilities have become endless for both businesses and consumers. It is creating more opportunities of profit and advancements for businesses, while creating more options for consumers. However, just like anything else, e-commerce has its disadvantages including consumer uncertainties, but there is nothing that cannot be resolved or avoided by good decision-making and business practices.

References:

1. <http://www.financialexpress.com/> Online version Nov. 23,2014
2. Shah Salil , *E-Commerce in India-Statistics, Trends, and Insights*, <http://www.imediaconnection.in/article/91/Digital/Internet/ecommerce-in-india-statistics-trends-and-insights.html> [Assessed 1/9/2011]
3. "Average Indian to spend 10,000 crore on e-commerce" *Times of india*, dec 28 2014
4. Chaudhury A.; kuilboer J.; (2002); *E-business and E-commerce infrastructure: technologies* Mc graw: hill/ Irwin Newyork:
5. Chauhan, Abha (2013), "Evolution and Development of Cyber Law – A Study with Special Reference to India," *Social Science Research Network*.
6. *UNCITRAL Model Law on Electronic Commerce (1996)*, United Nations Commission on International Trade Law, http://www.uncitral.org/uncitral/en/uncitral_texts/electronic_commerce/1996Model.html
7. <http://www.novonous.com/case-studies/analysis-ma-scenario-indian-e-commerce-market>
8. <http://trak.in/tags/business/2014/10/17/india-ecommerce-growth-2014-vs-2015/>
9. <http://www.digihooks.com/ecommerce-in-india/>
10. *Dainikbhaskar*, 20 march 2015, hindi news paper
11. Laudon & Traver, *Text Book on E commerce*(2002)
12. <http://www.slideshare.net/mobile/CassandraMecca/e-commerce-7607658>

A Study on Attributes and Buying Behaviors of College Going Girls towards Jeans

Dr. Sabra Qureshi

Assistant Professor, Maulana Azad University, Jodhpur



shodhshree@gmail.com

Consumer behaviour can be defined as the decision-making process and physical activity. Buying behaviour involves study of how people buy, what they buy, when they buy and why they buy.¹

These self-images, are very closely associated with personality individuals tend to buy apparels and services and patronize retailers whose images or personalities relate in some meaningful way to their own self-images. Apparels have symbolic for individuals, who evaluate them on the basis of their consistency with their personal pictures or images of themselves. There are many factors such as cultural, social, personal and psychological that influences the consumers to make choice about the apparel they buy. This initiated a need to know the consumers perception regarding branded and non branded apparel.²

Girl's jeans was chosen as the product for the study because it was kept in mind that this product has been and is among the fastest growing industry on national and international standards/markets. The product is rather already very popular. It is a routine shopping product. Every company feels that the market for jeans will keep going, and at a growing pace. The product is popular everywhere and anywhere in India. The main customers are the youths. Most of the young persons or the ones who are studying or newly employed generally have a crush over jeans. It is this segment which generally feels like 'rebellious' and 'independent'. As such the educated youth is the most aware about different brands of jeans available in the market. Denim jeans can be looked at as serving a purpose; whether that is functional or aesthetic.

Jeans have extrinsic as well as intrinsic value, in that they are considered to fulfil a purpose outside of the product itself; that of durability, longevity of wear and utilitarian function. But jeans are admired and work for their intrinsic value as well; flattering fit and right color, as part of the whole ensemble that a person enjoys wearing, providing positive aesthetic experiences. Jeans also have an admiration quality; this may be sought by individuals who choose to wear designer jeans to show off the status association that comes with wearing a high priced pair of jeans with the

designer label emblazoned across the back.³

The main objectives of the study were:

- To study the various attributes which influence girls to buy jeans
- To determine the latest trends in jeans which are available in the market for girls
- To analyze the most preferred brands of jeans
- To study the impact of sales promotion tools in the buying behaviour of girls

Methodology:-

Locale of study: The locale of the study was Jaipur.

Selection of method: For the collection of data, the survey method was adopted by visiting malls and showrooms. Questionnaire was prepared

and information was collected from college going girls of Jaipur.

Selection of sample: One hundred girls under the age category of 18-23 years were approached to obtain the information in filling of the questionnaire. The samples were randomly selected.

Data collection: The primary data was collected by gathering information through questionnaire and secondary data were collected from books, journals, magazines and internet.

Analysis of data: Te data from questionnaire was transferred to the coding sheet by assigning numerals to the responses. This facilitates tabulation and analysis of data which reflect the percentage of data.

Result and Discussion:

Table No.1: Family type (n=100)

S.No.	Family type	Frequency	Percentage (%)
1.	Nuclear	56	56
2.	Joint	44	44

From the above data it can be analyzed that 56% of respondents belong to nuclear family and 44% respondents belongs to joint family. Henceforth, it

can be concluded that the size of family has a direct impact on consumption pattern of clothing of the family.

Table No.2: Monthly income of family (n=100)

S.No.	Monthly income of family (in rupees)	Frequency	Percentage (%)
1.	Up to 15000/-	0	0
2.	15001-20,000/-	8	8
3.	20001-25000/-	18	18
4.	25001/--above	74	74

The above table reveals that majority(74%) of the respondent has monthly income above ₹25,001, followed by 18% with income bracket of ₹20,001-25,000 and the remaining 8% earned

between ₹15001-20,000. Therefore, it can be concluded that family income plays an important role to buy the product.

Table No.3: Most preferred kind of jeans by girls (n=100)

S. No.	Most preferred kind of jeans	Frequency	Percentage(%)
1.	Branded	63	63
2.	Non-Branded	37	37

From the above table it can be concluded that 63% of the girls preferred branded jeans in comparison to 37% of girls to non-branded jeans.

Thus, it can be concluded that today girls preferred branded jeans because of the style, fits and comfort in comparison to non branded jeans

Table No. 4: Preference towards Shopping Style

(n=100)

S.No.	Preferences	Frequency	Percentage(%)
1.	Mall	44	44
2.	Branded showrooms	47	47
3.	Local Market	9	9

From the above table, it can be inferred that 47% girls go to the branded showroom for shopping, 44% girls visit malls, and 9% girls go to the local market for purchase of jeans. It can be concluded

that girls are more prompt for branded showrooms than malls and local market, so that they may get a quality product at one place.

Table No. 5: Branded Jeans Means to You

(n=100)

S.No.	Branded means	Frequency	Percentage(%)
1.	Status symbol	25	25
2.	Quality assurance	57	57
3.	Value of money	12	12
4.	Waste of money	6	6

From the above table it can be revealed that for 57% of girls branded means quality assurance, followed by 25% girls for them branded means status symbol, for 12% branded means value of

money and for remaining (6%) girls branded means waste of money. So it can be concluded that quality assurance plays the major role in brand for the girls for the durability of the product.

Table No. 6: Media Influences to Buy Jeans

(n=100)

S.No.	Different media	Frequency	Percentage (%)
1.	Television	39	39
2.	Radio	3	3
3.	Newspaper	15	15
4.	Magazine	43	43

From the above table it can be interpreted that 43% of the girls are influenced by magazine followed by 39% through television, 15% through newspaper and rest 3% by radio. Therefore it can

be concluded that most of the girls are highly influenced by magazine for the purchase of jeans because television provides them range of the product to see.

Table No. 7: Factors Which Motivates Girls to Purchase Jeans**(n=100)**

S.No.	Factors which Motivates Girls to Buy Jeans	Frequency	Percentage (%)
1.	Comfort	41	41
2.	Style	39	39
3.	Design	13	13
4.	Price	7	7

In the conducted research, 44% respondents prefer comfort as the factor which motivates them to buy jeans where as 39% respondents revealed that they consider style as their criteria

for buying jeans, followed by 11% respondents who preferred design as a factor which motivates them to buy jeans and for rest 6% price is the main factor which influenced them.

Table No. 8: Money Spend an Average Per Pair of Jeans**(n=100)**

S.No.	Money Spend on Average Per Pair of Jeans	Frequency	Percentage (%)
1.	₹ 1000-1500	17	17
2.	₹ 1500-2000	34	34
3.	₹ 2000-2500	35	35
4.	₹ 2500-3500	14	14

From the above table, it can be revealed that majority(35%) of girls spends ₹2000-2500, followed by 34% who spends ₹ 1000-1500, whereas 17% of girls spends ₹ 1000-1500, 14%

spends ₹ 2500-3500 on an average for per pair of jeans. With this survey it can be concluded that the family income has direct effect on buying of branded jeans.

Table No. 9: Preference Regarding fit of Jeans**(n=100)**

S.No.	Preferences Regarding the Fit of Jeans	Frequency	Percentage(%)
1.	Straight Fit Jeans	36	36
2.	Bell Bottom	5	5
3.	Slim Fit	24	24
4.	Boot Cut Jeans	4	4
5.	Comfort Fit	31	31

From the above table it can be interpreted that the 36% of respondents preferred straight fit jeans, 31% preferred comfort jeans while 24% preferred slim fit jeans, 5% preferred bell bottom

and rest 4% of the respondent preferred boot cut jeans. Therefore, it can be concluded that most of the girls preferred straight fit jeans because now a days it is latest in fashion.

Table No. 10: Preference Regarding Colour of Jeans**(n=100)**

S. No.	Preference Regarding the Colour of Jeans	Frequency	Percentage (%)
1.	Blue	50	50
2.	Black	35	35
3.	Military green	9	9
4.	Grey	2	2
5.	Other (specify)	4	4

The result related to above data indicates that the 50% of the respondents preferred blue colour jeans, 35% preferred black colour, 9% preferred military green colour and 2% of the respondents preferred grey colour jeans and remaining 4% of

girls chose any colour according to their own choice. This survey reveals that most of the girls preferred blue colour over other colours because of its originality of blue colour.

Table No. 11: Preferences Regarding Embellishments on Jeans**(n=100)**

S. No.	Preferences Regarding the Embellishments on Jeans	Frequency	Percentage(%)
1.	Applique/Patchwork	55	55
2.	Embroidery/ Sequins	18	18
3.	Metal studs/Crystals	23	23
4.	Painting/Lace	4	4

From the above table it can be elucidated that majority (55%) of girls preferred appliqué/patch work on their jeans followed by 23% preferred metal studs/crystals, 18% of the girls preferred embroidery/sequins, remaining 4% of

respondents preferred painting/lace on their jeans. Hence it can be concluded that the girls preferred variety of surface ornamentation on the jeans.

Table No.12: Preferences Regarding Style**(n=100)**

S.No.	Preferences Regarding the Style	Frequency	Percentage(%)
1.	Very low waist	20	20
2.	Low-Rise	22	22
3.	High waist	12	12
4.	Mid-Waist	30	30
5.	Designer jeans	16	16

The data from the above table revealed that the 30% respondents preferred mid-waist for regular wear, followed by 22% girls which preferred low-rise style, 20% of respondents preferred very low waist

jeans, 16% preferred designer jeans, and the rest 12% preferred high-waist. Hence it can be concluded that mid waist jeans is latest in trend which is most preferred by girls.

Table No. 13: Frequency for Purchase of Jeans in Year**(n=100)**

S.No.	Number of times girls purchase jeans	Frequency	Percentage(%)
1.	Once	9	9
2.	Twice	48	48
3.	Thrice	27	27
4.	More than thrice	16	16

From the above table it can be inferred that 48% girls purchased jeans twice in a year, followed by 27% girls purchased jeans thrice in a year, 16% respondents purchased more than thrice in a year.

And rest 9% girls purchase jeans once in a year. Therefore it can be concluded that the girls bought jeans more frequently according to the need.

Table No.14: Does Sales Promotion Influence Girls for Buying Jeans**(n=100)**

S. No.	Sales Promotion Influence Girls	Frequency	Percentage(%)
1.	Yes	77	77
2.	No	23	23

From the above table it can be elucidated that 77% respondents were influenced by sales promotion and 23% respondents were not at all influenced by sales promotion. Therefore it can be concluded that most of the girls influenced by

sales promotion because it build awareness among consumers regarding products and it motivates the existing customers for maximum purchase.

Table No. 15: Sales Promotion Tools Which Influences Girls**(n=100)**

S. No.	Sales Promotion Tool	Frequency	Percentage(%)
1.	Coupons	15	15
2.	Discounts	68	68
3.	Free-Samples /Free Gifts	13	13
4.	Scratch Card	4	4

From the above table it can be interpreted that majority(68%) of the respondents were influenced by discounts, followed by 15% of the respondents who were influenced by coupons in sales promotion tools, 13% of the respondents were influenced by free-samples/free gifts and rest 4% of the respondents were influenced by scratch card. It can be concluded that most of the girls were influenced by discounts and they waited with patience for the discount price and

good schemes for the purchase of branded garments.

Conclusion:

The consumers preference are changing rapidly and becoming highly diversified due to money inflation and increase in per capita income. In this high-tech scientific era most of the consumers want to get good products, having attractive schemes with shopping comforts. Trends in the apparel industry are changing rapidly. The results

of this study indicate that comfort is the most important attribute of apparel to women when making purchasing decisions, with style being the second most important attribute. It can also be concluded that there is a relationship between age and style as well as between age and brand. This will have implications for a manufacturer who is targeting a specific age group. The insight gained from this study could help apparel manufacturers and retailers to understand consumers' selection criteria when purchasing apparel.

On the basis of result it can be concluded that there was a significant difference between all the factors i.e. social-cultural, family income, situational, individual and the consumer buying behaviour of branded, non branded and both type of jeans.

References:

1. Blackwell, R.D., Miniard, P.W. & Engel, J. F. *Consumer Behaviour*, Orlando: Harcourt College Publishers, 18-19, (2001).
2. Blackwell, R.D., Miniard, P.W. & Engel, J. F. *Consumer Behaviour*, Mason:Thompson, 68-69, (2006).
3. Saddy, K. N., *Brand Loyalty*, *International Journal of Research in Commerce, IT & Management*, Vol No 1, Issue 1(June), ISSN2231-5756, 1-10,(2011).

Websites:

1. <http://www.denimsandjeans.com/category/denim-trends>
2. <http://www.jeansandaccessories.com/jeans-that-fit.html>
3. <http://www.fashionhub.com/fashion-jeans-that-catch-up-with-the-latest-trends>

A Comparative Study of Teacher's Professional Attitude Working In Government Secondary Schools

Anu

M.Ed. Student, SRM University, NCR Campus,
Modinagar, Ghaziabad (Uttar Pradesh)

Dr. Neeta Sharma

Assistant Professor, SRM University, NCR Campus,
Modinagar, Ghaziabad (Uttar Pradesh)



shodhshree@gmail.com

Education is a life-long process. The teachers play an important role in the process of education. An educational institution performs a significant function of providing learning experience to lead their students from darkness of ignorance to the light of knowledge. It is well known fact that the quality and extent of the learner achievement are determined primarily by teacher's competence, attitude, sensitivity and motivation. The teacher is required to acquire adequate knowledge, skills, interests and attitude towards the teaching profession. The teachers work has become more complicated and technical in view of the new theories of psychology, philosophy, sociology, modern media and materials. The teacher is the backbone of the educational system, maker of the mankind and architect of the nation. The educational system of our country is one poised for a leap forward towards the 21st century and is in the process of a remarkable transformation.

Teachers and Their Profession:-

The teacher is the most important factor of the teaching-learning process. The school's most important influence is the teacher. Teachers develop performance style characteristics to their ways of relating to the world, perceptually as well as cognitively. A person is, therefore, likely to act in a way that maximizes the use of his aptitudes. Similarly, teacher's positive attitude towards teaching and higher aspiration level determines his positive perception of the environments.

Teacher was compared to a God and treated as a combination of the Trimurti (Brahma, Vishnu and Mahesh) as well as the supreme one. The teacher occupies a pivotal position in the system of education. Without teacher the process of education is ineffective. He is the heart of the matter of this process. Education takes place through the interaction between the teacher and the taught. The true text book for the pupils is in their teacher. He trains the mind, cultivates manners and shapes the morals of the members of community at their most impressionable age. No educational reform is possible without the teacher. Teacher's function should not be confined in the classroom teaching

only rather he should be the role model before the students in all activities in and around the school.

The teacher should realize that it is not only necessary to be honest but one must make attempts to make others honest for a better society. On the other hand the discussion induced most of the teachers to love honesty which is a hidden value for developing positive attitude towards the profession of teaching. Teaching is an arrangement and manipulation of a situation in which a learner tries to overcome the learning problems, comprises a series of actions intended to facilitate learning as teaching is a multidimensional set of activities. The teachers, therefore, need to be competent in the content as well as in the way to deliver that content in order to facilitate learning. Thus knowing 'how' of teaching is as important as what of teaching.

An effective teacher development design should have an exhaustive measure of these factors so as to foster necessary skills and attitudes amongst prospective teachers. The exclusive weight age to knowledge alone should be dispensed with in favor of more activity oriented programs which have direct bearing on actual classroom situation (UNESCO, 2002).

Teaching profession is a noble profession. The University Education Commission (1948) emphasized the importance of the teacher and his responsibility. The aim of education is the all round development of child's personality. This need of education can be realized only when the teaching profession is effective. Effective teaching is the development of total attitude towards teaching profession.

Definitions of Teacher and Their Profession:-

NCTE (1998) in quality concerns in Teacher program. It is the teacher who is mainly responsible for implementation of the educational process at any stage."

Dr. S. Radhakrishnan says that "The teacher's place in society is of vital importance. He acts as the pivot for the transmission of intellectual traditions and technical skills from generation to generation, and helps to keep the burning lamp for civilization. He not only guides the individual, but also to say the

destiny of the nation."

Teaching Attitude:-

Teaching Attitude as a concept is concerned with a teacher's way of thinking, acting, and behaving towards his/her profession. The teacher by virtue of his position and role is one of the most important agent of a transmission and enrichment of culture in today's society. Having to deal with human material during the most impressionable period of life, the teacher is bound to make massive impact on personality, character, intellectual growth, attitude and values of future citizens. In view of their crucial role, it is important for the society to provide the adequate equipments to enable them to meet the challenges of their task and Indian society is no exception to it.

There is a close relationship between teachers' professional attitude and their performance. Attitude is defined as a relational mental state that directs the behaviors of an individual. Different individuals have different mental dispositions such as experiences, beliefs, desires, hopes, likes and dislikes and intentions their behavior is collaborative and disciplined. Teaching is a professional field. Teachers' beliefs, experiences and perceptions have deeper influence upon their teaching practices. Attitude is a strong component in human personality. In any profession negative or positive attitude affects the performance and the degree of realization of the goals.

Operational Definitions:-

Definition of Teacher and their Profession:

According to **Dr. Zakir Hussain**- *"The teacher is indeed, the architect of our future."*

Definition of Attitude: According to **Fishbein & Aznen**- *Attitude is an important concept that is often used to understand and predict people's reactions to an Education-* *"The teacher is the most important element in any educational object or change and how behavior can be influenced."*

Objective of The Study:-

To find out and compare between Male & Female

Teachers professional Attitudes working in Government Secondary Schools.

Hypothesis Of The Study:-

1. There is no significant difference in mean scores of Professional Attitudes of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.
2. There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Teaching Profession of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.
3. There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Classroom Teaching of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.
4. There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Child-centered Practices of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.
5. There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Educational Process of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.
6. There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Pupils of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.
7. There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Teachers of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.

Methodology of The Study

Keeping in view the Research Evidence, Objects

and Hypothesis, the Research Scholar found it suitable to go through Descriptive Survey Method.

Population

The population has been selected from Govt. & Private Secondary School Teachers in Ghaziabad District.

Sampling

The Research Scholar collected the 60 sample for the study and during the collection of Data; Research Scholar will satisfy technique for listing at population.

Tool

"Teachers Attitude Inventory" by S. P. Ahluwalia (SAGAR) tool will be use for the Study.

The teacher attitude inventory is a ninety item Likert instrument consisting of six subscales. Each subscale has fifteen statements that pertain to a particular aspect of prospective and practicing teacher's professional attitudes.

The six aspects dealt with in the inventory are attitude towards Teaching Profession, Class room teaching, Child centered Practices, Educational Process, Pupils and Teachers. Out of ninety items fifty six are in positive declarative form and thirty four of them are in negative form.

Statistical Technique:-

The Research Scholar has been used Mean, Median, Standard Deviation, and t-test as statistical technique in the Study.

Analysis And Interpretation Of Data:-

Ho1. There is no significant difference in mean scores of Professional Attitudes of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.

Table-1

Gender	N	Mean	S.D.	Degree of freedom	T-Test
Male Government Teachers	30	212.6	35.12	58	0.44*
Female Government Teachers	30	216.8	36.27		

*Not significant difference at 0.05 level

Interpretation:

The data given in the table 1 clearly indicate the professional attitude of teachers between two contrast groups the Male Govt. Teachers (N=30) score (M=212.6) Mean score point with (35.12) standard deviation, and the Female Govt. Teachers (N=30) score (M=216.8) Mean score with (36.27) standard deviation. The 't'-value

($t=0.44$) clearly indicates that both the groups have not significant difference in their professional attitude.

Ho2 There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Teaching Profession of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.

Table-2

Gender	N	Mean	S.D.	Degree of freedom	T-Test
Male Government Teachers	30	37	7.09	58	0.52*
Female Government Teachers	30	38	7.63		

*Not significant difference at 0.05 level

Interpretation:

The data given in the Table 2 clearly indicate the attitude towards Teaching profession of teachers between two contrast groups the Male Govt. Teachers (N=30) score (M=37) Mean score point with (7.09) standard deviation, and the Female Govt. Teachers (N=30) score (M=38) Mean score with (7.63) standard deviation. The 't'-value

($t=0.52$) clearly indicates that both the groups have not significant difference in their professional attitude towards Teaching profession.

Ho3 There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Classroom teaching of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.

Table-3

Gender	N	Mean	S.D.	Degree of freedom	T-Test
Male Government Teachers	30	34.5	6.99	58	1.42*
Female Government Teachers	30	37	6.60		

*Not significant difference at 0.05 level

Interpretation:

The data given in the table 3 clearly indicate the attitude towards Class-room teaching of teachers between two contrast groups the Male Govt. Teachers (N=30) score (M=34.5) Mean score point with (6.99) standard deviation, and the Female Govt. Teachers (N=30) score (M=37) Mean score with (6.60) standard deviation.

The 't'-value ($t=1.42$) clearly indicates that both the groups have not significant difference in their professional attitude towards Class-room teaching.

Ho4 There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Child-centered Practices of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.

Table-4

Gender	N	Mean	S.D.	Degree of freedom	T-Test
Male Government Teachers	30	37	6.24	58	0.60*
Female Government Teachers	30	38	6.76		

*Not significant difference at 0.05 level

Interpretation:

The data given in the table 4 clearly indicate the attitude towards Child-centered practices of teachers between two contrast groups the Male Govt. Teachers (N=30) score (M=37) Mean score point with (6.24) standard deviation, and the Female Govt. Teachers (N=30) score (M=38) Mean score with (6.76) standard deviation. The t'-value (t=0.60) clearly indicates that both

the groups have not significant difference in their professional attitude towards Child-centered practices.

Ho5 There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Educational Process of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.

Table.5

Gender	N	Mean	S.D.	Degree of freedom	T-Test
Male Government Teachers	30	36	6.77	58	0.53*
Female Government Teachers	30	37	7.63		

*Not significant difference at 0.05 level

Interpretation:

The data given in the table 5 clearly indicate the attitude towards Educational process of teachers between two contrast groups the Male Govt. Teachers (N=30) score (M=36) Mean score point with (6.77) standard deviation, and the Female Govt. Teachers (N=30) score (M=37) Mean score with (7.63) standard deviation. The t'-value

(t=0.53) clearly indicates that both the groups have not significant difference in their professional attitude towards Educational process.

Ho6 There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Pupils of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.

Table-6

Gender	N	Mean	S.D.	Degree of freedom	T-Test
Male Government Teachers	30	33	7.06	58	0.57*
Female Government Teachers	30	34	6.59		

*Not significant difference at 0.05 level

Interpretation:

The data given in the table 6 clearly indicate the attitude towards Pupils of teachers between two contrast groups the Male Govt. Teachers (N=30) score (M=33) Mean score point with (7.06) standard deviation, and the Female Govt. Teachers (N=30) score (M=34) Mean score with (6.59) standard deviation. The 't'-value (t=0.57)

clearly indicates that both the groups have not significant difference in their professional attitude towards Pupils.

Ho7 There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Teachers of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools.

Table-7

Gender	N	Mean	S.D.	Degree of freedom	T-Test
Male Government Teachers	30	36	8.75	58	1.00*
Female Government Teachers	30	34	6.55		

*Not significant difference at 0.05 level

Interpretation:

The data given in the table 7 clearly indicate the attitude towards Teachers between two contrast groups the Male Govt. Teachers (N=30) score (M=36) Mean score point with (8.75) standard deviation, and the Female Govt. Teachers (N=30) score (M=34) Mean score with (6.55) standard deviation. The 't'-value (t=1.00) clearly indicates that both the groups have not significant difference in their professional attitude towards Teachers.

Findings

On the basis of the analysis of data presented in the fore going pages the findings are systematically arranged here in accordance with the hypotheses as mentioned below:

Ho1 "There is no significant difference in mean scores of Professional Attitudes of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools" had been accepted even at the 0.05 level of significance.

Obtainer's value is less than the table 't' value at 0.05 level of significance. Hence the null hypothesis has been accepted. It means that male and female teachers working in Government Secondary Schools not differs significantly in

relation to their professional attitude.

Ho2 "There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Teaching Profession of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools" had been accepted even at the 0.05 level of significance.

Obtainer's value is less than the table 't' value at 0.05 level of significance. Hence the null hypothesis has been accepted. It means that male and female teachers working in Government Secondary Schools not differs significantly in relation to their professional attitude towards teaching profession.

Ho3 "There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Class-room teaching of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools" had been accepted even at the 0.05 level of significance.

Obtainer's value is less than the table 't' value at 0.05 level of significance. Hence the null hypothesis has been accepted. It means that male and female teachers working in Government Secondary Schools not differs significantly in relation to their professional attitude towards Class-room teaching.

Ho4“There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Child-centered Practices of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools” had been accepted at the 0.05 level of significance.

Obtainer's value is less than the table't' value at 0.05 level of significance. Hence the null hypothesis has been accepted. It means that male and female teachers working in Government Secondary Schools not differs significantly in relation to their professional attitude towards Child-centered practices.

Ho5“There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Educational Process of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools” had been accepted even at the 0.05 level of significance.

Obtainer's value is less than the table't' value at 0.05 level of significance. Hence the null hypothesis has been accepted. It means that male and female teachers working in Government Secondary Schools not differs significantly in relation to their professional attitude towards Educational process.

Ho6“There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Pupils of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools” had been accepted even at the 0.05 level of significance.

Obtainer's value is less than the table't' value at 0.05 level of significance. Hence the null hypothesis has been accepted. It means that male and female teachers working in Government Secondary Schools not differs significantly in relation to their professional attitude towards Pupils.

Ho7“There is no significant difference in mean scores of Professional Attitude towards Teachers of Male & Female Teachers working in Government Secondary Schools” had been accepted even at the 0.05 level of significance.

Obtainer's value is less than the table't' value at 0.05 level of significance. Hence the null

hypothesis has been accepted. It means that male and female teachers working in Government Secondary Schools not differs significantly in relation to their professional attitude towards Teachers.

Conclusion

This study confined to study of Teacher's professional Attitude at Secondary level. It was found that there was no significant difference in Male and Female Government teachers at secondary level in relation to their Professional Attitude.

References

1. <http://en.wikipedia.org>
2. Belagali HV (2011). *A Study of Teachers Attitude towards Teaching Profession of Secondary Schools in relation to Gender and Locality. International Referred Research Journal. September, Vol.3, Issue-32*
3. Mohanty J (2003). *Teacher Education. New Delhi: Deep and Deep Publications Pvt. Ltd.*
4. Mohanty J, Nayak BK (1996), *Modern Trends and Issues in Education, Cuttack: Takshyasila.*
5. *National Policy of Education (1986).*
6. *NCTE (1998) in Quality Concerns in Secondary Teacher Education.*
7. Rao K, Sumita (2012). *Study of the Attitudes of Secondary School Teachers Towards Teaching Profession. Golden Research Thoughts, Volume 2, Issue.3, Sept.*
8. *Report on Kothari Commission (1964-66).*
9. *Report on The University Education Commission (1948).*

Democratic Socialization (A Specific Study in The Context of Pakistan)

Sanju Sharma

Research Scholar, University of Rajasthan, Jaipur



shodhshree@gmail.com

The year 1789 is a momentous one in modern political history. French revolution and U.S. federal constitution marked a new beginning of a new era. Up until now aristocracy and monarchy were regarded as guardian of order. But now people wanted to take control of their political lives out of the hands of hereditary or imperial elites. And aftermath of the II World War, the idea of democracy has been so universally popular, that today no country is ready to admit that they are undemocratic. Everyone claims to democratic be it liberal democracy of the industrial west, people's democracy in the community party led political system or developing country's so called basic or quasi democracy. Even dictators carry their elitist and exclusionist nature under democratic label.

In present paper ,the democratic socialization of a specific country "Pakistan" has been attempted to explore. Pakistan's Quad - i - azam Muhammad Ali Jinnah, had a firm faith in democracy. He remarked as early as 1943, that "democracy is in our blood, it is in our marrows".

Objective Resolution of 1949 stated Pakistan to be democratic but democracy was never allowed to flourish in Pakistan. Time and again democracy has been strangled by the periodic imposition of martial law. Even the best of democratic leadership elected with overwhelming electoral support had behaved as the worst dictator. For the people of Pakistan therefore, the choice was not between democracy and dictatorship in the institutional sense, but between bad governance and good governance, whosoever delivered it. Constitution is the heart of democracy, but for nine year Pakistan could not formulate a constitution for themselves. Even then there was no stability. Pakistan in its history had three constitution. And even these constitutions, unconstitutional amendments were done time and again for the sheer profit of rulers. In Pakistan, the rulers, political parties and leaders and the civil society groups support democracy at the normative or conceptual level. However,

there are serious problems with these principals at the operational level in Pakistan. A conflict between the professed democratic values and the operational realities of authoritarianism and non-sustainable civilian institutions and processes is the main feature of Pakistani political experience.

Pakistan's political history can be divided into different phases with reference to the dominant style of governance and political management.

- (1) Civilian Political Government-August 1947
October 1958-December 1971-July 1977
- (2) Direct Military Rule. October 1958-
June 1962 March 1969-Dec 1971-July 1977
Dec 1985 October 1999-November 2002
- (3) Selective Use of Democracy by the Military
(Post Military Rule)-June 1969 March 1969-
March 1985- November 1988
- (4) Military's influence from the sidelines on the
Policy Making Under Civilian Governments
December 1988-October 1999
- (5) Military's Direct Involvement in Power
Management After the End of Military Rule;
Constitutional and Legal Role for the
Military-November 2002-2008

The present paper has been cut down into following paragraphs to understand the democratic socialization of Pakistan. Through these points, the level of Pakistan democracy can be easily evaluated.

- A democratic country should be secular whereas Pakistan is under dark clouds of religious fundamentalism. It states itself as an Islamic state but what constitutes an Islamic state, Pakistan itself could not find out. Pakistan rode the Islamic tiger for deviating the concentration of people from bad governance but now it does not know how to dismount it. A predominant majority of Pakistanis agree that the Pakistani political system must have some

relationship with Islam. However there are strong differences on the precise nature of relationship between Islam and polity.

- Pakistan, like India, adopted the Government of India Act, 1935 with some changes to meet the requirements of an independent state as the Interim Constitution, 1947.

The quality of Political leadership goes a long way to shape the nature of political system. If political parties don't engage in interest articulation and respect democracy and constitution norms, then they adversely affect the government. This is precisely what is happening in Pakistan. Political harmony and democratic evolution is facilitated primarily by pol. parties and leaders. They are important instruments of interest articulation and aggregation and serve as vehicles of pol. Mobilization. But in Pakistan, pol. Parties have traditionally been weak and unable to perform their main function in an effective and meaningful manner.

Pakistan was coping with initial administration and humanitarian problems, Mohammad Ali Jinnah, the father of the Nation, died in September, 1948/This set in motion the political trends that undermined the already weak political institutions and fragmented the political process. Most of post Jinnah political leaders had regional and local stature and did not have a nation wide appeal which regionalized and localized politics. This made it difficult for the political parties and leaders to pursue a coherent approach towards the problems and issues of the early years. They were unable to develop consensus on the operational norms of the polity and took almost nine years to frame a Constitution. By the time the Constitution was introduced (March 23, 1956) a strong tradition of violation of parliamentary norms was established. The effective power had shifted to the governor general/president. He manipulated the divided pol. forces and decided making or unmaking of government.

- Democracy in Pakistan faced a host of difficulties which did not let the democratic principles, institutions and processes develop firm roots in the polity. Pakistan started with the parliamentary system of governance but the legacy of institutional imbalance and authoritarianism, problems encountered in the setting up of the new state, the external security pressures and the fear of the collapse of the State adversely affected the prospects of democracy. The essence of the Parliamentary system is that the leader of the majority party is invited to form the government. But, in Pakistan, the prime minister was usually appointed first, then he was owned by the majority party. The struggle for power between Benazir and Sharif led to a very personalized kind of politics. Elections are an important mechanism for functioning of democracy. But Pakistan did not hold its first national election until 1970.
- Armed forces are only on instrumentality to secure the democratic functions of the state from external and internal threats but in Pakistan the bureaucratic military elite played havoc with national institutions and hampered the democratic process. Whenever the army and bureaucratic set up felt that its power and privilege were being threatened, it would either dismiss the legislatures or split the political parties. Ayub Khan's introduced Presidential constitution was replaced by another general, Yahya Khan, in March 1969, who abrogated Ayub's 1962 constitution and imposed martial law in Pakistan. On Dec 20, 1971 General Yahya Khan had to quit and hand over power to civilian leader Zulfikar Ali Bhutto. On July 5, 1977 Military led General Zia-ul-Haq, chief of Army Staff dislodged Bhutto and assumed power. His martial law from 1977 to

1985 was the longest period of direct military rule in Pakistan. Later when power came in the hands of civilian leaders, then also the top commanders monitored the performance of these govt. and made their views on political and security matters. The generals were prepared to stay on the sidelines provided their professional and corporate interests were not threatened by the civilian leaders. Therefore, governance for Benazir Bhutto (Dec 1988-Oct 1990), (Oct 1993-Nov 1996) and Nawaz Sharif (Nov 1990-July 1993, Feb 1997-Oct 1999), was a delicate balancing act between the civilian govt and the top brass of military.

- In Pakistan, Bureaucracy openly play political role. One blallant example is of Prime Minister Nazimuddin's removal by Governal General Gulam Muhammad in 1953. Despite the fact, Nazimuddin had clear majority.
- Democracy demands judiciary to be independent, free and fair. But in Pakistan the situation is polar opposite. Judicial power began to erode in 1965, when the then governer general dissolved the constituent Assembly against constitution norms, but court declared it lawful. In Pakistan the judiciary is generally filled with men who support ruling party. Inconvenient and interfering judges are quickly get rid of.

Well, these points are enough to prove that Pakistan is no more than a classic oligarchy.

Democracy is not merely the theory of divine rights of the majority rather it is a system of tolerance and co-operation. It implies the willingness to persuade and to be persuaded. Vigorous party competition and regular rotation of parties, widespread respect for civil liberties, multiple channel of political communication are necessary for democracy. If any of these are missing, then it is not

democracy rather it is self- adopted version of democracy of the country.

I would conclude with this point that enough damage has been done to this term. Everyone uses it according to their own comfort. But now we should be really particular when we uses these term. It should be in concrete and specific explanation.

References:

1. Birch, H. Anthony. *"The concepts and theories of modern democracy"* Published by Routledge, 1995.
2. *Comparing Democracies 2: New challenges in the study of elections and voting* edited by Lawrence Ledue, Richard G. Niemi & Pippa Norris, published by Sage Publication, 2002.
3. *The Millennium Series, Pakistan Political Roots & Development, 1947-99* Safdar Mahmood Oxford University Press, 2000.
4. *Contemporary Pakistan: Political Processes, Conflicts and crises* by Veena Kukreja by Sage Publication, New Delhi, 2003.
5. *Pakistan Political System in crises emergence of Bangladesh* by S.P. Verma, Virendra Narain, by Brookings Institution, 2004.
6. *The Idea of Pakistan* by Stephen Philip Cohen.

Effectiveness of Developed and Standardized Multimedia Package on Female Foeticide in Terms of Knowledge Gain and Attitudinal Change

Alka Parihar

Guest Faculty, JNVU, Jodhpur

Archana Raj Singh

Programme Coordinator, Krishi Vigyan Kendra, Bikaner



shodhshree@gmail.com

Technology is not neutral in value. It can be used to serve society and it can also be used to perpetuate biases, exploit society and even help in its extermination. The misuse of medical technology for sex determination and female foeticide is one such example. If proof is needed of how available new technology in the hands of mercenary professionals can have disastrous consequences for society, one has to look no further than the killing of the female foetus in India.

Women are both worshipped and accorded a highly revered status in our Indian society. Yet the progressive technological developments cannot hide one of the worst impending gender crises the society is facing i.e. female foeticide, which ultimately is resulting into the rapid depletion of women population. The declining sex ratio could result in a demographic and social disaster. In such a situation it is the primary duty to provide proper information to the general public about the declining sex ratio and its affects in India.

Information and communication technologies are powerful tools for the effective dissemination of information or knowledge. Multimedia is one such tool that combines two or more media, integrated to form an informational or instructional program. It formulates a world of multisensory, giving "all at once experience". Information is power. Communication technologies are the means through which the society gains power. Higher the power, higher is the socio, politico or economic advantage for an individual or a society or any nation. But having knowledge is not enough, its applicability is more important. The better utilization of knowledge only can lead to development.

Realizing the importance of above aspects, the present study was conducted with the following specific objectives: to study the existing knowledge and attitude of rural women on female foeticide, to develop and standardize multimedia package on female foeticide, to assess the effectiveness of the developed multimedia package in terms of knowledge gain, and attitudinal change.

Methodology:

1. Identification of existing knowledge and attitude of rural women

Sri Ganganagar district was selected for the study as it comes in the list of bottom five districts in relation to sex ratio. Sri Ganganagar district consists of seven panchayat samities viz., Karanpur, Sri Ganganagar, Sadulshahar, Padampur, Raisinghnagar, Anupgarh and Suratgarh. Among these panchayat samities, Sadulshahar has a very low figure of sex ratio and was thus selected for the study. Further there is 32 gram panchayats in Sadulshahar panchayat samiti, from which two gram panchayats viz. Lalgarh jatan and Mamadkheda were selected randomly by chit method. From these two gram panchayats, a random selection of four villages was done i.e. two villages from each gram panchayat, viz. lalgarh jatan 1 and lalgarh jatan 2 from lalgarh jatan, and mamadkheda and gadarkheda from mamadkheda. Thereafter, sixty rural women were selected purposely from each village, who so ever was interested, making a total sample of 240 respondents.

A questionnaire comprising of background information, knowledge and attitude statements was developed, to ascertain the existing knowledge and attitude of the rural women. Background information included information related to age, education, marital status, family type, family size, family occupation, type of housing, landholding, family income, mass media exposure and training.

A knowledge test and attitude scale was developed. It was sent to ten experts for evaluation and accordingly necessary modifications were done. Knowledge test comprised of 22 statements and the total range of score was 0-63. The attitude scale consisted of 18 statements, rated on a five point scale, namely, strongly agree, agree, undecided, disagree and strongly disagree with a score of 5, 4, 3, 2 and 1 for positive statements and 1, 2, 3, 4 and 5 for negative statements. Reliability and validity were also checked. Reliability of knowledge test and attitude scale

was found to be 0.79 and 0.72, respectively, which was significant, indicating the internal consistency of the test. Validity of knowledge test and attitude scale was found to be 0.89 and 0.85, respectively.

2. Effectiveness of Multimedia Package

A multimedia package on the selected messages in electronic form i.e. CD-ROM, and in print form i.e. booklet, pamphlet, leaflet, flashcard, chart and poster, were developed. The information was presented in the form of simple messages along with relevant illustrations/ photographs and brief introduction for better understandability. The developed multimedia package on female foeticide was standardized for its reliability, validity and field applicability.

Effectiveness of standardized multimedia package was measured in terms of knowledge gain and change in attitude. The developed multimedia package was exposed to the same 240 respondents of Sri Ganganagar district, in three days training. Fifteen days after the training a post-test was done using same knowledge test and attitude scale. For ascertaining impact of multimedia package paired "t" test was used.

Major findings:-

- 1. Background Information of Rural Women**
 - More than fifty per cent of the respondents (52.50%) belonged to lower middle age group followed with young age group (34.58%). 9.58 per cent respondents were coming under the category of upper middle age group and only 3.33 per cent respondents belonged to old age group.
 - Majority of the respondents were illiterate (47.08%), followed with 18.75 per cent respondents who were able to read and write. 17.50 per cent respondents were educated up to primary level, followed with respondents having middle school education (8.75%), high school education (5.42%) and graduate (2.50%).
 - In terms of marital status majority of the

respondents were married (74.58%). 16.25 per cent respondents were unmarried and 6.67 per cent of the respondents were widow (6.67%). 2.50 per cent of the respondents were divorced/ separated.

- Majority of the respondents (65.00%) belonged to OBC category. 21.25 per cent of the respondents were SC/ST and 13.75 per cent of the respondents belonged to upper middle caste.
- In relation to family occupation more than fifty per cent of the respondents had farming as their main occupation (58.75%), followed by farm labor (32.92%), artisan/ craftsman (4.58%) and business/ service (3.75%).
- Major number of respondents (79.58%) belonged to joint family and 20.42 per cent respondents were having nuclear families.
- Majority of the respondents (62.92%) had large family size, followed by medium family size (21.25%) and small family size (15.83%).
- Majority of the respondents (40.42%) possessed 5.1 to 10 acres of land, followed by 22.08 per cent respondents having 2.6 to 5 acres of land. 18.33 per cent respondents had 1 to 2.5 acres of land, followed by 13.75 per cent respondents possessing no land. Only 5.42 per cent respondents had more than 10 acres of land.
- Majority of the respondents i.e. 70.42 per cent of the respondents had mixed housing. 25.83 per cent of the respondents had *katchha* housing and only 3.75 per cent of the respondents had *pucca* housing.
- In relation to family income, majority of the respondents (71.25%) were falling in the middle category of family income, followed with 17.08 per cent of the respondents belonging to the lower category of family income. Only 11.67 per cent of the respondents belonged to the higher category of family income.

➤ In terms of mass media exposure majority of the respondents i.e. 73.33 per cent had medium exposure to mass media. 15.00 per cent of the respondents had higher exposure to mass media and only 11.67 per cent of the respondents were having lower exposure to mass media.

➤ Only 10.83 per cent of the respondents had undergone some sort of training, and the others i.e. 89.17 per cent of the respondents had never attended any kind of training.

2. Existing knowledge and Attitude of Rural Women

➤ Majority of the respondents (69.58%) had medium level of knowledge with mean per cent score of 35.92. Further, 18.33 per cent respondents had low level of knowledge with mean per cent score of 25.58 and only 12.08 per cent respondents had high level of knowledge with mean per cent score of 50.30.

➤ Majority of the respondents (51.67%) had favorable attitude i.e. they did approve of female foeticide. Further 21.25 per cent of the respondents had highly favorable attitude followed with 17.92 per cent of the respondents having neutral attitude. Only 9.17 per cent of the respondents had unfavorable attitude i.e. they did not approve of female foeticide. No respondents were found in the category of highly unfavorable attitude towards female foeticide.

Both existing knowledge and attitude of the respondents in relation to female foeticide was found to be low. Traditional outlook towards life and lack of exposure were the main reasons behind the low levels of knowledge and favoring attitude towards female foeticide.

3. Effectiveness of multimedia package on rural women in terms of knowledge gain and attitudinal change Knowledge gain of rural women regarding female foeticide

➤ In post-test majority of respondents (71.25%) had medium level of knowledge with mean

per cent score of 63.56, followed with 17.08 per cent respondents having high level of knowledge with mean per cent score of 80.18 and only 11.67 per cent respondents had low level of knowledge with mean per cent score of 49.60.

- Majority of respondents (75.00%) had medium knowledge gain with mean per

cent score of 25.66, followed with 17.50 per cent respondents having high knowledge gain with mean per cent score of 49.29 and only 7.50 per cent respondents were falling in the category of low knowledge gain with mean per cent score of 15.17.

Table I. Overall Gain in Knowledge of The Respondents

Items	Mean Percent Score	Calculated 't' Value
Pre-Test	35.76	39.88**
Post-Test	64.77	
Differential Gain	29.01	

**** Significant at 0.01 level of significance**

Table (I) depicts that there was significant difference in the pre and post-test scores of the respondents as calculated "t" value (39.88) was found to be significant at 1 per cent level of significance, indicating that there was significant gain in knowledge after exposure of developed multimedia package. The initial knowledge of the respondents was poor as the mean per cent score during pre- test score was only 35.76. Significant improvement in the knowledge of respondents was found as a result of exposure of multimedia package as the mean per cent score increased to 64.77 with gain in knowledge of about 29.01. The results confirm with the findings of Valdez et.al. (2002), and Patel and Patel (2006).

Attitudinal change of rural women regarding female foeticide

- In post-test majority of the respondents

(39.17%) had favorable attitude towards female foeticide followed by 28.75 per cent of the respondents having a neutral stand. Further, 23.75 per cent of the respondents were having unfavorable attitude with respect to female foeticide and 8.33 per cent respondents were having favorable attitude towards female foeticide. No respondents were found in the category of highly unfavorable attitude.

- Table (II) shows that there was significant difference in the pre and post-test scores of the respondents as calculated 't' value (37.919) was found to be significant at 1 per cent level of significance indicating significant positive change in attitude after exposure of developed multimedia package.

Table II. Overall change in attitude of the respondents

Items	Mean Percent Score	Calculated 't' Value
Pre-Test	33.91	37.919**
Post-Test	51.68	
Differential Gain	17.77	

**** Significant at 0.01 level of significance**

The initial attitude of the respondents was not so favorable as their mean per cent score during pre-test was 33.91. Significant improvement in the attitude of respondents was found as a result of exposure of multimedia package as the mean per cent score increased to 51.68 per cent with change in attitude of about 17.77. The result is in agreement with the finding of Bishnoi (2006).

Conclusion

From the above findings it can be concluded that majority of the rural women belonged to lower middle age group, were illiterate, were married, belonged to OBC category, had farming as their main occupation, belonged to joint family, had large family size, possessed 5.1 to 10 acres of land, had mixed housing, belonged to middle family income, had medium exposure to mass media and had never attended any kind of training.

Both existing knowledge and attitude of the respondents i.e. rural women was found to be low, confirming the need of making the rural women aware about the inhuman practice of female foeticide.

Thereafter a multimedia package in the form of electronic media i.e. CD-ROM and print media i.e. booklet, pamphlets, leaflets, flashcards, chart and

posters was developed on the selected messages related to female foeticide.

The developed and standardized media package was exposed to the rural women and significant improvement in the knowledge and attitude of respondents was found as a result of exposure to multimedia package.

References:

1. Bishnoi, A. (2006). "Development and Standardization of Modular Multimedia Package for Social Empowerment of Women." Unpublished Ph.D Thesis, CCSHAU, Hisar, Haryana.
2. Patel, A.A. and Patel, D.D. (2006). "Education through multimedia among Agricultural Diploma School Students: An impact Study". *International Journal of Education and Development using Information and communication Technology*, Vol.2, Issue 1, pp.4-10
3. Valdez, A., Banerjee, K., Ackerson, L. and Fernandez, M. (2002). "A Multimedia breast cancer education intervention for low income Latinas". *Journal of Community Health*, 27 (1): pp.33-51

The Voice of Dalits: A Thematic Study of "Joothan: An Untouchable's Life"

Gulab Singh Jatav

Asst. Professor, Government SMS PG College,
Shivpuri (Madhya Pradesh)



shodhshree@gmail.com

The origin of the word 'dalit' was become from the Sanskrit word 'dal'; it means to crack open, split, grind, and crush etc. This word was applied for a large group of people who constitute about sixteen percent of total population of India. It means that sixteen percent population of India was at a bottom level of social pyramid of India; they worked as a shoe-maker, road-cleaner, latrine-cleaner, and other neglected hard worker; notwithstanding, they were compelled to live too poor life; even they had no right to use the public ponds and wells, the public roads; the public schools, the public hospitals and the public playgrounds; even they could not choose a self-liking occupation for themselves; because, their traditional caste based occupations were decided by their birth in Indian social system.

After long severe struggle, some social workers like Jotiba Fule, Savitri Bai Fule, Dr. B. R. Ambedkar and some others tried to emancipate laces of the dalits through their various social reform movements; the dalits were legally abolished by the Indian constitution from that life of servitude on November 26, 1949. After that, Omprakash Valmiki's "**Joothan: An untouchable's Life**" is the first text which resounded the voice of dalits as a well-wisher in independent India.

Because of an influence of social reformers and constitutional rights, they tried to enroll their children into schools, but upper castes did not like it, and oppressed their children into schools in many ways. Shri Omprakash Valmiki, the writer of Joothan is a vivid example of this statement. His father was worried about the future of his child because he belonged to chuhra caste. Only one thing was echoing in his mind that the children of shudras like chuhra, chamar, and jhinwar caste can only sweep roads, clean the cattle barns, dispose the dead animals, work into fields during harvesting seasons and perform the hard and neglected labour work for upper caste according to

varn system of Indian society. But his father was determined; by hook, by crook he enrolled his child in a village school. When he went to school, teachers did not teach him; but the teachers treated with him just like Dronacharya. In the place of studying, he had to sweep all the floor of school and also entire playground. Tyagi's boys did not sit him in front of black board; so he sat in a corner. One day, he sat on a bench, then Tyagi boys beaten him violently, addressed him caste based abuse like 'abey chuhre ke,' and also complained to the teacher about this incident immediately. On the basis of their complaint, the teacher punished him harshly and warned him for further, and said abey chuhre ke, if you want to study here continuously, never sit on any bench. Further, the teacher ordered him to sweep the whole playground as a punishment in too hot days, but was not easy for him because, he was a small boy; so he started weeping to hear such a cruel punishment. But it was an order of the teacher, so he started to sweep the ground. Fortunately, while he was sweeping the ground, his father was passing by from there, and he saw the tears in eyes of his child, he became anger; snatching the broom and blazing his eyes, he came into school and said loudly: who is such type a cruel teacher? Who did my child tortured? All the teachers stepped out, including the headmaster, who called his father's name and roared back; take him away from here; otherwise, we shall have to break your bones. His father was alone, so on his way out, he declared in a loud voice; I am leaving now, but this chuhre ka will study right here, and not just him, but there will be coming more after him. His father's courage and fortitude left a deep and decisive mark on his boy's personality. His father tried to stand to other upper caste people as pradhan of the village against the headmaster and teachers, but he failed. Then, he collected the same caste people and struggled for the educational right of

their children and he succeeded. The following lines of "**Joothan: An Untouchable's Life**" support the voice of dalits for an education:

"The third day I went to the class and sat down quietly. After a few minutes the headmaster's loud thundering was heard: 'Abey Chuhre ke, motherfucker, where are you hiding ... your mother ...' I had begun to shake uncontrollably. A Tyagi boy shouted, 'Master Saheb, there he is, sitting in the corner.' The headmaster had pounced on my neck. The pressure of his fingers was increasing. As a wolf grabs a lamb by the neck, he dragged me out of the class and threw me on the ground. He screamed: 'Go sweep the whole playground ... Otherwise I will shove chillies up your arse and throw you out of school.' Frightened, I picked up the three-day-old broom [now only a cluster of] thin sticks. Tears were falling from my eyes. I started to sweep the compound while my tears fell. From the doors and windows of the schoolrooms, the eyes of the teachers and the boys saw this spectacle. Each pore of my body was submerged in an abyss of anguish"

During that period, the living standard of the dalits was very poor in the country. The dalits were forced to live outside the village or town or city so that the people of upper caste could reserve from the dalits. A high wall and a pond segregated their bricks houses in the village from the dalit basti. Men and women of upper caste of all ages came out and used the edge of the pond as an open- air lavatory. They sat to open their private and secret parts across the houses of the dalits in the light of the day. The houses of dalits were situated the nearest of rubbish-places of the village. There was muck strewn everywhere. The strong and unpleasant smell was so overpowering that one would understand within a minute. The wandering of pigs and other idle

animals in narrow lanes, naked children, dogs, cats and daily fights among them and others were the environment of dalit basti. The rainy seasons were very hard for them because their narrow streets filled up with muddy water mixed waste material of the people and the animals. Flies and mosquitoes thrived. Bodies of everybody were seen very weak and developed itchy sores. There was a one well for drinking water in a village which had no guard wall around it, so it filled up with various long and small poisonous and non poisonous worms during the rainy seasons. They had to drink that dirty and polluted water because they had no other choice. They were not allowed to use the well of upper caste. Their houses were less heightened, small and made of clay. The roofs of their houses were so weak that leaked in rainy seasons. Sometimes during heavy rains: walls and ceiling of their houses were collapsed; they had no security like insurance, so they had to rebuild themselves.

Upper caste people loved with all the animals, but touching to lower caste by Tyagies was not possible. They were too frightened by Tyagies and other upper caste people that they could not demand their wages. On many times, they had to satisfy taking joothan 'on the place of money or grain' which were provided by women of Tyagies like old chapattis and poories. It is remarkable here that his father, mother, Omprakash and his friends encouraged coming out from that critical situation. Now, the voice of protest against Tyagies began to emerge in our county. The dalits began to refuse the wageless labour with the activities of writer's family. The "**Joothan: An Untouchable's Life**" by Omprakash Valmiki is an important literary work in which the incident happens between his mother and Shukhdev Singh Tyagi, motivated and also motivate to all the dalits for protesting such slavery. The following lines of the "**Joothan: An**

Untouchable's Life" are present in this support:

"When all the people had left after the feast, my mother said to Shukhdev Singh Tyagi as he was crossing the courtyard to come to the front door; "Chaudhary ji, all of your guests have eaten and gone.....please put something on a leaf plate for my children. They too have waited for this day."

Shukhdev Singh Tyagi pointed at the basket full of dirty leaf plates and said," you are taking a basket of joothan. And on top of that you want food for your children. Don't forget your place, chuhris, pick up your basket and get going,"

Those words of Shukhdev Singh Tyagi penetrated my breast like a knife. They continue to sing me to this day.

That night the mother goddess Durga entered my mother's eyes. It was the first time that I saw my mother get so angry. She emptied the basket right there. She said to Shukhdev Singh, "pick it up put up inside your house, feed it to the bridegroom's guest's tomorrow morning.' She gathered me and my sister, and left like an arrow. Shukhdev Singh had pounced on her to hit her, but my mother had confronted him like a lioness, without being afraid.

After that day Ma never went back to his door. And this incident she also stopped taking their joothan."

A lot of the dalit's young boys died in young age due to the lack of proper medication, their poverty and problem of untouchability in the Indian society and their women in large number had to live as widows from young age. The hindu tradition did not allow them for remarriage; indeed, they had to live alone in the village. Consequently, they had to become the victim of rape and often, they had to listen many types of contemptuous reproach and taunts by cruel

people of hindu society. Once time, writer's elder brother, Shukhbeer returned from his work. His body was hot due to fever; he slept on bed for a week, but could not cure and died. His all family was scatterd, even his father was broken by this tragedy and his mother was faint for an interval. His sister in law became widow in young age. Everything was intolerable for them. After some time, his next elder brother became young and joined a construction company. It is remarkable that the father of sister in law married with next brother, Jasbir in the presence of some relatives and elders of village. All of his family accepted this, and broken an old tradition. He began a new tradition which saved not only the lives of myriad widows, but also lacs of widows. He writes in "Joothan" as follows:

"Unlike the Hindu tradition, we did not see the widow marriage negatively. In the presence of relatives and village elders, the of my widowed sister in law betrothed her to Jasbir, the brother who was the next in line to Shukhbeer. Everyone in our community accepted this arrangement."

Two big malpractices were in vogue in India, viz borrowing money on high interest from Tyagies, and salaaming tradition, by which the dalits were affected very much.

The rate of interest was so high that one was only able to pay the amount of interest till whole life and principle amount remained. Everybody borrowed money, so nobody could afford the protest against any injustice, done by them. Honour and prestige had no meaning for them. At last, their children had to accept bonded labour to Tyagies for life long. The father of Omprakash had borrowed some money to Teja Tyagi on an occasion of his brother's marriage. Tyagi, Teja was fond of an epicure, so his father often offered him pork and country liquor along with money. But writer did not like it, by hook by crook they

paid his loan, as well as he took oath for eluding it in future. That he mentioned in "Joothan", is as follows:

"Pitaji had borrowed money from him once. He offered Teja Taga country liquor that day, And pork, sucking at the pork slices, his faces had recembled a spotted dog. His eyes red from the drink, looked satanic. His interest rates were so high that one could spend a whole life time, paying the interest and the principle would remain untouched."

According to the custom of salaam, the bridegrooms of the dalits had to go for salaaming door to door of upper caste people. It was very hard task which was performed to insert the inferiority complex in the mind of the dalit's bridegroom. Omprakash Valmiki describes the story of Hiram's marriage in "Joothan: An Untouchable's Life". He had seen all the custom of that marriage closely. One of which was salaam custom which was unforgettable for him. After forbidding to go with him for this custom, his friend, Hiram insisted him, then he had to go with him. Hiram's mother in law took them door to door on the time of vida where she worked. Men and women of upper caste were asking some questions like: what is your name? What do you do? When they answered, that we study in class 9th, knowing that, those men and women were commenting about their caste like chuhre ke, chamar ke study o! Good. He required some drinking water during that performing custom, but anybody did not offer me drinking water. He disappointed very much and felt inferiority. Seeing that incident, and returning his home, he asked his father: Why do we perform this trivial custom? Why do we break this custom? What is meaning it? Then his father consoled him, and said, we will break this custom in our house. According his commitment, his father did not perform in the marriage of his son, Janesar and daughter. As he describes in the following lines of

"Joothan: An Untouchable's Life":

Pitaji was listening to me quietly, munshiji, sending you to school has been success. I too have understood your point. We will now break this custom."

Pitaji really broke the custom in our house. My brother Janesar and his wedding guests went to Rojopur, near Luxor. Pitaji refused categorically, saying. "My son will not go salaaming". At my sister's wedding too we did not allow our brother in law to go for salaam. We told everybody frankly: whosoever wants to give anything must come here and give it.

At last, caste system derived Indian society. Here children's destiny was determined by his or her caste. He explains that the dalits were always kept on scythe on contemporary social system. At every level, they were insulted and tried to push back side in human society. The image of dalits was worse than animals. But "Joothan: An Untouchable's Life" is the text which inculcated to protest against the exploitation, oppressions, and

self-grievances. Because of it, laces of dalits began to ask such a questions to themselves: Why is my caste only my identity? Why is not my work? It proves that it raised the voice of dalits for education, higher living standard, and removing various malpractices from the society which were in vogue in Indian society, as well as it tried to construct an environment of equality, brotherhood, unity, and justice in Indian society.

References:

1. Valmiki, Omprakash. *Joothan: An Untouchable's Life* [translated by Prabha Mukharji]. Reprint, illustrated. Columbia: Columbia University Press, 2008.
2. Arora, Namita. *Joothan: Dalit's Life*. Review. March 2010.
3. Limbale, Sharankumar. *The Outcaste: Akkanci* (translated from Marathi by Santosh Bhoomkare). New Dehli: Oxford University Press, 2003.
4. Pawar, Urmila. *The Weave of My Life: A Dalits Woman's Memoirs*(translated by Maya Pandit). New York: Columbia University Press, 2008.

Development and Challenges in Marketing: Handloom Industry

Suman Kothari

Lecturer, Shri Bhawani Niketan Girls P.G. College, Jaipur



shodhshree@gmail.com

Handicrafts is one of the key export segments of Indian trade with significant contributions coming from Uttar Pradesh. However, the handicrafts sector in India is faced with several problems such as unorganized marketing and inadequate market information; inadequate support mechanism for product development; power interruptions and other infrastructural deficiencies; inadequacy of raw material at appropriate prices; lack of mechanism for dispersal of technology for enhancing productivity; final finishing and lack of investment for fulfilling international requirements and a general poor image of the country as a supplier of quality goods with consistency.

Indian Market

The story of Indian handicrafts dates back to one of the oldest civilizations of the world. Representing beauty, dignity, form and style, handicrafts from India are objects d'art. The sheer versatility of the various materials used to create handcrafted gift items make them truly unique. Materials range from wood, stone, metal, grass, paper mache and glass, to cane bamboo, textiles, clay, terracotta and ceramic - everything goes into the creation of a masterpiece.

The development of handicrafts in the country has been increasingly export-driven. Although the share of handicrafts and hand-knotted carpets is just about 2.5 per cent of overall exports from the country, these sectors account for very high employment potential, perhaps the highest among all product sectors, and also value-added component as much as the net foreign exchange earnings. The total handicrafts exports from India amounted to Rs.5835.97 crore in 1997-98, which increased to Rs.9270.56 crore in 2000-01, registering an annual growth rate of 14.71 per cent in rupee terms and 7.64 per cent in USD terms. In March 2014, the exports have shown an increase of US\$ 234.33 million i.e. the exports increased by 28.37 per cent over the similar month in 2013. The export figure for 2013-14 stood at US\$ 3.8 billion. Exports of Indian handicrafts have grown at a rate of around 7 per cent since 2001-02¹

According to a World Bank Report, there are 9-10 million craft workers in

India including part-timers. The crafts account for 15-20 per cent of the country's manufacturing workforce, and contribute 8 per cent of GDP in manufacturing. According to the Sub-group for Handicrafts: Tenth Plan, handicrafts GDP contributed about 25 per cent of the GDP of unregistered manufacturing sector in the country, and about 7.5 per cent of the total manufacturing sector GDP. The size of the market for handicrafts in India in 1994-95 was about \$4.6 billion, of which exports constituted about 18 per cent. The annual growth of market in real terms (1989-95) aggregated 1.6 per cent (domestic) and 6 per cent (exports).

Marketing problem in Handicraft:

Artisans face several problems in marketing. In view of shortage of financial resources and small scale of operation; advertising publicity cannot be undertaken by artisans. Hence, it is suggested that the Corporation may increase advertising and publicity for all the crafts. The Corporation should save the artisans from the exploitative clutches of middlemen by purchasing handicrafts at remunerative prices from artisans by giving payments promptly.² Thus, government of Handicrafts required to, play a vital role in solving the marketing problems faced by artisans.

Key Markets and Export Destinations:

Today, owing to the increase in the manufacture and export of handicrafts, Indian handicrafts have reached every part of the world. Some of the major export destinations for Indian handicrafts include the following:

- Indian handicrafts are exported across geographies with the top 10 markets being the US, the UK, the UAE, Germany, France, LAC, Italy, the Netherlands, Canada and Australia³
- The UAE was the third-largest importer of Indian handicrafts with imports worth approximately US\$ 348 million in 2013-14.
- Indian handicraft exports to LAC, the Netherlands, Canada and Australia garnered export shares of 3.92 per cent, 2.91 per cent, 2.29 per cent and 1.87 per cent, respectively,

in 2013-14. The products exported included art metalware, woodware, hand printed textiles and scarves, embroidered and crocheted goods, shawls, zari and zari goods, imitation jewellery and miscellaneous handicrafts such as lace, toys, etc.

- The EU countries (such as the UK, Germany, France, Italy and Netherlands), in 2013-14, accounted for approximately 28.5 per cent of total handicrafts exported from India. The US was the second highest importer from India and accounted for approximately 26 per cent of the total exports.
- In 2013-14, the export of embroidered and crocheted goods brought in the most revenue to the country of about US\$ 880.5 million followed by art metal wares of about US\$ 716.08 million.

Export Promotion Council for Handicrafts:

The Export Promotion Council for Handicrafts (EPCH) is the apex body of the Government of India and works under the administrative control of the Ministry of Textiles, Government of India. EPCH has the distinction of being considered a 'model council', a self-sustaining body that self-finances all promotional activities

Strengths:

- Rich traditions of excellence in arts and crafts.
- Development of supply-chain with skill specialisation.
- Component level manufacturing, providing it the efficiency and skill requirements.
- Achievable/acceptable social standards.
- Labour laws conforming to ILO Conventions.
- High employment potential.
- Highly export-driven, for foreign exchange accrual.

Weaknesses:

- Unorganized marketing and inadequate market information.
- Inadequate support mechanism for product development.

- Power interruptions and other infrastructural deficiencies.
- Inadequacy of raw material at appropriate prices.
- Lack of mechanism for dispersal of technology for enhancing productivity and final finishing.
- Lack of investment for fulfilling international requirements.
- A general poor image of the country as a supplier of quality goods with consistency.

Opportunities:

- A large trained, skilled manpower base.
- Existing international presence.
- Existing social interventions and structure.
- Traditional knowledge base.
- Growing export market for quality products and reduction in acceptance of mass-produced products, especially in Europe and USA.
- Growing environmental concerns.
- Growing sophistication and buying power of Indian consumers⁴.

Threats:

- Competitors gaining market share on strength of volume and price.
- Competitors edging out Indian exporters on strength of quality.
- Growing environmental concerns in the country affecting supply of raw material.
- International campaigns against child labour and social standards.
- Lack of coordination between institutions affecting production and exports.
- Increased competition among indigenous suppliers leading to price wars, high transportation costs.
- Excessive reliance on state incentives and props

Management:

The state should have a clear mandate for the handicrafts/cottage industries being looked

after by a specific nodal directorate/department. A critical review needs to be carried out by a reputed non-government agency/institution, even by a foreign expert with or without assistance from UNDP/World Bank to evaluate the efficacy of the schemes and the programmes initiated so far by the state and the Centre for the growth of handicrafts in the state, for appropriate lessons to be learnt and strategies to be formulated.

A clear need is highlighted for a proper synergy and coordination to be ensured between the Central and state government agencies and institutions involved in the development of handicrafts as much as it is imperative that the institutional mechanism is infused with the requisite ethos and elan appropriate to this vital sector which essentially deals with the community which has existed on fringes; a concerted and sustained effort to provide them support would itself be an important task. There is over 800 staff of the Development Commissioner (Handicrafts) in the central region whose strength obviously needs to be drastically pruned and their deployment appropriately reoriented⁵.

Different developmental schemes, and agencies, in the purview of the state government involved in rural development, infrastructure development, industrial development, etc. would necessitate proper coordination for the resources to be correctly targeted according to an umbrella master plan that may be put in place. The State Directorate of Industries should conduct a

survey on occupational hazards/diseases associated with certain crafts, and follow up for appropriate technique/ process/methods to overcome them.

- Welfare-oriented programmes in favour of craftsmen should be taken up by harnessing schemes in areas like Rural Development, Education and Health, etc.
- The issue of craftsmen's housing needs may be linked to rural housing programmes.

- The programmes and schemes undertaken by DC(H) are thinly spread. There are a large number of personnel. Whereas there is a need for close synergy and coordination not only between Central and state agencies and institutions but also among those within the state/Centre for focused targeting of beneficiaries and sectors in order to bring about a qualitative improvement in the infrastructure for sustainable growth of specific products⁶.

Conclusion;

Handicraft is such a product that when a buyer likes it, he is prepared to pay a price, which may be far in excess of the standard price of the product. The prime consideration is his liking of the product. Channel agents, such as middlemen, retailer or distributor try to capitalize on such possibilities and earn significant profit almost wholly at the cost of the craftsmen. Handicraft product may be categorized on the basis of price, export on domestic market, ease of maintenance, ease of storage, utility value or decorative value and modernity or traditional orientation. Besides, it is necessary for likeminded institutions to come together to provide the strategic direction and action plans to evolve systems. Procedure and norms related to design, market, technology, innovation and quality of life so that product designs, technology and marketing become integral part of the craft up gradation and repositioning process.

Craft is the standard mark of creativity and the essential differentiator for a country in the sweeping wines of globalization. Most importantly, craft has to become a fountainhead for both industrial design and communication design, for deriving the differential advantage of Indian design in the global market place.

References

1. "Handicrafts", http://planningcommission.nic.in/plans/stateplan/upsdr/vol-2/Chap_b4.pdf,
2. "Indian Handicrafts Industry & Exports ", <http://www.ibef.org/exports/handicrafts-industry-india.aspx>, July 2014
3. Waqar Ahmad Khan, Zeeshan Amir, " Study of Handicraft Marketing Strategies of Artisans in Uttar Pradesh & Its Implications, Research Journal of Management Sciences, ISSN 2319-1171, Vol. 2(2), 23-26, February (2013)
4. Florence, K., Uganda Handicrafts Export Strategy, ITC Report, WTO (2005)
5. Resource Center RCIP, Euro zone crises to hamper leather industry, http://www.fddiindia.com/publications/newsletter/2010/006-June/FDDINL_264_25.06.2010.pdf, (2010)
6. Sanyal, S., Banerjee, S. and Majumder, S., India's Leather in the World Market: Exploration of Recent Trends, Trade and Development Review 3 (1), 22 - 58 (2010)

Risk Profile

Preeti Malpani

Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur



shodhshree@gmail.com

An Individual or organization that's willingness to take risk as well as the threats to which an organization exposed. A risk profile identifies:

- The acceptable level of risk an individual or corporation is prepared to accept. A corporation's risk profile attempts to determine how the corporation's willingness to take risk (or aversion to risk) will affect its overall decision-making strategy.
- The risks and threats faced by an organization. The risk profile may include the probability of resulting negative effects, and an outline of the potential costs and level of disruption for each risk.

Risk profiling, while taking into account the risk assessment is the process of an appropriate investment strategy. Sound and well thought out design practices to avoid the risk of exposure to our customers' level of consultant is able to understand. Have an impact on the decision making process, each of which has three primary aspects of risk are:

Requires Risk - the client will be required to achieve the goals that the risks associated with the return - a financial characteristic

Potential Risks - financial feature - it can afford to take your customer means the amount of risk.

Risk Tolerance - a psychological trait - the level of risk to the customer prefer.

Assessing the risk profile of their customers to keep in mind:

- Your client's risk tolerance, risk capacity and risk necessary to assess separately.
- Customer's risk tolerance, risk capacity and risk necessary to look for anomalies compare findings.
- The risk-return tradeoffs Explain. Tolerance is a very high risk for a client, but for example a low risk potential, it is necessary to achieve your goals, explain the optimal level of risk.

Risk Assessment Required:

- The software requires a good plan should be used to determine risk
- To be able to determine risk consultant goals,

current and anticipated income and expenses, and current and prospective customers to obtain information about assets and liabilities required to be proficient.

The Optimal Portfolio:



Your Customers need to Risk Assessment are the Common Mistakes that you should Avoid:

- Instead of blindly relying on historical data, looking into the future expected returns
- Life, health care expenses, etc., insufficient allowances to longevity
- Required risk / return portfolio flows away from the risk/return, resulting in rebalancing portfolios with regular intervals not

Assess the Potential Risk

- The risk of a person's financial planning capability unexpected (negative) can withstand the impact of the events is to what extent.
- The actual returns are often lower than expected returns and therefore need to be responsible for the client's plan, given the fact that is required to determine.

Risk Tolerance Assessment

- Risk tolerance depends largely on one's emotional balance is a physiological parameter.
- Industry-standard, non-use of psychometric questionnaires or interview techniques it is

difficult to assess their client's risk tolerance are valid and reliable to establish fair will find loadwajjrs.

- Thus, the psychometric test is a clear understanding of their client's risk tolerance is important to be in order.

Include your Customer's Risk Tolerance Assessment, While Mistakes are Usually:

- Unclear, incorrectly worded questionnaire
- the lack of explanation about the methodology to assess the risks entailed in tolerance
- An interview is completely dependent on subjective judgments as
- jointly assessing risk tolerance joints instead assess individual toleranc
- a customer's investment trend and that discrepancies arise between their answers to questionnaires ignore

Inconsistencies in Risk Tolerance, Risk needs and Potential Risks:

- An undershoot - about 60% of cases, the risk is consistent with the risk tolerance, the (desired risk capacity) with an investment strategy that will achieve the client's goals.
- In simple terms, given the resources available

to the customer overly ambitious goal.

- Cases, requires risk, and 30% of the potential risks and risk tolerance are more or less in line.
- a overshoot - the remaining 10% of cases, the risk is lower than the client's goals and risk tolerance is required to achieve.
- Requires risk and risk tolerance is a mismatch of your client's problem and you can guide the final decision should be yours-but please remember not.

How important to your client's risk is higher than the risk tolerance- undershoot, where do you deal with a situation?

- Take more risk
- Invest more
- Easily goals

Undershoot in a different type of risk exposure is consistent with the need for tolerance, but the target (s) (investment strategy is not enough potential risks) that would be achieved is not enough certainty.

- Therefore, in the case of a simplified advice, the client is allowed to solve this problem, which has three options:
- During the period of investment is committed to additional funding and / or i.e., delay time goal to expand the horizons and / or
- aim to reduce
- Failing that, the client fully intended target underperforming investment can not be achieved in the time frame that would mean that you will need to accept the fact.
- How do you deal with an overshoot? By way of contrast, far less common overshoot situation presents the happy choice. Customer growth to accelerate or add goals, now spend more will have the option to visit a less volatile.

Risk Perception:

- Before concluding, it is appropriate to give some consideration to the notion of risk.

- Investors, especially new investors usually exposures, risk and return, and the range of possible outcomes, including the possibility and probability of extreme events, especially the relationship between well are not aware about.
- Investors will make decisions based on their perception of the risks involved.
- Underestimate risk in a growing market estimated to be more likely in a falling market.
- In the past, investors encouraged, be warned and may later need to.
- The consultant through education of investors manages risk and return expectations that are critically important.
- Risk profiling process of education is directly real life issues and decisions being considered to be tied, presents a unique educational opportunity.

Risk Return Trade Off:

The risk return trade-off does indicate that if the investor is willing to take high risks So accordingly it expects high returns and vice versa if the low-risk tool, which returns will be satisfied with can relate to. For example, if an investor Bank FD, who return with low risk medium to render. But as soon as he secured the funds to invest in and further increases capital gains bonds that back as bank deposits, but also the same ratio increases the risks involved a comparison of.

Thus investors investment their primary instrument as mutual funds, mutual fund as professional management, diversification, and liquidity. That doesn't mean that mutual fund investments in risk-free. This is because the money is deposited in that only funds which invest in riskier but also includes a high risk in the stock market is invested in, but can expect high returns.

Conclusion:

General, the greater the risk associated with any investment, the greater the return required. Either risk profile - whether used to describe the willingness to accept risk or an evaluation of the

risks to which an entity is exposed - can be expressed in graphical form. Risk is often measured in terms of risk probability - the likelihood that a risk will occur and risk impact - a measure of the consequences (such as project costs and schedule) if the risk occurs. Investors, for example, can evaluate the risk to which a portfolio is exposed and make buy and sell decisions based on this risk and their willingness to accept risk. It is also said that who take high risk get high return and who take low risk expected low return (In financial term)

Risk is the potential of losing something of value. Values (such as physical health, social status, emotional well being or financial wealth) can be gained or lost when taking risk resulting from a given action, activity and/or inaction, foreseen or unforeseen. Risk can also be defined as the intentional interaction with uncertainty. Uncertainty is a potential, unpredictable, immeasurable and uncontrollable outcome, risk is a consequence of action taken in spite of uncertainty.

Risk perception is the subjective judgment people make about the severity and/or probability of a risk, and may vary person to person. Any human endeavor carries some risk, but some are much riskier than others.

References:

1. Holton, Glyn A. (2004). "Defining Risk", *Financial Analysts Journal*, 60 (6), 19-25. A paper exploring the foundations of risk. (PDF file).
2. ChandraPrasanna(1990a), *Investment Game: How to Win*, Tata McGraw-Hill, New Delhi (1990), p. 230.
3. Gupta O P(1989), *Stock Market Efficiency and Price Behaviour (The Indian Experience)*, Anmol Publications, New Delhi, p.373.
4. Ysaswy N J. "Personal Investment and Tax Planning Year Book" Vision Books, New Delhi.
5. Basu Debasish & Dalal Sucheta (1993), *Scam: Who Won, Who Lost, Who Got Away*, UBS Publishers & Distributors, New Delhi, p. 294.
6. *Stock Exchange Board of India, Magazine*

Women of South India: Through the Eyes of Sangam Literature

Sindhav Hetalben

Research Scholar, Sunrise University, Alwar



shodhshree@gmail.com

The great cultural heritage of South India nourished and shaped through various dynasties that ruled during different phases of history is a unique tradition that is representative of various developments in the field of art, culture, polity and economy. Patronised by the rulers there flourished in South a distinct literary form that evolved as Sangam Literature. This body of literature provides us with in depth knowledge of South Indian society and its cultural heritage. Women are an essential part of social existence and real culture of any society can be understood only by the way it treats its women. The status of women in any given society is real indicator of its cultural values. This paper is an attempt to look into the society of Tamil land through its literature with reference to its women.

The Sangam Age in South India is a landmark in her history. The word Sangam is the Tamil form of the Sanskrit word Sangha which means a group of persons or an association. The Tamil Sangam was an academy of poets and bards who flourished in three different periods and in different places under the patronage of the Pandyan kings. It is believed that the first Sangam was attended by gods and legendary sages, and its seat was Ten Madurai. All the works of the first Sangam have perished. The seat of the second Sangam was Kapatpura, another capital of the Pandyas. It was attended by several poets and produced a large mass of literature, but only *Tolkappiyam* (the early Tamil grammar) has survived.

The seat of the third Sangam was the present Madurai. It has also produced vast literature, but only a fraction of it has survived. It is this fraction which constitutes the extant body of Sangam literature. The Age of the Sangam is the age to which the Sangam literature belonged. The Sangam literature constitutes an ocean of information on conditions of life around the beginning of the Christian era.

These beautiful manuscripts, which were etched on palm leaves, were lost for over 800 years. Although through various commentaries written many centuries after the Sangam age which contained references to the literary work people knew about Sangam literature yet they were buried amidst the

collections of temple monasteries and some family collections. They came to light only when U.V. Swamintha Iyer started the process of editing and compiling the documents in 1883 at the Thiruvavaduthurai Shaiva monastery, but for his efforts, this process of recovery would not have started then.

Among the poets and thinkers of the Sangam age Tolkappiyar, Tiruvalluvar, Ilango Adigal, Sittalai Sattanar, Nakkirar, Kapilar, Paranaar, Auvaiyar, Mangudi Marudanaar and a few others are outstanding. Sangam literature consists of the earliest Tamil works (such as the Tolkappiyam), the ten poems (Pattupattu), the eight anthologies (Ettutogai) and the eighteen minor works (Padinenkilkanakku), and the three epics.

As we go through Sangam literature we find various references pertaining to condition of women during the period. The actual position of women during Sangam period is hard to outline as we find great diversity in literary evidences. As we go through various poems and epics we find educated and revered women who is liberated enough to choose her husband, we find institution of marriage which accepted elopement as a form of valid marriage, we also find educated women who has contributed to the body of Sangam literature, but we also find evidences of social norms which make her position subservient to man in the society. It is through such major evidences that we can say that there was no equality between men and women legally as well as socially¹. Women of the Sangam age had much responsibility, though economically dependent on male counterpart as husband earned money, it was her duty to preserve it for the maintenance of her family².

There was Patriarchal society in Sangam age and women had the status not equal to men. They had to follow lots of rules, which were not meant for men. There is no evidence for punishing a man who left his wife and went to prostitute³. Kannagi was expected to lead a life of nun when her husband left her for living an immoral life and no one finds a fault in him. There are

evidences, which show that the Sangam age women were treated as worst creatures during war and as booties of war after war. For example, in Naladiyar, a Tamil king named Nannan imprisoned his enemy's wives in a war. He shaved their hair and made it as a rope to tie the elephant⁴.

During the Sangam period there was no mention of social and legal equality between men and women. Tolkappiyam mentions that the women are guarded by three virtues of Acham, Nanam & Madan. It implicitly states that a woman should have self restraint, mental peace, and uprightness, uttering only what is purposeful and essential, ability to discriminate between good and evil and have an unfathomable mind.

Women were expected to play a passive role and be a dutiful wife, discharging her duties as an earnest wife. An ideal woman was one who was always faithful and subservient to her husband. Reserve and restraint arising from modesty were considered as essential feminine virtues. A normal housewife was supposed to be chaste, dutiful and modest and reputed women were entitled to use "a flag"; Nannan's wife in Natrinai anthology got rewarded to use a flag⁵. Loyalty and virtuousness were considered as good virtues of women and they were praised. 'Kalithogai' says that loyal women could bring rain through their virtuousness⁶.

A chaste woman is often described in Sangam literature. Chastity is termed as 'Karpu' in Tamil. In Silapadikaram, Ilango Adigal emphasizes that chastity is inner taboo for woman. Love is defined as the undying affection existing between lovers. Their relationship is like body and soul and a symbol of unification and inseparable⁷. The woeful tale of Kannaki, the eternally suffering chaste wife who bore her husband's unchasteful behavior, has emerged as the example of the powers that enshrine in a chaste woman.

The Tamil classical work Silapadikaram in which Kovalan, the husband of Kannaki was living with Madhavi fascinated by the latter's

charm and grace though she was a devadasi. At one stage Kovalan regretted for his injustice to his wife and returned to his wife, Kannaki and sought her pardon. Kannaki expressed "you had been leading a life of moral turpitude condemned by men of wisdom. But I am a woman of inimitable fidelity. However when you announced your wish to go to Madurai, to eke out a living I agreed to accompany you to that city". Her love for her husband was larger than the world, loftier than skies and deeper than the sea.

Setting an ideal for all married women she a grief stricken Kannagi, clasped her "innocent Kovalan's" (ironical as Kovalan may be innocent in case of theft but for Kannagi he is a culprit as he has maintained relationship with another woman neglecting his duly wedded wife but society does not consider that as crime and so Kannagi accepts him as innocent) feet as he left his human form escorted by Gods. In her pain and anguish she cries 'Are there good men here? Are there good men who cherish their children and guard them with care? This line signifies that only children are to be cherished not wives and shows the lowly status of woman in society. She now seeks justice for a man who had made her penniless by selling off all her jewels for his mistress and from whom she faced neglect. It is her 'karpu' chastity which is now empowering Kannagi to avenge the death of her unchaste husband. Psychologically viewed it is a hysterical outburst of years of suppression and repression of desires combined with the mental anguish of bearing the humiliation of Kovalan's blatant infidelity with no recourse for justice in a world where the patriarchy sets an ideology of morals that has different codes for women.

In her anger and anguish, Kannagi resorts to self mutilating behaviour. She tore the left breast from her body and flung it on the scented streets of Madurai and thus caused flames to rise. Although she fulfils her wifely duties by defending the honour of her unchaste husband yet she is denied dignified death as she dies a few days later, weak with loss of blood outside the city walls and then is 'reunited with unchaste

Kovalan in Heaven to continue the agony of living with a philanderer'.

Despite of her high moral conduct and chaste character she is not the one who is escorted by Gods towards heaven that honour was for Kovalan, the unfaithful husband. This incidence shows that man was free to behave as he liked and all his shortcomings were accepted as right behaviour and if anyone was to be blamed it was woman. Kannagi went unescorted by Gods, unlike Kovalan. However, she has been deified in temples and has earned praise as a paragon of wifely loyalty, chastity, venerated and worshipped as 'Pathini'. Even her memories are of a faithful wife and not of a woman who had the courage to seek justice.

The loyal women were respected highly in the society. When Kovalan returned to Kannagi he was repenting profusely for his bad behaviour and for forsaking her and his parents. Words of admiration were pouring out of his heart for Kannagi's unequivocal and gracious acceptance of his apologies with grace and for her unhesitating approval of his suggestion to leave Puhar and go to Madurai. Instead of being critical, Kannagi said that thanks to his return she had now regained the opportunity of alms giving to virtuous people, of hospitality to brahmins, and of service to ascetics. She also pointed out that his parents gave her so much support during his absence that she felt no ill feeling towards anyone. These lines show the accepted behaviour and qualities of a housewife during Sangam period.

Although the society was patrilineal but we find mention of women education in Sangam literature. Many poetesses like Oveyar and Nachcheliyar were counted among notable and great poets. Although generally women looked after household only-fulfilling social responsibilities of their husbands yet professional roles were not denied to them¹¹.

In the matter of education women were given equal importance. Women were taught Iyal (literature) Isai (music) and Natakam (Drama) and men were given training for developing their

physical stamina. Women who were proficient in Iyal, Isai and Natakam were known as 'Mudukkuravai'. Ilango Adigal in his famous Tamil epic, *Chillapathikaram* characterizes Kannaki as *Mudukkuravai*⁹.

Some of the educated women counselled the kings in the battlefield. They were brave and equal to men in many other aspects. Some of the famous sangam poetesses were *Avvaiyar*, *Kakkai Pattiniyar*, *Okkur Masathiyar*, *Natchellaiyar*, *Nappasalaiyar*, *Nannagaiyar*, *Anjil Anjiyar*, *Adi Manthi*, *Paari Mahalir*, *Kopperum Pendu*, *Pon Mudiyar*, *Mudanthama Kanniyar*, *Vennikuyathiyar* and *Velliveedhiyar*¹⁰.

Sangam age mothers were brave enough to send their sons happily to the battle field. 'Purananuru' mentions the brave woman as 'Mudin Magalir' or 'Maraikudi Magalir'. Sangam mothers wanted their sons to be brave enough to die as soldiers with a great name. In *Purananuru*, *Okkur Masathiyar* a poetess of Sangam age mentioned that a woman was ready to cut off her breasts, if her son ran away from the battle field. *Tholkapiyar* says that a brave mother was happy and proud when she saw her dead son in the battle field with a wound on his chest.

The marriage was conducted after the girl's puberty¹¹. The wedding day was to be fixed on the basis of horoscope. There would be worship on the previous day of the wedding function. The bride would wear a garland of 'Sirissa leaves' and 'Arugam Pul tuber' (a kind of grass). There was no evidence for 'Thali' in the Sangam literature as well as in *Chilapathigaram*. There was no evidence of fire or appraiser to conduct the wedding ceremony¹². In Sangam age, there prevailed a custom that the bridegroom had to offer price to the bride. It was called 'Mulai Viali'¹³.

Love marriages were very common in Sangam age. The rich men gave their daughters in marriage to the winner of the Bullfight¹⁴. There were child marriages too. *Kannagi* and *Kovalan* marriage was an example for this. *Silapadikaram* says that sixteen year old *Kovalan* married

twelve year old *Kannagi*. This marriage was arranged by their parents. *Megasthenis*, author of the book 'Indica', mentioned a marriage held in the country of *Pandyas*. It was a marriage conducted to a six or seven year old girl by her parents¹⁵.

Although there was considerable social freedom enjoyed by women and they were trained in dance and music and were respected for their art & knowledge but the birth of a daughter was certainly not as happy an event as that of a boy. "Tolkappiyum" says that birth of a daughter is birth of a new sorrow¹⁶.

As wives, women were considered to be responsible for husband's rise and fall of fortune. She was supposed to serve him in every manner and to keep him happy was considered to be her main virtue. Wives were supposed to live and comply to family conditions of her husband even if he goes wrong although she may try to correct him yet to be with him in this life and others to come should be her main desire. Even if she has to live in penury and lowly conditions she should save her husband's honour by refusing help from her own father. Such statements show status of women to be poor in comparison to man.

Although she was praised as the light of the house hold and hailed as the harbinger of good luck in the life of her husband she was not placed equal. Motherhood was respected, lord *Murugan* (*Kartikeya*, son of *Shiva*) was prayed for children, we find mention of mothers who took pride in the acts of their warrior sons who had gone to the battlefield. Ladies of those families who had given their lives for the security and safety of the nation were called "Mutlin Maklir".

In the marriage rituals described in Sangam literature only mothers of son's were allowed to be part of rituals as daughter bearing women were not considered to be auspicious. This reflects the true nature of the society which although seems to be giving rights and freedom to women yet considers birth of a girl child inauspicious and does not give her mother right to be part of wedding rituals for another women.

During Sangam Age polygamy was practical although most of the people married only once and it was a male dominated relationship and usually newly married couple resided in a separate house.

Evidences of Sati are found in Sangam Literature. Public opinion was in favour of Sati and Sati's Valour and her devotion towards her husband is praised in literature. Manimekhalai says that a true wife is one who enters the burning pyre of her dead husband like one enters cold water. Although Sangam literature does not use the word "Sati" as such but the word. "Tippaycydal" means jumping into fire, but we certainly do not find references of forced "Sati" perhaps the widowhood was so unbearable that women preferred burning alive.

Neelkanth Shastri opines that there is no indication of "Sati" in Kooral and to spend a life of strict discipline and austerity was considered ideal for women from all classes and perhaps "Sati" was exception once a while. H.C. Shrinivas Murthi is of the opinion that "Sati" was a usual practice and considered to be very khonourable although not every widow performed sati. "Perunnagopedadu" the intelligent wife of Pandya ruler performed Sati for the fear of becoming widow. "Purunaaru" describes that when "Andiraan" a feudal chief died then his wives performed Sati. "Manimaikhelai" describes "Aadirai" who decided to commit Sati on hearing of her husband's death but fire does not burn her as her husband was alive and came back after sometime. Women who performed "Sati" were called "Nall lol"

We also find references to the act of embracing death by wives of slain soldiers by going to the battlefield and hugging the dead body of her husband. Many widows fasted after the death of their husbands. Many widows performed Sati for the fear of leading a hard life devoid of colour. When wife of Pandya rular "Buta Paandiyam" entered the burning pyre of her husband she said that she is not the type of woman who could lead the life of a widow and the burning fire seems to

her like a pond full of lotus in comparison to widowhood.

Widow re-marriage was not permitted and they were given only cold rice and leafy vegetables to eat. They were supposed to sleep in the backyard of house on bare floor, their glance was considered inauspicious, and they could not take part in festivities. Their heads were shaved; ornaments removed and made to look ugly so that no man would be attracted towards them. Perhaps this forced many to perform Sati.

From the poems full of male heroism we also gather instances of patriarchal violence against women which takes the form of both physical as well as socio emotional torture. The poems clearly show that these patriarchal values made the widow's life on earth a living hell as she was forced to cut her beautiful flowing tresses which were an integral part of her beauty, she was forced to remove her bangles and was inflicted every kind of indignity upon her body and soul. It does not come as a surprise that when widowed even queens preferred death to such continuous dishonour and Queen Perunkoppendu chides those around her for not allowing her to commit "Sati"

All you noble men with your perverse planning!

*I am not a woman to endure eating a ball of
boiled rice*

*Squeezed within a hand and left lying overnight
on a leaf*

*Without a touch of fine fragrant ghee pale as the
seeds*

*From a curving cucumber striped like a squirrel
and split*

*Open with a sword, or to eat food of steamed velai
leaves,*

*Nor am I one to sleep without a mat, upon a bed
of stones!"*

(PURUNARU Verse 246)

Thus we find that although women in general was treated well during Sangam age, she was educated, respected and hailed as better half and soul mate, yet the sole reason for her existence

was to please her husband and to be a dutiful and chaste wife. She was supposed to be dutiful in life and death. Widowhood was so despicable that they chose Sati over it. Fidelity among men was not an expected trait but was essential for women.

I conclude my paper with the poem from Paripadal which instructs a chaste wife that she should not expect that she can control her man's passion, and it is futile for her to wish that he will not go for a concubine even though he is married to her.

*"O innocent one, You are angry,
but ignorant of the ways of the world.*

*Can a wife spurn her husband who is besotted by
the other women he desires?*

*Can she stop him? Of course not. Do not be angry.
Do not be angry.*

*O, woman, as slender as a creeper,
can the flow of passion be stopped or contained
when it is let loose?"*

Of course not.

(Paripadal 20: 90-95)

References:

1. *Rosapoo and Kalyana Sundari, India Mahaliriyal (Tamil), Madurai, 2005, p.12*
2. *A. Swaminathan, History of Tamil Nadu, Chennai, 2004, p.71.*

3. *R.Vijaya Lakshmi, Tamilaka Makalir Totaka Kalamuthal Aram Nurrantu Varai (Tamil), Chennai, 1997, p. vii.*
4. *Duraisami Pillai, Explanatory Commentary of Nattinai, Chennai, 1968, pp.10-11*
5. *A Taṭṭiṇāmūrtti, The Nattinai four hundred, International Institute of Tamil Studies. Chennai, 2001*
6. *R. Vijaya Lakshmi, op.cit., p.107*
7. *Shantharam, op.cit., p.20*
8. *Pandey, op.cit pp 466*
9. *Shantharam, op.cit., p.19.*
10. *Rosapoo and Kalyana Sundari, op.cit., p.15.*
11. *Rosapoo and Kalyana Sundari, op.cit., p.13.*
12. *N.K. Mangala Murugesan, Social History of India, Chennai, 1975, pp.173-174*
13. *A. Devanesan, History of Tamil Nadu upto 2000 A.D. (Tamil), Marthandam, 2004, p.67*
14. *Shantharam, op.cit., p.20.*
15. *A. Devanesan, op.cit., p.67*
16. *Balasubramaniam, C, The position and Status of Women in Tamilnadu during Sangam Age, University of Madras, 1976. pp 151*

Reservation for Women : Post - 73rd Amendment

Dr. Mukesh Sharma

Lecturer, Govt. College, Kishangarh, Ajmer



shodhshree@gmail.com

The 73rd Amendment by mandating a minimum one-third reservation for women in the membership as well in the positions of Chairpersons of Panchayats at all the three levels, namely, the village, district and intermediate levels, gives representation to women. The Amendment included one year's transitional period for the slots to amend their panchayat legislation to conform to this new Amendment. All the states without exception have given only one-third reservation to women though the amendment spoke of "not less than one-third" representation for women in membership as well as in Chairpersons' positions.

The Amendment spoke of mandatory rotation of the reserved positions of Chairperson, but apparently not of the post of members. (It will be evident from the words "Shall be in the former case [Act 243D (4)], and 'may be' in the latter case [Act. 243 DG/]. All the State Legislations have however rotation of members as well as Chairperson's positions. In fact, where the states have included reservation for backward/ other backward classes which is only discretionary in the Constitutional Amendment, they have stipulated one third reservation for women among these groups also.

While the States have restricted themselves to giving only the minimum mandated one-third reservation for some in panchayat membership and the chairpersons positions, some of the States have given them reservation in the position of vice-Chairperson too. For instance, Orissa gives the post of vice Chairperson to a women if the chairperson's post is held by a man. Assam too has similar stipulations. In West Bengal, the vice-chairperson's post also has reservation for SC/ST and women on the same lines as for the posts of Chairpersons. On the other hand, Karnataka and Meghalaya made legislative changes for rotating the Chairperson's reservations in twenty months and one year respectively. Thus, one panchayat tenure of five years will have three or five Chairpersons limiting the scope of developing sufficient leadership and the possibility of showing performance legislative changes in the State Panchayat laws were followed by elections and by 1998, with the fresh elections held after these legislative changes, more than eight lakh women

had entered these newly mandated Panchayats in twenty States and four Union Territories. Such entry of women in these grassroots democratic structures has not gone unnoticed particularly because of their presence in the one-third positions of chairpersons. This specially at the village Panchayat level, gives then a role not only of chairing the meetings of the local body but also an executive authority with a major role is successful working of the panchayat. With caste, class and gender interesting and with patriarchal structures still sufficiently strong, the reactions, comments and responses have a mix of disbelief, anxiety and assumption of women's innate disability in shouldering these new responsibilities in the public space because of their illiteracy, lack of mobility, seclusion and dependency in different parts of the country.

The new elections also led to recognition of the identify of women and their presence in panchayats in such proportion as to form a critical mass. This is a refreshing contrast from the earlier take presence when even in an all women panchayat in Maharashtra, the gram Sevak talked of all persons attending the Gram Sabha though women were not attending and did not see the anomaly in women not attending the Gram Sabha in all women Panchayat. As we see in the following conversation will the Gram Sevak.¹

'Who attends the Gram Sabha?' we ask. 'Everyone', he says.

'Everyone?' 'Yes, everyone!'

'Do the men attend?' we specify. 'yes' The women?' No.No.'

Earlier studies of women representatives in panchayats before the 73rd Amendment noted the major presence of women from the dominant sections, e.g. from Maharashtra and families owning more than 20 of land in Maharashtra.² and Lingoyats and Vokkalingas in Karnataka.³ But the profile of the new women in post-73rd

Amendment panchayats should that the majority were illiterate and a large percentage were from features of in the lower socio-economic structure. They were comparatively younger than the earlier entrants and were predominantly first generation entrants to public/political life.

A study of twelve all women panchayats in Maharashtra documented male family members support for women's coming into Panchayats, but such supports were tentative and interspersed with typical anxieties expressed in such comments as "Who will make the chapatis" and "So long as you mind the kind."⁴ Now with the country's constitution making it mandatory, the make members have discovered the importance of women and encouraged them to stand for elections leading to assumptions/beliefs in their being only 'proxy' and their husbands being 'Sarpanch pati' and 'pradhan pati' (husband of the chairperson).

A number of micro studies have documented the profile and experience of these women and perceptions about their new role. A study in Haryana noted how most government officials look to the make kins of elected women to attend meetings.⁵ Reservations created a space for women's need within the structural framework of politics and has "Legitimised" women's issues, but women have to be aware of their new political power. A study of women in Panchayat in Madhya Pradesh noted positive responses of 82 percent women about their participation in the panchayat meetings, but it also observed that in most cases they were not given opportunity to speak or to express themselves.⁶ A report from rural Orissa in Ganjam district after reservation of one-third seats for women indicated a positive pattern of emerging women' leadership even in a predominately traditional setting with male dominance in the family.⁷ A study in Pudokottai and Thiruvallu districts in Tamil Nadu noted the very good attendance of women representatives in panchayat meetings.⁸

The family has been seen sometimes as controlling and dictating actions and decisions of

women representatives. But other have seen the family members as highly supportive of women's new responsibilities. These studies have also noted women's increasing awareness and confidence levels, aspirations, performance, and priorities for crucial Social and Economic needs and also the counter-forces, obstacles and handicaps faced by them. Others have noted how they found it difficult to assert due to the family pressures and social restrictions.

The negative perceptions/comments about the new women in Panchayats are reflected in pejorative appellations of 'Sarpanchapati' and 'Predhanpati' (Husband of Village Panchayat Chairpersons) working on their behalf. There have been cases of women Chairpersons being removed by successfully steering 'no confidence' motions against them. But, women have also fought back by coming back with high margins of votes over their rivals in the elections held subsequently to fill up these reserved positions within six months as mandated by constitutional amendment.

A number of myths became current about women's entry in a critical mass are their performance in the new Panchayats. A study in Madhya Pradesh, Rajasthan, Uttar Pradesh on women's experience in the new Panchayats⁹ noted that the reservation for women immediately led to four myths about their entry and likely performance. (a) their passivity and disinterest in political institutions. (b) only the well-to do, upper strata women will come through reservation (c) women's political connectivity only kins of powerful politicians will enter Panchayats to keep the seats for them, and lastly and most important, (d) women are only proxy-'namesake' members and they do not participate in the Panchayats. The field data collected in the study exploded these myths without discounting existence and behavior of some women who would fit into this patriarchally oriented framework.

The entry of women by contesting the reserved posts disproved their disinterest in politics and

the Socio-economic profile of these new women in terms of their occupation, family background and previous political experience of their families showed that a large number of women had entered from the lower socio-economic groups. Women entered the Panchayats not only in the reserved positions but also in some unreserved positions too. Their profile reflected a wider representation across social groups and also included more than 40 percent from families living below poverty line (B.P.L.) They were also predominantly (57%) first generation entrant to politics. Reservation for them across Social Categories contributed to this wider representation.

The participation in Panchayats has had an impact on their sense of self. The data on their perceptions, recognition, respect, enhanced status, confidence levels, enhanced levels of mobility and exposure their increased political aspirations and community's perceptions and evolution of their performance are seen as markers of empowering process for this long disadvantaged group. The debate on their participation levels and their leadership development continues, but it has been noted that despite all the odds stacked against them, the post-73rd Amendment Panchayats have shown emerging leadership of rural women and that they have moved ahead from the initial learning phase in the first year after the 1994 and 1995 elections when they entered Panchayats in a critical number for the first time.¹⁰

With the Second Panchayat elections held in the States which had post-Amendment elections in 1994-1995, it is seen that majority of the women continue to contest positions reserved for them. The rotation deprives even those women from contesting again who have performed well in their first five years, particularly where their candidature has to be supported by the political party formally or informally, due to resistance to women's candidature from aspiring male candidates within the political parties. The mandatory or automatic rotation of the reservation every five years of less has also not

contributing to building and supporting leadership of women and they have to work harder to contest subsequent elections. Women are also only slowly learning how to build alliances with other social collectives, with other women and with other sections to build on their initial entry in public life. This is where the civil society and the women's movement in particular have an important role to support women's emerging leadership in the rural local bodies.

Empirical Studies on Panchayati Raj and Weaker Sections:

Empirical studies were carried out in Panchayats Kalwar and Pachar of Jhotwara Panchayat Samiti in Jaipur district and Panchayats Surajpura and Noondri Maldev of Jawaja Panchayat Samiti in Ajmer district.

Weaker sections and PRI's have been empirically studied from different angles and the main findings are as under:-

- (a) Level of awareness is quite high, participation in PRI's increased due to reservation.
- (b) The weaker sections have immensely benefited from the implementation of developmental activities through PRI's.
- (c) One important finding is that by and large caste as obstruction in development is reaching in the background.
- (d) The empirical study has examined the problem of weaker-sections and Panchayati Raj from different perspective. The conclusion is that weaker sections have subtly and certainly benefited from the development programmes undertaken through PRI's. Their awareness and participation are on ascendancy.

References:

1. Bishakah Datta (ed.) 1998. *And who will make the chapatis? - A study of all women Panchayats in Maharashtra.* Calcutta, p.42
2. D'Lima Hazel. 1993, *Women in Local Govt.: A Study of Maharashtra,* Concept Publishing Company. New Delhi.
3. George Mathew, 1994. *Panchayati Raj. From Legislation to Movement,* Concept Publishing Company. New Delhi.
4. Bishakha Datta, 1998, *op.cit*
5. Tekchandani, Bharti, Kiran Jyothi, Preeti Sharma, 1998. *They call the Membership : A study of women in Haryana Panchayati Raj,* MARG, New Delhi, pp.59-60.
6. Janadhar, Samarthan and Actional D, 1996, *A Study of PRIs in Madhya Pradesh,* (Misseo)
7. Snehlata Panda, 1996, "Emerging Pattern of Leadership among Rural women in Orissa," in *Indian Journal of Public Administrations,* vol. XLII, No.4, Oct-Dec., pp. 720.728.
8. V.B. Athreya and K.S. Rajeshwari, 1998, *Women's Participation in Panchayati Raj: A case study. rom Tamil Nadu,* M.S.Swaminathan.
9. *Nirmala Such,* 1999, *From Oppression to Assertion : A study of Panchayats & women in Madhya Pradesh, Rajasthan & Uttar Pradesh* Centre for Women's Development Studies, New Delhi. (Mimeo)
10. *Ibid, Abc. See Nirmala Buch,* 2000, *Women's Experience in New Panchayats. The Emerging Leadership of Rural Women* occasional Paper No. 35, Centre for women's Development. Studies, New Delhi.



Shodh Shree

(International Refereed Journal of Multidisciplinary Research)

ISSN 2277-5587 RNI No. RAJHIN / 2011 / 40531

54A, Jawahar Nagar Colony, Tonk Road, Jaipur - 302018

Shodhshree@gmail.com

Subscription Form

Name

Designation

Name of Organization

Address

District

State

Pin

Tel. No. (R)

Mobile

e-mail

Date

(Signature)

Frequency	: Shodh Shree is Published four time in a year (Quarterly) i.e. January, April , July & October.
Mode of Payment	: Subscription fee can be deposit through online Banking.
Bank Details	: Virendra Sharma, OBC Bank, Adarsh Nagar, jaipur SB A/C No. 06722151002965, IFSC Code ORBC 0100672, MICR Code 302022005 Subscription Fees 1200 Rs (For Individual and Institution)

Membership No.

Date

(For Office Use only)

DECLARATION FORM FOR CONTRIBUTORS

I.....
hereby declared that the paper entitled'.....
.....'is unpublished original paper which is not sent any where
for publication.

This paper is prepared by me/jointly with.....
.....which is
exclusively for your journal entitle 'Shodh Shree'.

I/We will not demand any honorarium for the same expect one copy of the
Journal in which this paper will appear. Please send copy of the Journal at the
address of author whose name is appeared at first,

Copy right of matter is with Shodh Shree. I/We will not reproduce it in any other
journal of book except prior permission of the Chief Editor.

Signature

Name

Designation

Official Address

Residential Address

Phone No. Pin No.

e-mail Address

Guidelines for the Contributors

1. All research paper must be typed in Microsoft Word and use KRUTI DEV 010 font for Hindi or Times New Roman Font for English can submit by C.D. or through e-mail.
2. A separate list of references should be given at the end of the paper and not at each page. Footnotes may be given on the same page if any technical term needs some explanation.
3. Table, Model, Graph or Chart should be on separate pages and numbered serially with appropriate heading.
4. Maximum word limit of research paper up to 1500 words.
5. Special care should be taken to avoid spelling errors and grammatical mistakes in the paper otherwise it will not be accepted for publication.
6. The author(s) should certify on a separate page that the manuscript is original and it is not copyrighted.
7. The copyright is Reserved for 'Shodhshree' for All Research papers and Book Reviews, published in this journal.
8. Publication of research paper would be decided by our editorial board or subject specialist.

Book Review : For Book Review to be included in this journal only reference books and research publications are considered. One copy of each such publication must be submitted to the Editor.

Note : Shodh Shree have copyright on papers published in the journal therefore, prior permission is necessary for reproduction of paper, anywhere by author or other person. However, papers published in the journal may be freely quoted in further study. All disputes are subject to jaipur jurisdiction.

Research Paper may be sent to our e-mail: shodhshree@gmail.com
For any assistance, Please Contact Dr. Ravindra Tailor - 09413224134

To,

प्रिन्टेड मैटर

If undelivered please return to :

शोध श्री (त्रैमासिक)

54-ए, जवाहर नगर कॉलोनी
टॉक रोड, जयपुर-302018

स्वात्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान सम्पादक – वीरेन्द्र शर्मा के लिए मुद्रित व 54-ए,
जवाहर नगर कॉलोनी, टॉक रोड, जयपुर-302018 मो. 9460124401 से प्रकाशित।
मुद्रण स्थल आकृति एड्वरटाईजर्स, जयपुर